रूसी साहित्य

लेखक
डा० केसरीनारायण शुक्ल
एम्० ए०, डी० लिट्०
रीडर, लखनऊ विश्वविद्यालय
श्रीमती फिलिस मेरी केम्प

प्रकाशक
सरस्वती मंदिर
जतनबर, बनारस।

दो शब्द

प्रस्तुत पुस्तक में किसी मौलिकता का दावा नहीं किया जा रहा है। साथ ही यह अनुवाद भी नहीं है, रूसी-साहित्य के इतिहास के जिन लेखकों की प्रामाणिक पुस्तकों के आधार पर यह जानने और बताने की कोशिश की गई है कि उस जाति के लोग अपने साहित्य को किस दृष्टि से देखते हैं, इसलिए यथासम्भव अपने विचारों और दृष्टिकोण का आरोप न कर इसी बात की चेष्टा की गई है कि रूसवालों की साहित्य और संस्कृति संबंधी अपनी निजी भावना को अभिव्यक्ति दी जाए।

रूसी-साहित्य उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी के लेखकों की प्रतिभा के बल पर संसार को चमत्कृत कर विश्व-साहित्य की श्रेणी में प्रतिष्ठित हो गया, जिन सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों के बीच संघर्ष करते हुए इन लेखकों ने जन-जागरण और साहित्य-साधना का कार्य किया उनका अपने देश की स्थिति से भी बहुत साम्य है, विश्वास है कि इस पुस्तक के अवलोकन से हिन्दी के लेखकों को यहाँ की सांस्कृतिक और सामाजिक समस्याओं के सुलझाने का नया साहस, स्फूर्ति और आलोक मिलेगा। साहित्यकारों का आदर्श कितना ऊँचा, पवित्र और ठोस होता है, उनकी अनुभूति की नींव कितनी गहरी और उनकी सहानुभूति कितनी व्यापक होती है, उनकी ईमानदारी कितनी दृढ़ और उनका विश्वास कितना अचल और अगाध होता है—इन सबकी थोड़ी-बहुत झलक प्रस्तुत 'इतिहास' के पृष्ठों में अवश्य मिल जायगी। रूस के इस महान् कलाकारों की सच्चाई और साधना से हम हिंदी के लेखक बहुत कुछ सीख सकते हैं।

इस पुस्तक में आरम्भ से लेकर गोर्की के समय तक का वृत्तान्त प्रस्तुत किया गया है। १७वीं शती तक के विकास को संक्षेप में देने के कारण और १९वीं और २०वीं शताब्दी के इतिहास को कुछ अधिक विस्तार से लिखने के कारण पुस्तक थोड़ी असंतुलित हो गई है। संक्षेप का कारण यही है कि यहाँ के पाठकों के लिए रूसी मध्य युग की सामग्री दुष्प्राप्य है और विस्तार इसलिए कि भारतीय विद्यार्थी १९वीं और २०वीं शती के विश्वविश्रुत महान् कलाकारों—विशेषतया तालस्ताय और गोर्की—से थोड़ा-बहुत अवश्य परिचित हैं।

इस पुस्तक के द्वारा हिंदी में पहली बार सम्पूर्ण रूसी-साहित्य की रूपरेखा प्रस्तुत की जा रही है। ऐसी स्थिति में इसमें अनेक भूलों और दोषों का होना अस्वाभाविक न होगा, फिर भी जो सुधार और सुझाव विज्ञ पाठक और विद्वान बताएँगे, लेखक उनके लिए हृदय से कृतज्ञ होगा।

अवसर मिलते ही 'वर्तमान रूसी-साहित्य की रूपरेखा' प्रस्तुत करने का प्रयास किया जायगा।

लेखक, महापंडित श्री राहुल सांकृत्यायन का प्राक्कथन-लेखन के लिए अत्यन्त कृतज्ञ है। मेरे परम प्रिय मित्र प्रोफेसर विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने इसके प्रकाशन के सम्बन्ध में जो अथक परिश्रम किया है उसे लेखक नहीं भूल सकता, फिर भी उन्हें धन्यवाद देने की धृष्टता नहीं कर सकता। श्रीमती सरोजिनी शुक्ल ने आवश्यक अंशों की प्रतिलिपि कर पुस्तक-प्रणयन में बड़ी सहायता दी है।

'प्रेम निवास'
१ वज़ीर हसन रोड, लखनऊ।
१३ सितम्बर, १९५१

केसरीनारायण शुक्ल

प्राक्कथन

किसी देश की संस्कृति का बहुत पुराना होना केवल लाभ ही लाभ की बात नहीं है, बल्कि उससे घाटा भी काफी होता है। भारतीय संस्कृति दुनिया की एक प्राचीनतम संस्कृतियों में से है, इसमें किसी को संदेह नहीं हो सकता, किंतु इसके कारण हमारे देश में मिथ्याभिमान भी अपनी चरम सीमा तक पहुँचा और प्राचीन काल से भिन्न-भिन्न देशों के साथ जैसा हमारा संबंध था, उससे जितना लाभ उठाना चाहिए था, उतना उठा नहीं सके। इसका यह अर्थ नहीं कि हमने कभी किसी से कुछ सीखा नहीं। ज्योतिष में हमने यूनानियों से बहुत सी बातें सीखीं, जिसके लिये हमारे वराहमिहिर जैसे विद्वानों ने कृतज्ञता प्रकट की। तर्कशास्त्र में भी यूनानियों से कितनी ही बातें हमने सीखीं, यद्यपि उसके लिये कृतज्ञता प्रकट करनेवाला कोई वराहमिहिर हमारे यहाँ नहीं पैदा हुआ। लेकिन अपने सारे इतिहास को देखने पर हमें यह मानना पड़ेगा, कि मिथ्याभिमान ने हमारा पिंड कभी नहीं छोड़ा और जिसके कारण बाहरी दुनिया से संबंध जोड़नेवाले बौद्ध धर्म के भारत से उठ जाने के बाद हम पूर्णतया कूपमंडूक हो गये और वर्तमान शताब्दी की दूसरी दशाब्दी में भी काशी के पंडित बड़ी गंभीरतापूर्वक व्यवस्था देते थे कि समुद्रपार जाने से हिंदू धर्म नष्ट हो जाता है। पिछली दो शताब्दियों का युरोप के साथ भारत का संबंध चाहे मधुर नहीं रहा हो, लेकिन अंग्रेजों की दासता के रूप में हमें मजबूरन जो कुछ पढ़ना और सीखना पड़ा, उसके कारण हमारी कूप-मंडूकता काफी दूर हुई, लेकिन वह दूर होना ऐसा ही है, जैसा कि कूएँ के मेंढक का पोखरी में पहुँचकर उसे समुद्र समझ लेना। आजतक हमने दुनिया को अँग्रेजों की आँख से देखा, उन्हीं के लेखकों ने नेकनीयती या बदनीयती से जो कुछ लिखा, उसी को हमने परम सत्य समझ लिया। यह कूपमंडूकता कम हानिकारक नहीं है। जैसे राजनीति में हम ब्रिटिश साम्राज्य के अंग हैं, उसी तरह जहाँ तक दुनिया की संस्कृति, साहित्य, कला का संबंध है, हम अभी विश्व के अंग न हो केवल काले अंग्रेजों के समान हैं। अफसोस तो यह है कि आज भी अंग्रेजी को सर्वेसर्वा बनाकर हमारे नेता इस बृहत्-कूपमंडूकता को कायम रखना चाहते हैं। आवश्यकता इस बात की है कि हम अंग्रेजों का सहारा छोड़कर सीधे दुनिया के देशों से संबंध स्थापित करें और विश्व-मानवता का अभिन्न अंग बनने की कोशिश करें।

प्रोफेसर केसरीनारायण शुक्ल ने रूसी-साहित्य के इतिहास को लिखकर एक बड़ी कमी की पूर्ति की है। युरोप में जो देशभाषा, रीति-रवाज और जातीय

परंपराओं में भारत के अत्यन्त नजदीक है, वह रूस है। रूसियों ने अंग्रेजों की तरह भारत को कभी हीन दृष्टि से नहीं देखा। पिछली शताब्दी के आरंभ में जब निश्चय हो गया कि संस्कृत उनकी भाषा के अपने वंश की तथा उसमें बहुत नजदीक की भाषा है, तब से वहाँ के हर एक विश्वविद्यालय में संस्कृत की गद्दियाँ स्थापित हो गईं और वहाँ एक से एक महान् विद्वान् पैदा हुए। नौ वर्ष पहले मृत डा० श्चेरबात्स्की रूसी संस्कृतज्ञ थे, जिनके बराबर संस्कृत भाषा और भारतीय दर्शन का प्रकाण्ड विद्वान् आजतक यूरोप में नहीं पैदा हुआ और मार्मिक यह, कि रूस में हमारी संस्कृति और संस्कृत के जितने विद्वान् पैदा हुए, वह सभी भारतीय संस्कृति के भक्त और भारतीय प्रतिभा के गुणग्राहक थे। भारतीय प्रतिभा को हीन समझने का ख्याल तो उन्हें स्वप्न में भी नहीं आ सकता था। लेकिन उन्हीं रूसियों के बारे में हमारा ज्ञान १९१७ ई० के पहले शून्य-सा था। १९१७ ई० के बाद बोल्शेविक क्रांति के कारण अवश्य दुनिया के बहुत से बहरे लोगों ने भी रूस का नाम सुना, लेकिन उन्हीं गालियों के कारण, जो कि साम्यवाद के शत्रु रूस को देते रहे। उसके सुनने का आज भी हमें सबसे अधिक अवसर है, चूँकि इंगलैंड और अमेरिका गालियाँ देने में आज भी सबसे आगे बढ़े हुए हैं और अंग्रेजी मे होने के कारण उनको हम पढ़-समझ सकते हैं। हमारे बहुत से सुमनस् पुरुप भी इस गल्ती को दुहराते हैं कि अंग्रेजी ही अन्तर्राष्ट्रीय भाषा है। चूँकि उनको यात्रा और रहने का सुभीता अब तक अधिकतर अंग्रेजी-भाषा-भाषी देशों में होता था, इसलिये कूंएँ के एक छोर से दूसरे छोर तक कूदे मेंडक की तरह वह समझते थे कि मानव 'महासागर इतना' ही है। फ्रांसीसी साम्राज्यवाले समझते रहे कि हमारी भाषा अन्तर्राष्ट्रीय है, क्योंकि पिछली शताब्दी से वर्तमान शताब्दी के आरंभ तक उसे ही अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में अधिक बर्ता जाता था। लेकिन प्रथम महायुद्ध के बाद अमेरिका का प्रभाव जितना बढ़ा, उसके कारण फ्रेंच का वह स्थान नहीं रहा। लेकिन आज अगर हम विश्व के नक्शे को उठा करके देखते हैं, तो मालूम होता है कि पोलेंद और चेकोस्लोवाकिया से लेकर प्रशान्त महासागर तक युरेसिया द्वीप के बहुत बड़े भाग में और विश्व-मानव की सबसे अधिक जनता के लिये जो भाषा अन्तर्राष्ट्रीय हो चुकी है, वह अंग्रेजी या फ्रेंच नहीं, बल्कि रूसी है। यदि इंगलैंड और अमेरिका तथा उनके अधीन देशों में ज्ञान-विज्ञान के परस्पर दानादान का माध्यम अंग्रेजी है तो युरेसिया के इस बड़े भूखंड में अन्तर्जातीय दानादान का माध्यम रूसी हो रही है। इस दृष्टि से भी यदि हम देखें, तो मालूम होगा कि हमारे देश के लिये रूसी-साहित्य के जानने की कितनी आवश्यकता है।

रूसी-साहित्य के इतिहास पर प्रोफेसर केसरीनारायण ने जो प्रकाश अपनी पुस्तक में डाला है, उसे दुहराने की आवश्यकता नहीं है। रूसी जाति हमारी ही नहीं कितनी ही और जातियों के सामने भी एक तरुण जाति है। १०वीं-११वीं शताब्दी से पहले, जब कि वह ईसाई नहीं हुए थे, अपनी पूजा-पाठ, देवताओं और कितने ही रीति-रवाजों में उस समय के भारत से रूसी बहुत नजदीक थे। उन्हीं के पूर्वजों के भाईबंधु शकों ने हमारे देश में बूटधारी सूर्य की पूजा को सर्वत्र प्रचलित किया, जिस तरह ९वीं-१०वीं शताब्दी में हमारे यहाँ सूर्य की पूजा होती थी, उसी तरह वह रूस के घरों में भी होती थी। उस समय वहाँ साहित्य के लिखने का रवाज नहीं था, नहीं तो कितनी ही मौलिक साहित्य-निधियाँ हमें वहाँ से प्राप्त होतीं। ईसाई होने के बाद भी ७-८ शताब्दियों तक रूसी-साहित्य शुद्ध धार्मिक साहित्य या उसके अंग के रूप में तैयार होता रहा। हमारे यहाँ तो अब भी इस तरह के साहित्य का पलड़ा भारी है, जहाँ तक कि कविता का संबंध है। जिस समय (१७०७ ई०) औरंगजेब मरा, उसी समय तरुण पीतर रूस का जार (राजा) था। पीतर के पहले अलग-अलग रियासतों में बँटे रूस को एक राष्ट्र के रूप में संगठित करने का सफल प्रयत्न हुआ था, लेकिन अब भी रूस ज्ञान विज्ञान की सहायता से आगे बढ़े हुए पश्चिमी युरोप से जीवन के लिये आवश्यक बातें सीखना नहीं चाहता था। पीतर ने वह काम किया, इसीलिये आज स्कूलों में पढ़ाई जानेवाली इतिहास की पुस्तकों में यद्यपि आप किसी और जार का चित्र नहीं पाएँगे, लेकिन प्रथम पीतर का चित्र ही नहीं उसका नाम भी बहुत आदर के साथ लिया जाता देखेंगे। पीतर और उसके सहकारियों ने रूसियों को हृदयंगत करा दिया कि पश्चिमी युरोप के देशों से शिक्षा लिए बिना हम एक महान् राष्ट्र के तौर पर अपने को कायम नहीं रख सकते। नवीन रूसी-साहित्य के आरम्भिक युग पर यदि हम दृष्टि डालें, तो मालूम होगा कि १८वीं सदी के रूसी-साहित्य ने अपनी नींव जिन साहित्यकारों की सहायता से डाली, उसमें सबसे बड़े सहायक केवल प्राचीन ग्रीस के होमर और सोफोक्लेल तथा मध्यकालीन इताली के दान्ते ही नहीं, बल्कि शेक्सपीयर (अंग्रेज), सरवान्ते (फ्रेंच), मोलियें (फ्रेंच), वोल्तेर (फ्रेंच), गेटे (जर्मन), शिलर (जर्मन) भी हुए। इनमें से बहुत से पश्चिम के अमर साहित्यकार अब भी हमारे लिये अपरिचित हैं। रूसियों ने विश्व-साहित्य को अनुवाद करके अपनी भाषा में लाने का प्रयत्न बराबर किया, और जो आज भी चल रहा है। १८वीं सदी के अन्त तक रूसी साहित्य पर विदेशी साहित्य विशेषकर फ्रेंच साहित्य की धाक इतनी अधिक थी कि लोग हमारे आज के कितने ही शिक्षितों की तरह समझते थे कि फ्रेंच भाषा ही शिक्षा और संस्कृति की एकमात्र प्रतीक है। रूसी भाषा के कालिदास पुश्किन ने अपने

छोटे से उपन्यास 'कप्तान की कन्या' में ऐसे लोगों का बहुत अच्छा व्यंग चित्र खींचा है। लेकिन १९वीं शताब्दी के आरम्भ में ही, जब ग्रिबोयदोफ, पुश्किन, लेर्मोन्तोफ जैसे सरस्वती के वरद पुत्र पैदा हो गये, तो रूसियों के ऊपर से फ्रेंच का झूठा रोब हट गया। गोगोल, बेलिन्स्की, गोंचारोफ, उस्पेन्स्की जैसे कितने ही अमर साहित्यकारों का हमें नाम तक मालूम नहीं है। गोगोल, दोस्तोयेव्स्की को कुछ अंग्रेजी पढ़े-लिखे ही जानते होंगे। तुर्गनियेफ, ताल्सतोय, चेखोफ और गोर्की से हमारे हिन्दी-साहित्यप्रेमी कुछ अवश्य परिचित हैं, लेकिन उनकी कृतियों में से अभी बहुत कम ही का हिंदी में अनुवाद हो सका है। अभी तक जो अनुवाद होते रहे हैं, वह सीधे रूसी से हिंदी में न होकर अंग्रेजी से हुए हैं। अनुवाद में वैसे ही मूल का कितना ही प्रभाव और सौंदर्य कम हो जाता है, अनुवाद का अनुवाद होने पर तो मूल का सौंदर्य और भी विकृत हो जाता है। यह आप भली भाँति समझ सकते हैं, यदि आप किसी रूसी पुस्तक के दो ऐसे अनुवादों को देखें। यह सौभाग्य की बात है कि हमारे विश्वविद्यालयों में से कुछ ने रूसी को भी पाठ्य-विषय रखा है। आशा है रूसी के जानकार लेखक रूसी-साहित्य की अनमोल निधियों को हिंदी में लाने की कोशिश करेंगे। इस काम में हमारे मास्को के दूतावास में काम करनेवाले तरुण अधिक सहायक हो सकते थे, किंतु वहाँ गये हमारे प्रतिनिधियों में अंग्रेजी का ही बोलबाला है।

मसूरी ४–९–५१ राहुल सांकृत्यायन

विषय-सूची

रूसी लोक-साहित्य

जन-साहित्य

साहित्य का इतिहास 'जन-काव्य' से आरम्भ होता है। रूसी में इसका अर्थ है जनता का ज्ञान। इसका व्यापक अर्थ है जनता का ज्ञान, उसका अनुभव और उसकी रचना। जनता का औषधि-सम्बन्धी ज्ञान लोक-आयुर्वेदिक-साहित्य में आएगा और उसके गीत लोकगीत की कोटि में आएँगे। इस प्रकार साहित्य के इतिहास में इस शब्द का व्यवहार जनता की कविता, प्रबन्ध, कहावत और उसके मौखिक साहित्य के लिये होता है।

जनता के लिखित साहित्य से मौखिक साहित्य के अति प्राचीन होने के कारण साहित्य के इतिहास में पहला प्रकरण लोक-काव्य या लोक-साहित्य के विषय में होता है।

प्रत्येक जाति की जीवन-सम्बन्धी अपनी भावना अथवा प्रथाएँ हैं और जैसे ही उसके चेतन (या ज्ञान) जीवन का आरम्भ होता है वैसे ही वातावरण आदि के विषय में उसकी भावनाओं का विकास होने लगता है। प्राचीन मनुष्य की संसार-सम्बन्धी भावना हम लोगों से बहुत भिन्न थी। हमारे विचार ठीक ठीक ज्ञान और विज्ञान के आधार पर हैं। किन्तु मार्क्स के कथनानुसार प्राचीन मनुष्य कल्पना की सहायता से प्रकृति की शक्ति की व्याख्या करता या उसे समझाता था। प्रकृति के कुछ व्यापारों को न समझ पाने के कारण वह उनको जीवित और दैवी समझता था—जैसे सबको जन्म देनेवाली पृथ्वी, वर्षा, बिजली आदि सब जीवित हैं। गोर्की का कथन है कि आरम्भिक धार्मिक भावनाएँ तत्त्वतः कलापूर्ण और कवित्वमय हैं। अमूर्त की भावना में अभी तक अक्षम होने के कारण उसकी (प्रकृति की) अभिव्यंजना उसके जीवन और दैनिक कार्यक्रम से सम्बद्ध है—देवता, भूत-प्रेत और अलौकिक जीवों के कार्य-कलाप मनुष्य के समान ही हैं। केवल वे अधिक सुगमता और कौशल से काम कर लेते हैं और अधिक शक्ति-सम्पन्न हैं। उनके पास ऐसे हथियार हैं जो अपने आप काम करते हैं; अपने आप काटनेवाली कुल्हाड़ी, अपने आप घूमनेवाली तकली और उड़नेवाला कालीन।

प्राचीनकाल से प्रत्येक जाति में अपने अनुभव और प्रथाओं को आनेवाली पीढ़ियों को सौंपने की इच्छा रही है। इस प्रकार शब्द-व्यापार का प्रथम कलापूर्ण आरम्भ हुआ—पहेली, जंत्रमंत्र, लोकप्रिय जन-कथाओं के रूप में प्राकृतिक शक्तियों का विवरण और उनकी व्याख्या। लेखन का अभाव होने के कारण

ये मौखिक शाब्दिक व्यापार और मौखिक कृतियों के रूप में बढ़े और स्मरण की सुविधा के लिये प्रायः पद्यबद्ध हुए।

रूसी जन-साहित्य की जड़ें भी ऐसी ही गहरी थीं। इसका जन्म एक हजार वर्ष पहले हुआ जब कि स्लाव जातियाँ नदियों के किनारे निर्जन उपनिवेशों में, बड़े बूढ़ों द्वारा शासित फिरकों (Tribes) में संगठित रहती थीं। विवाह के लिये वे अब भी स्त्रियों को खरीदते या हरते थे। वे सूर्य और प्रकृति की शक्तियों की पूजा करते थे और मरे हुओं से विनती या प्रार्थना करते थे। स्लाव कृषि-प्रधान थे और उनका जीवन कृषि से सम्बद्ध था। पूर्व में ईसा की छठी शताब्दी पूर्व में नेता और सेना के आगमन के साथ राष्ट्र का उदय हुआ। नवीं शताब्दी ई. पू. में कीव के महान् राष्ट्र की स्थापना हुई। परियों की कहानियों, पहेलियों, कहावतों में लोगों ने अपने रीति-रिवाज और विचारों को प्रकट किया है। इन रस्म-रिवाज और गीतों में लोगों ने अपने नेताओं और उनके सफल कार्यों की स्मृति को सुरक्षित रक्खा। जातियों के विकास के साथ मौखिक कविता का भी विकास हुआ—नये प्रकारों, नयी शैलियों और समृद्ध भाषा का रूप निखरा।

लिखित साहित्य के आविर्भाव से जातियों के अत्यन्त प्राचीन मौखिक साहित्य का अन्त न हुआ। यह बराबर काम करनेवालों (श्रमिक) के दृष्टिकोण, भाव और विचार को प्रकट करता रहा और उनके सम्पूर्ण जीवन को प्रतिबिम्बित करता रहा। यह आज भी ऐसा ही है।

लिखित साहित्य के कर्ता और रचयिता साधारणतः पूर्णतया ज्ञात और प्रसिद्ध होते हैं, किन्तु जनता के मौखिक साहित्य के रचनाकार अज्ञात हैं। हमें नहीं मालूम कि 'इल्यामूरोम्येत्स', 'साडको' 'राजकुमार सारिविच की कहानी', 'भूरा भेड़िया' या 'हरी ओक की प्यारी डाली तुम मत इतना डोलो माँ' गीत का रचयिता कौन है। लेखक और रचयिताओं के अज्ञात होने के कारण जन-साहित्य के विज्ञान में एक समय यह भ्रमपूर्ण विचार फैला था कि जन-साहित्य की रचना व्यक्तिगत न होकर सम्पूर्ण 'जाति द्वारा' प्रणीत है। उनके रचयिता थे अवश्य। आज के समान प्राचीन काल में भी मौखिक साहित्य प्रतिभाशाली व्यक्तियों द्वारा रचा जाता था, किन्तु उसका व्यापक प्रचार होने के कारण और एक दूसरे के मुँह से कहे जाने, एक स्थान से दूसरे स्थान में प्रचलित होने और एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में चलते जाने के कारण, हजारों आदमियों ने उसका विस्तार और परिवर्धन किया और असली लेखक भुला दिया गया। लोग उसके विषय में अनभिज्ञ रहे।

जो रचनाएँ व्यापक भाववाली थीं और जिनका वस्तु-विधान गुम्फित था उनके लिये केवल बुद्धि ही नहीं, प्रत्युत कलापूर्ण प्रक्रिया और कौशल या आचार्यत्व

को आवश्यकता भी थी। अधिकांश जातियों में प्राचीन और नवीन समय में जन-साहित्य के आचार्य हुए हैं। रूसियों में—कथा गानेवाले, कहानी कहनेवाली स्त्रियाँ: और 'करुना' करनेवाली स्त्रियाँ, यूक्रेनवालों में—बाजे के साथ पेशेवर गानेवाले, काकेशशवालों में 'अशूगी' और मध्य एशियावालों में 'अकीनी' हैं। पिछले सौ साल से, जब से कि अफानासेफ, रिबनिकोफ, हिलफर्दिंद आदि मौखिक साहित्य के अध्ययन और उसके लिखने में प्रवृत्त हुए तब से जन-साहित्य के बहुत से गुणी आचार्यों का पता लगा है। इनमें र्याबीनिन, इरीना अन्द्रेव्ना फेदोसवा, अग्राफेना मतव्येवना क्रकोफ, मार्या द्मित्रेना, क्रिवो पोल्येनोफ परिवार प्रसिद्ध हैं। अपने सर्वोत्तम लेखकों के समान हमें इनके बारे में जानना चाहिए।

रूसियों का लोक-काव्य—बिलीना, कथा और मुक्तक गीत—संसार के समृद्ध काव्यों में हैं। यह उस महान् जाति की रची हुई संस्कृति का अंग है। यह काव्यकला और जनता की संगीत-कला से सम्बद्ध है। रूसी और यूक्रेनवाले अपने गीतों के वैभव और सौन्दर्य के लिये प्रसिद्ध हैं। (रूसी और यूक्रेनियन नृत्य अपनी शालीनता और शोभा के लिये प्रसिद्ध हैं)।

इसकी कलात्मकता ही इस जन-साहित्य की सबसे बड़ी महत्ता है। लोक-साहित्य के एक बहुत बड़े विशेषज्ञ और प्रशंसक ए. एम. गोर्की ने इस पक्ष पर बहुत जोर दिया है। उन्होंने अपने इस विचार का बड़े जोर से सोवियत् लेखकों की प्रथम कांग्रेस (सन् १९३४) में प्रतिपादन किया। "मैं आप लोगों का ध्यान इस ओर दिलाना चाहता हूँ कि लोक-साहित्य या श्रमिक-वर्ग (या कामगर) के मौखिक साहित्य ने कलात्मकता से पूर्ण नायकों की रचना की है।" आगे चलकर वह संसार के काव्यों से हरकलिस, प्रोमीथियस, निकोलस सेल्यानिविच बुद्धिमान् वसीलीसा, इवानुष्का आदि का उदाहरण देते हैं।

रूसी जन-साहित्य की बहुत बड़ी विशेषता उसके उच्च नैतिकता के आदर्श में है। यह न्याय और श्रेय की उच्च भावना से व्याप्त है जिसने जनता को सदा अनुप्राणित किया। यह न्यायपूर्ण जीवन के लिये लड़ने का पाठ पढ़ाता है। यह देश और उसके निवासियों के प्रति प्रेम की प्रेरणा देता है। ये चीज़ें हमें कथाओं, बिलीना और अन्य लोकप्रिय रचनाओं में मिलेंगी। इनमें उनका शिक्षाप्रद महत्त्व है।

जन-साहित्य में जनता के स्वप्न और आदर्शों की सच्ची झलक होने के कारण वी. आई. लेनिन ने इसको बड़ा ऊँचा स्थान दिया। लोक-कथा बिलीना और गीतों को पढ़ने पर एक बार उन्होंने जन-साहित्य के सम्बन्ध में यह सम्मति प्रकट की थी। "कितनी मनोरंजक सामग्री! इनके आधार पर जनता की आशाओं और आकांक्षाओं का सुन्दर अध्ययन तैयार किया जा सकता है। सचमुच बड़े

मार्क्स के अवतरण हैं। साहित्य के इतिहासकारों का ध्यान इसी ओर दिलाना चाहिए। ये जनता की सच्ची कृतियाँ हैं जो कि जनता की वर्तमान मनोवृत्ति के अध्ययन में अत्यन्त आवश्यक हैं।"

इस प्रकार जन-साहित्य में जनता की आशाओं और आकांक्षाओं अर्थात् उसके स्वप्न और आदर्श प्रतिबिम्बित हैं या व्यापक रूप में उसका जीवन और संसार-दर्शन निहित है। यह जीवन-दर्शन उसके जीवन, रस्म-रिवाज और उसके इतिहास की बहुत सी बातों को पूरा पूरा समझाता है। इसलिये ए. एम. गोर्की कहा करते थे कि श्रमिक-वर्ग (काम करनेवालों) का सच्चा इतिहास, बिना उनकी मौखिक कृतियों के नहीं जाना जा सकता।

इस प्रकार जनता के साथ अत्यन्त घनिष्ठता से विकसित होते हुए जन-साहित्य ने (अपने जनत्व के कारण) विविध प्रकार के गम्भीर जातीय नायकों की सृष्टि की। ऐसा होना स्वभाविक है, क्योंकि प्रतिभाशाली व्यक्तियों की मौखिक कृतियाँ जनता की सम्पत्ति बन जाने पर जनता के प्रयोग और उपयोग के बीच इतनी संशोधित और परिवर्तित हुईं कि वे जनता की माँग और भावना के बिल्कुल अनुरूप हो गईं।

लिखित साहित्य के लिये जन-साहित्य का बड़ा महत्त्व रहा है। गोर्की कहा करते थे कि शब्द-कला का आरम्भ लोक-साहित्य में है। इससे केवल यही न समझना चाहिए कि मौखिक साहित्य लिखित से पहले का है और लिखित साहित्य की भूमिका है, वरन् यह लिखित साहित्य को सदा जीवन-रस देता रहा है। काम करनेवालों की रचना होने के कारण जन-साहित्य यथार्थ में यथार्थवाद से पूर्ण है। साहित्य के सर्व-श्रेष्ठ और प्रशंसित ग्रन्थ वे ही हैं जो विचार और कला दोनों में जातीय काव्य के साथ रहे हैं—उदाहरणार्थ प्राचीन रूसी साहित्य के 'ईगर की सेना की कथा', 'बतेइ का युद्ध'। नवीन रूसी साहित्य में सभी सफल लेखकों ने—जैसे पुश्किन, गोगल, ल्येरमंतोफ़, कल्सोफ, नेक्रासोफ, तुर्ग्येनेव, ताल्स्ताय, सल्तिकोफ़ श्चेद्रिन, गोर्की आदि ने—जन-साहित्य का बड़ा आदर किया और वस्तु-चयन, कलात्मक विधान तथा जनभाषा का उपयोग कर उसके थोड़े बहुत ऋणी हुए।

बाल-साहित्य के लिये भी लोक-साहित्य का मूल्य अच्छी तरह जान लेना चाहिए। जन-काव्य बाल-साहित्य का पूर्वज है। बहुत-सी लोक-कथाएँ जो जनता की उस अवस्था की रचनाएँ हैं जिसको कि मार्क्स ने मनुष्य की बाल्यवास्था कहा है, संसार के सम्बन्ध में ऐसी काल्पनिक भावनाओं से पूर्ण हैं जो बालकों के अत्यन्त अनुरूप हैं। जन-साहित्य के द्वारा बच्चे लोक-कल्पना-प्रसूत काल्पनिक संसार, गीत, कहावत और जीवित अलंकृत (लाक्षणिक) जनभाषा से परिचित

में रूसी राजकुमारों का सामान्य और सम्मिलित रूप है। इतिहासों (Chronicles) में उल्लिखित रयाजन के सामन्त (Knight) द्रोब्रीनिया रस्तोफ के सामन्त अलेक्जेंडर (सोने की करधनी पहननेवाला), ब्रिलीना में रूसी जाति के महान् शक्तिशाली संरक्षक के रूप में परिवर्तित हो गए हैं।

जनता का मौखिक काव्य सार्वभौमिक था। वे ही कथाएँ और गीत सारे रूस में बनाए और गाए जाते थे। ब्रिलीना की अपने नायकों के विषय की परम्परागत कथाएँ एक दो शहरों में ही नहीं बनाई गईं वरन् बहुत से अलग अलग जिलों में। बाद में उनका रूप जातीय हो गया।

देश के उत्तरी भागों में प्राचीन ब्रिलीना आज तक सुरक्षित हैं। रूसी ब्रिलीना कई प्रकार की हैं। कुछ राष्ट्र और जाति के शत्रुओं से नायकों के युद्ध का वर्णन करती हैं। ये वीरात्मक ब्रिलीना हैं। इनकी मुख्य कथा-वस्तु (या इनकी कथावस्तु का मुख्य आधार) है जन्मभूमि की रक्षा।

दूसरे प्रकार की ब्रिलीना में युद्ध-वर्णन नहीं हैं। उसके पात्र दैनिक जीवन के वातावरण में चित्रित किए गए हैं। इन ब्रिलीना में जातीय जीवन के रहन-सहन का चित्रण है। ये सामाजिक और घरेलू जीवन की कथावस्तु का चित्रण करती हैं। ये बाद की ब्रिलीना हैं और इनको नवीन ब्रिलीना कहा गया है।

इन ब्रिलीना की अधिक आधार-वस्तु रूसी जाति के इतिहास के उस युग में बनी जो कीव युग कहा जाता है। ९वीं से १३वीं शती का यह समय रूसी राष्ट्र का प्रथम युग है। इस राष्ट्र की राजधानी कीव थी जिसका (राजधानी का) निर्देश ब्रिलीना में हुआ है।

इस (ऐतिहासिक) कारण से ऐतिहासिक कथाओं और गीतों का आविर्भाव सम्भव हुआ। रूसी नव-राष्ट्र ने विविध स्थानीय इलाकों के स्लाव कबीलों को एक में मिलाकर अपनी एकता को मजबूत बनाया। रूसी अपने पड़ोसियों से राजनीतिक और व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित करते रहे और अपनी संस्कृति बनाते रहे। राष्ट्रीय आत्मसम्मान की भावना रूसियों में बढ़ी। कीव का राष्ट्र योरुप में सबसे बड़ा और शक्तिशाली था।

किन्तु उस समय देश और जनता को बहुत से शत्रुओं से अपनी रक्षा के लिये प्रयत्न करना पड़ रहा था। स्टेपी के खानाबदोश, पेच्येनेग, पलोव्यत्स और बाद में तातार शान्ति-भंग और उपद्रव के मुख्य कारण थे। लगातार हमलों से उन लोगों ने रूस के नगर और गाँवों को वीरान कर दिया। सामान लूटा, निवासियों की हत्या की और उनको बन्दी बनाकर ले गए। उनके खिलाफ किलाबंदी और सीमा पर चौकियाँ रखना और शत्रुओं की भूमि के भीतर घुसकर आक्रमण करना भी जरूरी था। बहुत से वीर रूसी सर्दारों ने जन्मभूमि की रक्षा और शत्रुओं

का है। बिलीना का यह वर्णन किसान की मेहनत का काव्यात्मक चित्रण है। तात्पर्य यह कि किसान की मेहनत जनता के जीवन का आधार है और उसकी श्रेष्ठता राजकुमार के साथियों और स्वयं राजकुमार से बढ़कर है। इसके साथ ही बिलीना में मेहनती किसानों के सरल और प्रसन्नतापूर्ण काम तथा उनके युग-युगों के सपने भी प्रकट हैं।

रूसी वीर महाकाव्य की सबसे ज्यादा बिलीना 'इल्या मूरोम्येत्स' के नाम से सम्बद्ध हैं। वह रूसियों का लोकप्रिय सर्दार है। बिलीना में वह कभी अकेले और कभी साथियों के साथ बहादुर नायक और अधिपति के रूप में आता है। इल्या मूरोम्येत्स से सम्बद्ध बिलीना वीरकाव्य के अन्तर्गत हैं क्योंकि साधारणतः उसके और उसके साथियों के कृत्य देश के शत्रुओं के विरुद्ध युद्ध के हैं। समष्टि-रूप में बिलीना एक प्रकार से उसकी जीवनी बताती हैं और उसके चरित्र का बड़ा जोरदार चित्रण करती हैं।

'इल्या मूरोम्येत्स की चिकित्सा' को हम इस सूची के ऊपर रख सकते हैं। इस बिलीना के अनुसार इल्या किसान का लड़का है। वह तैंतीस साल तक बीमार रहा और हाथ-पैर भी न चला सकता था। दो रमते फकीर उसको अच्छा करते हैं। उसका पहला काम होता है कृषिभूमि और पशुओं की देखभाल। घर आकर वह माता-पिता से कहता है कि अब उसके अनोखे कामों और कीव के राजकुमार व्लादीमिर से मिलने का समय आ गया है। उसका पिता कहता है—

'सत्कार्यों में साथ तुम्हारे मेरा आशीर्वाद,
किन्तु बुरे कर्मों में उसका नहीं ज़रा भी योग'।

कीव जाते हुए वह प्रसिद्ध शक्तिशाली डाकू सलव्येइ रजबोइनिक को बन्दी बनाता है। यह कृत्य और राजकुमार व्लादीमिर से मिलन 'इल्या और सलव्येइ रजबोइनिक' बिलीना की कथा है।

मिकूला और वल्गा के मिलन के समान ही इल्या और व्लादीमिर के मिलन में किसान नायक की उच्चता—नैतिक और शारीरिक—बड़े जोरदार शब्दों में दिखाई गई है। इल्या की अधिकांश बिलीना में जन्मभूमि की रक्षा में उसके वीर कृत्यों का वर्णन है। रूस और प्राचीन रूस की सीमा की रक्षा में इन वीरों के साथियों का बड़ा सजीव चित्रण हुआ है।

इल्या के शत्रुओं को कल्पित और अजीब रूप दिया गया है। ऐसी अति-शयोक्ति बिलीना की विशेषता है। उदाहरण के लिये इदालिश्चिये पगानाए की ऊँचाई दो साजन, चौड़ाई एक साजन और छोटा-सा सिर हिरन के समान, और,

सांस्कृतिक केन्द्र था। यहाँ के सामाजिक और राजनीतिक जीवन का अपना अलग रूप था। नागरिक उद्योग और व्यापार के अत्यन्त विकसित होने के कारण तथा अन्तरराष्ट्रीय सम्बन्ध होने के कारण यहाँ पर स्वतन्त्रताप्रिय वर्ग का जन्म अन्य स्थानों से पहले हुआ और वह अधिक शक्ति-सम्पन्न भी हुआ। तीव्र वर्ग-संघर्ष का उफान और उबाल लगातार होता रहा।

कुछ नोवगोरद ब्रिलीना (जैसे दक्खिन की) में बहुत प्राचीन समय में बनने के चिह्न हैं और उसमें अलौकिक भावनाएँ सुरक्षित हैं। उदाहरण के लिये नोवगोरद ब्रिलीना का नायक सादकोफ समुद्र के राजा के देश में जा पहुँचता है उसकी लड़की से विवाह करता है। इन ब्रिलीना में वीर ब्रिलीना भी हैं। किन्तु, कला की दृष्टि से अत्यन्त विख्यात नोवगोरद की आख्यानात्मक ब्रिलीना है। नोवगोरद ब्रिलीना में वसीली बूसल्याइविच का व्यक्तित्व अत्यन्त काव्यपूर्ण और सजीव चित्रित हुआ है। उसके विषय में दो ब्रिलीना हैं। वे कभी अलग अलग गाई जाती हैं और कभी गानेवाले उनको मिला देते हैं। वे हैं 'वसीली बूसल्याइविच और नोवगोरद के किसान' और 'वसीली बूसल्याइविच की प्रार्थना के लिये यात्रा'।

नोवगोरद की आख्यानात्मक ब्रिलीना में अतिशयोक्ति के होने के साथ उनमें ऐतिहासिक वस्तुस्थिति, सामाजिक आधार, दैनिक जीवन के सम्बन्ध और रीति-रस्म का यथार्थ चित्रण है। इनमें सामन्त-कुटुम्ब और सामान्य जनता का संघर्ष भी देखने को मिलता है, और उनके किराये के सैनिक भी देखने को मिलते हैं जिनके द्वारा वे अत्याचार करते हैं और शहर के लड़ाई-झगड़े के दर्शन भी होते हैं। ब्रिलीना में दैनिक जीवन के रीति-रस्म जैसे 'ब्रातचीना' नगर-निवासियों का भोज, सामाजिक जीवन में स्त्रियों का स्थान, नगर में विद्रोह होने पर सड़क पर पादरियों का पवित्र मूर्त्ति के साथ जलूस आदि के सजीव चित्र मिलते हैं।

वसीली बूसल्याइविच का व्यक्तित्व जो नोवगोरद ब्रिलीना में चित्रित हुआ है अत्यन्त गम्भीर और गुम्फित है। वसीली अमीर सामन्त का पुत्र है और मनमानी करता फिरता है। लोग सबसे उसकी भर्त्सना करते हैं। उसके विपरीत लोग उसके सौतेले बाप का नाम लेते हैं जो नब्बे वर्ष तक जीवित रहा और नोवगोरद के विरुद्ध कभी न हुआ और किसानों से कभी कुवाक्य न कहा।

लेकिन बाद में कई शताब्दियों के बीच ब्रिलीना में कदाचित् मूलभावना के प्रतिकूल नायक का रूप बिल्कुल दूसरा हो जाता है। वसीली के चित्रण में जनता की सहानुभूति स्पष्ट रूप से मिलती है। वसीली उपद्रव करता फिरता है किन्तु गानेवाला उसके व्यक्तित्व और उसके व्यवहार का उत्साह से वर्णन करता है, उसकी उदारता, उसके साहस, आत्मविश्वास और संकट, जोखिम और आलोचना

समान) या इसी का नकारात्मक प्रयोग (अपन्हुति के समान) जैसे ओकवृक्ष पृथ्वी की ओर नहीं झुक रहा है किन्तु पुत्र पिता को नमस्कार करता है।

इन सामान्य विशेषताओं के साथ साथ विलीना की (उसे दूसरे से अलग करनेवाली) अपनी विशेषताएँ भी हैं। अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन इसकी सबसे बड़ी काव्य-युक्ति है। ईल्या मूरोम्येत्स का घोड़ा पेड़ों से ऊँचा (और बादलों से थोड़ा नीचा) कूदता है।

बहुत बड़ी कृति होने के कारण इसकी रचना के अपने नियम थे। इसके निम्नलिखित विभाग हैं :—

बहुत सी विलीना ज़पेव या आरम्भिक छंद से शुरू होती हैं। ये विलीना की कहानी से असम्बद्ध होती हैं। इसका उद्देश्य सुननेवालों के ध्यान को एकाग्र करना और अपनी ओर खींचना है इसके बाद ज़चीत है जिससे विलीना का वास्तविक आरम्भ शुरू होता है। यह संक्षिप्त होता है और या तो घटना के दृश्य का वर्णन करता है या नायक के बारे में कहता है। विलीना का अन्त 'इस्खॉद' या अन्तिम पंक्ति से होता है। ये अंतिम पंक्तियाँ (कभी एक छोटे टुकड़े की) कभी गम्भीर और कभी विनोदपूर्ण होती हैं।

विलीना की वर्णन शैली की अपनी विशेषता है। कथा-वस्तु का कार्य-व्यापार धीरे धीरे विकसित होता है और कथा का प्रवाह अपनी गति से (बिना किसी जल्दी के) चलता है। कथा की यह मन्दगति कई ब्योरों के समावेश, घटनाओं की (तीन बार) आवृत्ति से होती है। इन युक्तियों से कथा को शालीनता मिलती थी जो कि घटना और वस्तु की गम्भीरता के अनुकूल थी।

संक्षेप में विलीना काव्य जनता की संस्कृति की बहुत बड़ी विरासत है। इसमें जनता के ऐतिहासिक जीवन का प्रतिबिम्ब है। इसमें जनता के वीर आदर्शों को सजीव रूप मिला। इसने अत्यन्त काव्यमय और प्रभावपूर्ण कृतियों को जन्म दिया। रूसी विलीना (काव्य) संसार के प्रसिद्ध महाकाव्य का अंग है। इसने संगीत और चित्र जैसी अन्य कलाओं के लिये सामग्री दी और अब भी दे रही है।

सोवियत संघ की अन्य जातियों के महाकाव्य

रूसी विलीना रूसी, युक्रेनियन और श्वेत रूसियों के जातीय महाकाव्य हैं। इनमें से अधिकांश उस समय रचा गया था जब कि ये तीनों कीव शासन के अधीन थे और इन्होंने अलग राष्ट्र का निर्माण नहीं किया था।

दूसरी अन्य जातियों के अपने जातीय काव्य हैं जिनमें उनके परम्पराप्राप्त वीर [illegible]। इनके जातीय काव्य विलीना के समान ही महान हैं। कुछ रूसी

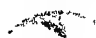
जन-कथा

प्रत्येक जाति के मौखिक साहित्य में विविध प्रकार की गद्य-कहानियाँ होती हैं; कुछ कल्पनात्मक, कुछ दैनिक जीवन के विषय में। कुछ केवल मनोरंजन के लिये होती हैं और कुछ का उद्देश्य गम्भीर होता है। जनता की ये कहानियाँ जन कथा के नाम से प्रसिद्ध हैं।

बहुत प्राचीन समय से रूस में जन-कथाएँ और कहानी कहनेवाले (जो इस कला में अत्यन्त दक्ष हैं) मिलते हैं। इन, कहानी कहनेवाले कलाकारों, को रूसी स्काज़ानकी या एकाज़नीत्सी कहते हैं। प्राचीन रूसी में उनको 'वखरी' कहते हैं। [यह शब्द वर्णन करने से बना है]

यद्यपि ये जन- कथाएँ काम करनेवालों और किसानों के बीच अधिक प्रचलित थीं फिर भी पुराने समय में ये कहानी कहनेवाले राजकुमार और सम्राट् का मनोरंजन करते थे। एल. एन. टाल्स्टाय की दादी के यहाँ कहानी कहनेवाला था और कवि पुश्किन की धाय अन्ना रदीओनेव्ना जो अत्यन्त कुशल कहानी कहनेवाली थी—कवि की कृतियों में अमर बन गई।

सबसे पुरानी जन-कथाओं में समाज की आरम्भिक अवस्थाओं के चिह्न मिलते हैं। इनमें दुनिया के बारे में अजीब और कल्पित विचार मिलते हैं। इनमें से बहुत सी प्राचीन कहानियाँ अत्यन्त भयानक और डरावनी आग उगलनेवाले साँप 'ववयागा' आदि प्रकृति की उन शक्तियों के प्रतीक हैं जो ठीक तरह से न समझे जाने के कारण भयानक और विरुद्ध जान पड़ते थे। इसके साथ ही लोग इन विरुद्ध शक्तियों पर विजय प्राप्त करने की आशा रखते थे और इस प्रकार प्रसन्न और अधिक आराम का जीवन बिताने का स्वप्न देखते थे। उनकी कल्पना ने जादू के उपाय और शस्त्र (जैसे हवा में उड़नेवाला कालीन, भविष्य का दर्पण, जीवन देनेवाला और मारनेवाला पानी) निकाले। इन कल्पना-रंजित बढ़ी-चढ़ी चीजों के होने पर भी ये कहानियाँ मनुष्य के वास्तविक जीवन और कार्यकलाप से सम्बद्ध और लिपटी हैं। मनुष्य की विजय का प्रतीकात्मक कथन इन कहानियों में मिलता है जहाँ कि ये वीर मनुष्य इन जादूभरे शस्त्रों को उनके अधिकारी दुष्ट शक्तियों से छीनकर अपने अधिकार में करते हैं। जन-कथाओं की कला का, जो समाज की आरम्भिक अवस्था से चला आता है, कभी अन्त न हुआ। इनकी कथावस्तु अधिकाधिक अनेक रूपात्मक होती गई और वर्तमान समय में आकर उसका रूप बड़ा यथार्थवादी



के लिये सिपाही कुछ व्यक्तियों (Gentlemen) को सोने की दवा देकर सुला देता है और उसे उसकी स्त्री या मौत के पास न ले जाकर चमार के कमरे में ले जाता है। सामान्यतया नायक अलौकिक शक्ति के द्वारा कोई आश्चर्यजनक कार्य नहीं कर दिखाते किन्तु अपने विरोधियों पर अपनी बुद्धि और कौशल से विजय प्राप्त करते हैं—किसान जमींदार पर, सैनिक सम्राट् पर, काम करनेवाला पुरोहित पर।

व्यंगात्मक कहानियाँ

व्यंगात्मक कहानी यथार्थवादी कहानियों का ही विशेष वर्ग है। शताब्दियों की गुलामी ने किसान के मन में जमींदार, पुरोहित और धनियों के प्रति (वर्ग) घृणा भर दी। ये ही उनके व्यंग और उपहास के पात्र हैं और गप्पी, घमंडी, बेवकूफ और किसानों के बिना सर्वथा असमर्थ चित्रित किए गए हैं। एक कहानी जिसके कई रूपान्तर हैं बताती है कि एक चतुर किसान सभी तरह से मूर्ख जमींदार को बेवकूफ बनाता है। ये कहानियाँ बड़े विनोद और किसान की वाक्पटुता और बुद्धिमानी से कही जाती हैं। घटनाएँ और पात्र वास्तविक जीवन के होते हैं और यद्यपि उनमें कल्पित और असम्भव परिस्थितियाँ भी होती हैं फिर भी उनमें कोई जादू या अलौकिकत्व नहीं होता।

रूसी जन-कथाएँ भाव और रूप (Form) दोनों दृष्टियों से अत्यन्त कलापूर्ण कोटि की हैं। कलाकार पुश्किन बड़े उत्साह से उनके सौन्दर्य की चर्चा करता है। उसके शब्दों में प्रत्येक कहानी कविता है। इन सभी प्रकार की भिन्न कहानियों की अपनी कलात्मक विशेषताएँ हैं। पुरानी जादूवाली कहानियों का रूप (Form) अत्यन्त विकसित है। इनमें 'बिलीना' में पाई जानेवाली सभी काव्ययुक्तियाँ या अलंकरण और साधन पाए जाते हैं। प्रथमतः आख्यान (Narration) की मन्दगति, कार्यकलाप धीरे धीरे विकसित होता है। घटनाओं की कभी कभी तीन बार आवृत्ति होती है। कहानी के बीच उन्हीं या रूढ़ शब्दों में बारबार दुहराने से ही वर्णन या कथन की मन्दगति सम्भव होती है। इसके साथ कहानी कहनेवाला भी अपनी ओर से बीच में कुछ कुछ इन शब्दों में टीका-टिप्पणी करता जाता है। 'थोड़ा, कम या ज्यादा फिर भी कहानी कहने में अधिक समय नहीं लगता किन्तु उसकी रचना में बहुत समय लगता है।' बिलीना के समान जन-कथाओं में अतिरंजित वर्णन होते हैं। नायक या नायिका ऐसी सुन्दरी हो सकती है कि 'न तो कहानी कह सकती है और न लेखनी लिख सकती है। जिसने भी देखा वह भी खड़ा रह गया।' या 'घोड़े की चाल से पृथ्वी काँप उठी'।

पुरानी जादूवाली कहानियों के आकार-प्रकार (Structure) या रचना का

अपना ढंग है। कहानी प्रायः एक 'छन्द-बद्ध परिचय से शुरू होती है जिसका कथा से कोई भी सम्बन्ध नहीं होता। इसका उद्देश्य केवल सुननेवालों के ध्यान को अपनी ओर करना है।' सागर के तट पर समुद्र के किनारे बुयान के द्वीप पर सोने का वृक्ष है। गानेवाली बिल्लियाँ उस पर चढ़ती है, उसकी शाखाओं के बीच गाना गाती हैं, नीचे ज़मीन पर वह कहानी कहती है। यह कहानी नहीं परिचय—'प्रिस्काज्का' है। कहानी अब शुरू होती है। यह परिचय अनिवार्य नहीं है फिर भी प्रत्येक जादूवाली कहानी का उपोद्घात होता है जिससे कि कहानी शुरू होती है। जैसे, 'किसी देश मे किसी राज्य मे एक राजा था' या इससे भी सीधा सादा कि 'एक समय एक राजा था और रानी थी', 'एक समय एक आदमी था और उसको स्त्री।' कहानी का अन्त भी इसी प्रकार होता है। परिचय के समान अन्त 'कन्सोव्का' भी कथावस्तु से असम्बद्ध होता है। इसका उद्देश्य विनोद के साथ कथा की समाप्ति और सुननेवालों के ध्यान को तोड़ना है। 'मैं वहाँ स्वय था, मैंने शहद की शराब पी। मूँछे भीग गई किन्तु मुँह मे कुछ बूँदें भी न पड़ीं।' या 'इस प्रकार वे रहने लगे और उनकी बढ़ती हुई और वे आज भी वहाँ सदैव आनन्द मे रहते हैं।'

दैनिक जीवन की कहानियाँ अपेक्षाकृत सीधी-सादी हैं। वे मन्दगति से नहीं कही जातीं और न उनमे पुनरावृत्ति होती है और न अतिरंजित वर्णन। प्रायः उनमें परिचय नहीं होता किन्तु विनोदपूर्ण 'अन्त' होता है। इन कहानियो की रूप-रेखा मे प्रायः पात्रों के संवाद रहते हैं और कभी-कभी पूरी कहानी ही संवाद के रूप मे होती है।

इन जन-कथाओं की भाषा पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए। इनकी भाषा जन-साधारण की भाषा है, सीधी सादी और अत्यन्त अभिव्यक्तिपूर्ण। 'घोड़ा दौड़ता है, पृथ्वी काँपती है, उसके (घोड़े के) कान से धुआँ और नथुनों से आग निकलती है।' इसी प्रकार जानवरों की कहानियों मे पशुओं के नाम और वर्णन है। दो-तीन शब्दों मे पशु का चरित्र व्यक्त कर दिया जाता है। आख्यानात्मक विशेषण भी अत्यन्त भावपूर्ण होते हैं। मौखिक कविता के समान जन कथाओं का भी लघुत्व-सूचन और प्रेमपूर्ण सम्बोधन की ओर विशेष झुकाव होता है।

सोवियत् संघ की सभी जातियों—यूक्रेनवाले, श्वेतरूसी, जार्जियावाले, आरमीनियन, उज़बेक, कज़ाक तातार, करेलियन, न्यैंत्सू (एस्किमो) बश्कीर आदि—की अपनी जन-कथाएँ हैं। इनकी अपनी जादूवाली और यथार्थवादी दोनों प्रकार की कहानियाँ है और इनमे उनके जातीय चरित्र की छाप है।

के लिये सिपाही कुछ व्यक्तियों (Gentlemen) को सोने की दवा देकर सुला देता है और उसे उसकी स्त्री या मौत के पास न ले जाकर चमार के कमरे में ले जाता है। सामान्यतया नायक अलौकिक शक्ति के द्वारा कोई आश्चर्यजनक कार्य नहीं कर दिखाते किन्तु अपने विरोधियों पर अपनी बुद्धि और कौशल से विजय प्राप्त करते हैं—किसान जमींदार पर, सैनिक सम्राट् पर, काम करनेवाला पुरोहित पर।

व्यंगात्मक कहानियाँ

व्यंगात्मक कहानी यथार्थवादी कहानियों का ही विशेष वर्ग है। शताब्दियों की गुलामी ने किसान के मन में जमींदार, पुरोहित और धनियों के प्रति (वर्ग) घृणा भर दी। ये ही उनके व्यंग और उपहास के पात्र हैं और गप्पी, घमंडी, बेवकूफ और किसानों के बिना सर्वथा असमर्थ चित्रित किए गए हैं। एक कहानी जिसके कई रूपान्तर हैं बताती है कि एक चतुर किसान सभी तरह से मूर्ख जमींदार को बेवकूफ बनाता है। ये कहानियाँ बड़े विनोद और किसान की वाक्पटुता और बुद्धिमानी से कही जाती हैं। घटनाएँ और पात्र वास्तविक जीवन के होते हैं और यद्यपि उनमें कल्पित और असम्भव परिस्थितियाँ भी होती हैं फिर भी उनमें कोई जादू या अलौकिकत्व नहीं होता।

रूसी जन-कथाएँ भाव और रूप (Form) दोनों दृष्टियों से अत्यन्त कलापूर्ण कोटि की हैं। कलाकार पुश्किन बड़े उत्साह से उनके सौन्दर्य की चर्चा करता है। उसके शब्दों में प्रत्येक कहानी कविता है। इन सभी प्रकार की भिन्न कहानियों की अपनी कलात्मक विशेषताएँ हैं। पुरानी जादूवाली कहानियों का रूप (Form) अत्यन्त विकसित है। इनमें 'बिलीना' में पाई जानेवाली सभी काव्ययुक्तियाँ या अलंकरण और साधन पाए जाते हैं। प्रथमतः आख्यान (Narration) की मन्दगति, कार्यकलाप धीरे धीरे विकसित होता है। घटनाओं की कभी कभी तीन बार आवृत्ति होती है। कहानी के बीच उन्हीं या रूढ़ शब्दों में बारबार दुहराने से ही वर्णन या कथन की मन्दगति सम्भव होती है। इसके साथ कहानी कहनेवाला भी अपनी ओर से बीच में कुछ कुछ इन शब्दों में टीका-टिप्पणी करता जाता है। 'थोड़ा, कम या ज्यादा फिर भी कहानी कहने में अधिक समय नहीं लगता किन्तु उसकी रचना में बहुत समय लगता है।' बिलीना के समान जन-कथाओं में अतिरंजित वर्णन होते हैं। नायक या नायिका ऐसी सुन्दरी हो सकती है कि 'न तो कहानी कह सकती है और न लेखनी लिख सकती है। जिसने भी देखा वह वहीं खड़ा रह गया।' या 'घोड़े की चाल से पृथ्वी काँप उठी'।

पुरानी जादूवाली कहानियों के आकार-प्रकार (Structure) या रचना का

अपना ढंग है। कहानी प्रायः एक 'छन्द-बद्ध परिचय से शुरू होती है जिसका कथा से कोई भी सम्बन्ध नहीं होता। इसका उद्देश्य केवल सुननेवालों के ध्यान को अपनी ओर करना है।' सागर के तट पर समुद्र के किनारे बुयान के द्वीप पर सोने का वृक्ष है। गानेवाली बिल्लियाँ उस पर चढ़ती हैं, उसकी शाखाओं के बीच गाना गाती हैं, नीचे ज़मीन पर वह कहानी कहती है। यह कहानी नहीं परिचय—'प्रिस्काज्का' है। कहानी अब शुरू होती है। यह परिचय अनिवार्य नहीं है फिर भी प्रत्येक जादूवाली कहानी का उपोद्घात होता है जिससे कि कहानी शुरू होती है। जैसे, 'किसी देश में किसी राज्य में एक राजा था' या इससे भी सीधा सादा कि 'एक समय एक राजा था और रानी थी', 'एक समय एक आदमी था और उसकी स्त्री।' कहानी का अन्त भी इसी प्रकार होता है। परिचय के समान अन्त 'कन्त्सोव्का' भी कथावस्तु से असम्बद्ध होता है। इसका उद्देश्य विनोद के साथ कथा की समाप्ति और सुननेवालों के ध्यान को तोड़ना है। 'मैं वहाँ स्वयं था, मैंने शहद की शराब पी। मूँछें भीग गईं किन्तु मुँह में कुछ बूँदें भी न पड़ीं।' या 'इस प्रकार वे रहने लगे और उनकी बढ़ती हुई और वे आज भी वहाँ सदैव आनन्द से रहते हैं।'

दैनिक जीवन की कहानियाँ अपेक्षाकृत सीधी-सादी हैं। वे मन्दगति से नहीं कही जातीं और न उनमें पुनरावृत्ति होती है और न अतिरंजित वर्णन। प्रायः उनमें परिचय नहीं होता किन्तु विनोदपूर्ण 'अन्त' होता है। इन कहानियों की रूप-रेखा में प्रायः पात्रों के संवाद रहते हैं और कभी-कभी पूरी कहानी ही संवाद के रूप में होती है।

इन जन-कथाओं की भाषा पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए। इनकी भाषा जन-साधारण की भाषा है, सीधी सादी और अत्यन्त अभिव्यक्तिपूर्ण। 'घोड़ा दौड़ता है, पृथ्वी काँपती है, उसके (घोड़े के) कान से धुआँ और नथुनों से आग निकलती है।' इसी प्रकार जानवरों की कहानियों में पशुओं के नाम और वर्णन हैं। दो-तीन शब्दों में पशु का चरित्र व्यक्त कर दिया जाता है। आख्यानात्मक विशेषण भी अत्यन्त भावपूर्ण होते हैं। मौखिक कविता के समान जन कथाओं का भी लघुत्व-सूचन और प्रेमपूर्ण सम्बोधन की ओर विशेष झुकाव होता है।

सोवियत् संघ की सभी जातियों—यूक्रेनवाले, श्वेतरूसी, जार्जियावाले, आरमीनियन, उजबेक, कज़ाक तातार, करेलियन, न्येंत्सू (एस्किमो) वश्कीर आदि—की अपनी जन-कथाएँ हैं। इनकी अपनी जादूवाली और यथार्थवादी दोनों प्रकार की कहानियाँ हैं और इनमें उनके जातीय चरित्र की छाप है।

इनके भावों की गम्भीरता, कल्पना का वैभव और कलात्मक विशेपता ने बहुत से लेखकों का ध्यान अपनी ओर खींचा। संसार के साहित्य में ऐसे अनेक उदाहरण मिलेंगे जहाँ प्राचीन और नवीन जन-कथाओं का लेखकों ने उपयोग किया है। रूसी साहित्य में जुकोव्स्की, गोगल, ल्येस्कोव, ल्यो ताल्स्ताय, साल्तिकोर च्येद्रिन, गोर्की और अन्य लेखकों ने जन-कथाओं की कथा वस्तु का काफी उपयोग किया है।

विश्व साहित्य और रूसी में जन-कथाओं के साहित्यिक रूपान्तर भी हुए हैं। 'पेनान्ट' की या ऐन्डर्सन की कहानी, पुश्किन के 'त्सार सुल्तान' मछुआ और उसकी स्त्री मे जन-कथाओं का अपूर्व साहित्यिक रूपान्तर मिलता है। एर्शोव की प्रसिद्ध कविता 'कुबड़ा घोड़ा' में जनकथाओं का स्वच्छन्द रूपान्तर देखने को मिलता है।

लोक-गीत

मौखिक रचनाओं में गीत सबसे अधिक व्यापक है। ये सबसे सरल और सबकी पहुँच के अंदर हैं। लम्बी और जटिल 'बिलीना' केवल कुशल कथा सुनानेवालों से ही कही जा सकती है। जन-कथाएँ अधिक व्यापक थीं फिर भी ये सबकी सम्पत्ति न थीं। लेकिन गीत सभी गाते थे और आज भी गाते हैं।

रूसियों के जन-गीतों की संख्या बहुत बड़ी है। दो सौ के लगभग 'बिलीना' हैं, एक हजार जन-कथाएँ हैं। किन्तु दस हजार से अधिक गीत मुद्रित संस्करणों में प्राप्त हैं। और यह संख्या रूसियों की गीत-सम्पत्ति का छोटा सा अंश है। गोर्की लिखता है कि 'मुझे कोई ऐसी जाति बताओ जिसके पास अधिक गीत हैं। किसान पाइन के लट्ठे गीत गाते हुए काटते हैं। ईंटें एक हाथ से दूसरे हाथ में गीत के साथ फेंकी जाती हैं जो (गीत) मानों साँचे के साथ ही निकलते हैं। बूढ़ी स्त्रियों के गीतों के बीच ही रूसी की शैशव-क्रीड़ा, विवाह और दफनाना होता है।'

जीवन की प्रत्येक अवस्था के उपयुक्त—काम, पारिवारिक जीवन, कर्मकांड, सामाजिक सम्बन्ध, ऐतिहासिक घटनाएँ—और उनको प्रतिबिम्बित करनेवाले गीत पाये जाते हैं। एक विद्वान् ने ठीक ही कहा है कि गीत जनता की आत्मा की सच्ची अभिव्यंजना है, और दुख-सुख के बीच उसका साथी है। जनता ने स्वयं गीत के प्रति अपनी भावना या दृष्टिकोण को अपना कहावतों में 'सच्चा और गम्भीर' कहकर बताया है, जैसे 'गीत सत्य' 'तुम गीत के शब्दों को नहीं हटा सकते आदि मूल या भावना के अनुसार गीत इन वर्गों में विभक्त किये जा सकते हैं—काम के गीत, कर्मकांड या संस्कार के गीत, एतिहासिक गीत, सामाजिक रीति-रिवाज़ के गीत, घरेलू रीतिरिवाज़ के गीत, व्यक्तिगत मुक्तक गीत और 'चस्तूस्की'। ये समय-समय पर बदलते रहते हैं। आरम्भ से लोग गीत बनाते गये हैं और अब भी बना रहे हैं।

काम के गीत

गीत के बीच इनका जन्म अत्यन्त प्राचीन है। ये या तो काम के बीच गाए जाते हैं या काम के ढंग से इनका घनिष्ठ सम्बन्ध है। इनका उद्देश्य लय पैदा कर (और इस प्रकार) साथ काम करनेवालों के यत्न को एकता प्रदान कर उनके परिश्रम को हलका करना था। इसलिए शब्दार्थ या वास्तविक शब्द- योजना की

लोक-गीत

लौकिक रचनाओं में गीत सबसे अधिक व्यापक हैं। वे सबसे सरल और सबकी पहुँच के अंदर हैं। लम्बी और जटिल 'बिलीना' केवल कुशल कथा सुनानेवालों से ही कही जा सकती हैं। जन कथाएँ अधिक व्यापक थीं फिर भी वे सबकी सम्पत्ति न थीं। लेकिन गीत सभी गाते थे और आज भी गाते हैं।

रूसियों के जन-गीतों की संख्या बहुत बड़ी है। दो सौ के लगभग 'बिलीना' हैं, एक हजार जन-कथाएँ हैं। किन्तु दस हजार से अधिक गीत मुद्रित संग्रहों में प्राप्त हैं। और यह संख्या रूसियों की गीत-सम्पत्ति का छोटा सा अंश है। गोर्की लिखता है कि 'मुझे कोई ऐसी जाति बताओ जिसके पास अधिक गीत हैं। किसान पाहन के लट्ठे गीत गाते हुए काटते हैं। ईंटें एक हाथ से दूसरे हाथ में गीत के साथ फेंकी जाती हैं जो (गीत) मानों साँचे के साथ ही निकलते हैं। रूसी स्त्रियों के गीतों के बीच ही स्त्री की शैशव-क्रीड़ा, विवाह और रुदन होता है।'

जीवन की प्रत्येक अवस्था के उपयुक्त—काम, पारिवारिक जीवन, कर्मकांड, सामाजिक सम्बन्ध, ऐतिहासिक घटनाएँ—और उनको प्रतिबिम्बित करनेवाले गीत पाये जाते हैं। एक विद्वान् ने ठीक ही कहा है कि गीत जनता की आत्मा की सच्ची अभिव्यंजना है, और युग-युग के बीच उसका साथी है। जनता ने स्वयं गीत के प्रति अपनी भावना या दृष्टिकोण को अपना कहावतों में 'सच्चा और गम्भीर' कहकर बताया है, जैसे 'गीत सत्य' 'तुम गीत के शब्दों को नहीं हटा सकते आदि मूल या भावना के अनुसार गीत इन वर्गों में विभक्त किये जा सकते हैं—काम के गीत, कर्मकांड या संस्कार के गीत, ऐतिहासिक गीत, सामाजिक रीति-रिवाज़ के गीत, घरेलू रीति-रिवाज़ के गीत, व्यक्तिगत मुक्तक गीत और 'चस्तूश्की'। ये समय-समय पर बदलते रहते हैं। आरम्भ से लोग गीत बनाते गये हैं और अब भी बना रहे हैं।

काम के गीत

गीत के बीच इनका जन्म अत्यन्त प्राचीन है। ये या तो काम के बीच गाए जाते हैं या काम के ढंग से इनका घनिष्ठ सम्बन्ध है। इनका उद्देश्य लय पैदा कर (और इस प्रकार) साथ काम करनेवालों के यत्न को एकता प्रदान कर उनके परिश्रम को हलका करना था। इसलिए शब्दार्थ या वास्तविक शब्द- योजना की

अपेक्षा लय मुख्य थी। गीत बार-बार दुहराये जानेवाले एक वाक्यांश का हो हो सकता था। काम के असली प्राचीन गीत नहीं बचे, किन्तु हम लोगों के समय के वैसे ही गीत मिलते हैं। उदाहरण के लिये जब लोग भारी मेहनत के काम में लगे होते हैं (जैसे पेड़ काटना, पानी से लट्ठे खींचना) तो संक्षिप्त वाक्यांश वाला वही गीत बराबर घंटों कहा जाता है, जैसे—

एक बार फिर खींचो.
एक दो मिलकर खींचो, एक दो जम कर खींचो······

संयुक्त गान के आखिरी शब्द के साथ काम करनेवाले एक साथ मेहनत करते हैं।

कर्मकांड के गीत

ये भी प्राचीन गीतों के एक प्रकार हैं और (जातीय) संस्कारों से सम्बद्ध हैं। उदाहरणतः वसंतऋतु में ६ मार्च को लोग छोटी छोटी आटे की चिड़ियों को छड़ी पर बैठा कर खेतों में ले जाते थे और कुछ इस तरह गाते हुए खेतों मे छोड़ देते थे—

"ओ छोटी गौरैया, ओ प्यारी गौरैया
खेतों में उड़ जाओ, सुख हमको लाओ।
सबसे पहले गोरू को, और दूसरे भेड़ों को, और तीसरे लोगों को"।

इन गीतों का जन्म उस समय हुआ जब कि लोगों का विश्वास था कि प्रकृति शब्द द्वारा (अर्थात् जादू से) प्रभावित की जा सकती है। कृषक होने के कारण जनता जादू के कृत्य और गान द्वारा वसंत का शीघ्रागम, सूर्य की गर्मी का बढ़ना, और फसल चाहती थी। ये कृत्य और गान विशेष दिवस और उत्सवों से संबंधित थे।

समय के बीच ये गीतऔर कृत्य अपना जादू का मूल महत्व खो बैठे, यद्यपि जनता के बीच ये गीत बचे रहे, और कुछ अभी तक वर्तमान हैं यद्यपि उनका असली मतलब बहुत पहले से भुला दिया गया। 'करुना' (या स्यापा) एक विशेष प्रकार के गीत जो प्राचीन समय से चले आते हैं और जो विवाह के समय कन्या, पति के दफनाने के समय स्त्री, और बाद में रँगरूटों के सेना में जाने के समय सिपाही की माँ को सुनाये जाते थे। इनमें हमेशा शोक की अभिव्यंजना होती थी। इन गीतों मे वधू अपने निर्द्वंद्व-बचपन के अंत पर, पत्नी अपने पति की मृत्यु पर और माँ अपने पुत्र (के दूर होने) पर शोक प्रकट करती है। इसी से रूसी मे इनका दूसरा नाम 'प्लची' (रोदन) है जो ऐसे धातु से बना है जिसका अर्थ है रोन इनमे से अधिकांश की कोई निश्चित या नियत शब्द-योजना नहीं है और वे अवसरों पर उसी समय बना लिये जाते थे।

ऐतिहासिक गीत

सबसे प्रथम ऐतिहासिक गीत 'त्रिलीना' हैं। बाद में ऐतिहासिक घटनाओं पर छोटे गीत लिखे गए, जैसे विकट ईवान के समय कज़ान पर विजय पोल्तावा की लड़ाई, सन् १२१२ का युद्ध आदि। विकट ईवान पीटर महान्, सेनापति सुवोरोव और कुतुत्सोव जैसे ऐतिहासिक व्यक्तियों पर गीत बने और विशेषतया जन-विद्रोह के स्तेपान तिमोफेस्विच राज़िन और येमेल्पान ईवानोविच पुगाचोव जैसे नेताओं के विषय में गीत रचे गए। इन लोक गीतों में ऐतिहासिक तथ्यों का जो ज्ञान दिखाई पड़ता है वह अपूर्व है। जब कि कई इतिहासकारों ने (क्रांति के पूर्व के) स्तेपान राज़िन के आन्दोलनों को विद्रोह या डाका बतलाया, जनता ने राज़िन और पुगाचोव दोनों को जनता के लिये लड़नेवाला और भला माना और गीत में कहा कि 'चोर नहीं हैं और न डाकू, हम राज़िन के कर्मठ अनुचर।'

सामाजिक जीवन के गीत

सबसे अधिक संख्या उन गीतों की है जिनका वस्तु-विषय सामाजिक पारिवारिक या व्यक्तिगत जीवन है और जिनमें व्यक्तिगत भावना और अनुभूतियों की अभिव्यक्ति हुई है। इनको मुक्तक गीत भी कहा जा सकता है। प्राचीन समय से लेकर सन् १६१७ की क्रांति तक जनता का जीवन अत्यन्त कठिन था और कई सदियों तक उसने जागीरदारों का गुलाम या दास बनकर जीवन निर्वाह किया। जमींदार उनसे केवल काम ही न लेता था प्रत्युत उनके साथ जैसा चाहता कर सकता था। उनको उनके गाँव से दूर भेज सकता था। दूसरे जमींदार के हाथ बेच सकता था। उनको घरेलू टहलुआ बना सकता था। फौज में भेज सकता था और उनके लड़के लड़कियों की मनमानी शादी कर सकता था।

बहुत से काव्यत्व से पूर्ण गीत इस दास-प्रथा से सम्बद्ध हैं और उनमें से अधिक करुणा से परिपूर्ण हैं। इनमें से एक गीत में दास-कन्या जो अपने परिवार से बिछुड़ गई है बुलबुल से (जो स्वच्छंद और स्वतंत्र है) अपने जन्म स्थान को उड़ जाने और पिता से प्रणाम कहने की प्रार्थना करती है। दूसरे में वह अपनी माँ के पास संदेशा ले जाने और अपनी मुक्ति की विनय के लिये प्रार्थना करती है।

उन दिनों फौज की नौकरी अत्यन्त कठिन थी और पचीस वर्ष तक करनी पड़ती थी। नवयुवक और विवाहित परिवार से अलग हो जाते थे और फिर देखने को न मिलते थे। फौज में उनके साथ अत्यन्त क्रूर बर्ताव होता था और शारीरिक दंड आम था। अतः सैनिक जीवन, रंगरूट और सैनिकों के बारे में लोक-गीत

स्वाभाविक रूप से अधिक हैं। अधिकांश गीत अत्यन्त करुण हैं और वे विदेश में मरणासन्न लेटे हुए सिपाही का वर्णन करते हैं।

उस बलिष्ठ का घास बिछावन,
झाड़ी का उपधान, काली रात बनी है ओढ़ना······

अन्यविषय गृह-विहीन का जीवन और उसकी कठिनाई हैं। कभी कभी इन किसानों का जीवन इतना असह्य हो जाता था कि मर्मराते जंगल या चौड़े स्टेप में शरण लेने या डाकू बनने के अतिरिक्त और कुछ न रह जाता था। बहुत से 'डाकू के गीत' में डाकू जनता का शत्रु न चित्रित होकर राजवंश से घृणा करने-वाला और सम्राट् के अधिकारियों का विरोधी दिखाया गया है। साहसी होते हुए भी इन 'स्वच्छंद मनुष्यों' के लिये कोई शरण नहीं है। एक प्रसिद्ध डाकू गीत इस प्रकार शुरू होता है।

"हरे भरे प्रिय ओक वृक्ष मत गूँजे स्वर तेरा
गहन विचारों में उलझा मन ध्यानमग्न है मेरा
कहीं न टूटे क्रम भावों का ध्यानमग्न मन मेरा।"

गायक को अत्यन्त महत्वपूर्ण बात सोचनी है। दूसरे दिन उसे सम्राट् के सामने उपस्थित होना है और उससे उसके साथियों के बारे में पूछा जायगा, वह अपना जवाब तय्यार करता है—

"चार हमारे अनुपम संगी; प्रथम अँधेरी रात
तेज छुरे की धारा दूसरा, फिर घोड़े की बात
चौथा साथी धनुष हमारा·················

गीत का अन्त अपने ही ऊपर किए गए व्यंग से होता है। सम्राट् उसके कुशल चोर होने के कारण प्रश्नों का चतुरतापूर्ण उत्तर देने के कारण उसे फाँसी का हुक्म देता है।

पारिवारिक जीवन के गीत

सामाजिक जीवन के गीत ज्यादा हैं तो पारिवारिक जीवन के गीत और भी अधिक हैं। डाकू, रंगरूट सिपाही आदि के सामाजिक गीत 'पुरुष-गीत' कहे जाते हैं। परन्तु गीतों के विषय 'स्त्री-गीत' हैं। किसानों की दासता और उनकी आर्थिक दशा ने स्त्रियों के गीतों के विकास में बढ़ावा दिया। खेतों में काम, काटना (या निराना), फसल काटना, घर का काम और विशेपतया ऐसे अवसर जब कि वे सम्मिलित रूप में कातने, नाचने या गाने को इकट्ठा होती थीं, स्त्रियों और लड़कियों के गीतों में संबद्ध हैं। विवाह ऐसे अवसरों की तो चर्चा ही क्या।

स्वाभाविक रूप से अधिक हैं। अधिकांश गीत अत्यन्त करुण हैं और वे विदेश में मरणासन्न लेटे हुए सिपाही का वर्णन करते हैं।

उस बलिष्ठ का घास बिछावन,
झाड़ी का उपधान, काली रात बनी है ओढ़ना······

अन्यविषय गृह-विहीन का जीवन और उसकी कठिनाई हैं। कभी कभी इन किसानों का जीवन इतना असह्य हो जाता था कि मर्मराते जंगल या चौड़े स्टेप में शरण लेने या डाकू बनने के अतिरिक्त और कुछ न रह जाता था। बहुत से 'डाकू के गीत' में डाकू जनता का शत्रु न चित्रित होकर राजवंश से घृणा करने-वाला और सम्राट् के अधिकारियों का विरोधी दिखाया गया है। साहसी होते हुए भी इन 'स्वच्छंद मनुष्यों' के लिये कोई शरण नहीं है। एक प्रसिद्ध डाकू गीत इस प्रकार शुरू होता है।

"हरे भरे प्रिय ओक वृक्ष मत गूँजे स्वर तेरा
गहन विचारों में उलझा मन ध्यानमग्न है मेरा
कहीं न टूटे क्रम भावों का ध्यानमग्न मन मेरा।"

गायक को अत्यन्त महत्वपूर्ण बात सोचनी है। दूसरे दिन उसे सम्राट् के सामने उपस्थित होना है और उससे उसके साथियों के बारे में पूछा जायगा, वह अपना जवाब तय्यार करता है—

"चार हमारे अनुपम संगी; प्रथम अँधेरी रात
तेज छुरे की धारा दूसरा, फिर घोड़े की बात
चौथा साथी धनुप हमारा·················

गीत का अन्त अपने ही ऊपर किए गए व्यंग से होता है। सम्राट् उसके कुशल चोर होने के कारण प्रश्नों का चतुरतापूर्ण उत्तर देने के कारण उसे फाँसी का हुक्म देता है।

पारिवारिक जीवन के गीत

सामाजिक जीवन के गीत ज्यादा हैं तो पारिवारिक जीवन के गीत और भी अधिक हैं। डाकू, रंगरूट सिपाही आदि के सामाजिक गीत 'पुरुष-गीत' कहे जाते हैं। घरेलू गीतों के विषय 'स्त्री-गीत' हैं। किसानों की दासता और उनकी आर्थिक दशा ने स्त्रियों के गीतों के विकास में बढ़ावा दिया। खेतों में काम, काटना (या निराना), फसल काटना, घर का काम और विशेषतया ऐसे अवसर जब कि वे सम्मिलित रूप से कातने, नाचने या गाने को इकट्ठा होती थीं, स्त्रियों और लड़कियों के गीतों से संबद्ध हैं। विवाह ऐसे अवसरों की तो चर्चा ही क्या।

और कोयल विधवा या विरहिणी का प्रतीक है। बर्र द्वेष का, पेड़ों का सरसराहट शोक का, पिघलता हुआ बर्फ विफल प्रेम का प्रतीक है। इन प्रतीकों की चाहे व्याख्या की जाय या नहीं फिर भी लोग इनके काव्यपूर्ण अर्थ को समझ जाते हैं।

गाये जाने के उद्देश्य से रचे जाने के कारण इन गीतों का पद्य-विधान (या छंद) कभी-कभी पाठ्य वाक्यों से भिन्न होता है। उदाहरण के लिए तुक आवश्यक नहीं है और पुराने गीतों का अधिकांश तुकविहीन है। शब्द या पंक्तियाँ दोहराई जा सकती हैं। अनावश्यक शब्द छोड़ दिये जा सकते हैं और स्वराघात एक शब्द से दूसरे पर बदला जा सकता है। प्रत्येक गीत की अपनी लय है और वह दूसरी लय में नहीं गाया जा सकता।

उन्नसवीं शती के लोक-गीत

प्राचीन लोक-गीत के रचयिता जनता के बीच से थे और उनके नाम अज्ञात हैं। उन्नीसवीं शती में बहुत से लेखकों के गीत लोकप्रिय हो गए। इस शती में बहुत से गीत लिखे गये और पुश्किन, लेरमेन्तोफ, निकीतिन, निक्रासोव पलूस्की जैसे (उन्नीसवीं शती के) कवियों की कविताएँ जनता के बीच मौखिक साहित्य के रूप में फैल गईं।

उन्नसवीं शती में श्रमिक वर्ग के विकास के साथ काम करनेवालों के गीत सामने आए। पहले तो इन गीतों में इस वर्ग की भावनाओं का ही प्रतिबिम्ब था और केवल फैक्टरी के काम की कठिनाइयाँ मिलमालिक और उनके गुमाश्तों के प्रति घृणा की अभिव्यक्ति थी लेकिन. बाद में उनका रंग क्रांतिवादी हो गया और वे क्रांति के संघर्ष के गीत बन गए। इन गीतों में 'वर्षयांका' 'दुश्मन का तूफान हमारे सिर पर चलता', 'युद्ध प्रयाण, साहस के साथी उठते हैं', 'दफन के गीत', 'तुमने किया समर्पित जीवन' आदि गीत हैं। ये गीत अधिकतर लेखक विशेष की रचनाएँ हैं जैसे—लेनिन का प्रिय गीत 'निष्ठुर दुर्भाग्य प्रपीड़ित' या गोर्की का 'सूरज फिर निकला' फिर डूबा'।

चस्तूस्की या सड़क के गीत

उन्नीसवीं शती के अन्त से एक विशेष प्रकार के लोक-गीत खूब प्रचलित हुए इनका 'चस्तूस्की' है। यह अत्यन्त संक्षिप्त प्रायः चार पंक्तियों का होता है जिसे बाजे के साथ लोग चलते हुए या नाचते हुए गाते हैं।

प्रेम के गीत प्रधान रूप से जवानों और जवानी के बारे में है। करुण गीतों के साथ-साथ बहुत से प्रसन्नता और उत्साह के गीत हैं। जीवन के प्रति स्वस्थ-प्रेम जनता के हृदय से कभी न मिटा। विनोदपूर्ण गीत और नृत्य के गीतों का वस्तु-विषय आनन्द से परिपूर्ण है। अन्त में हमें रूसी बच्चों के पालना के गीत, लोरियों, खेल के गीत की ओर भी ध्यान देना चाहिए।

प्रत्येक गीत के दो पक्ष होते हैं—उसके शब्द और उसका संगीत या उसका शब्द विधान और उसकी लय। अधिकांश गीतों के स्वच्छंद मुक्तक (गीत) होने के कारण उनके शब्द और लय परस्पर पूरक होते हैं और समान रूप से भावों और अनुभूतियों की अभिव्यक्ति में सहायता करते हैं।

इनकी रचना के प्रधान रूप से काव्यपूर्ण शाब्दिक विधान के आश्रित होने के कारण ये गीत लोक-साहित्य की अन्य शाखाओं से अपनी काव्यपूर्ण शब्द-सम्पत्ति और काव्य-युक्तियों के कारण पृथक् हो जाते हैं। विशेष कर इनके काव्य-पूर्ण विशेषण और प्रेम, कोमल तथा लघुता-सूचक शब्द लोक-गीत की पहली पहचान या कसौटी हैं। (इन शब्दों और इनके मेल तथा योजनाओं का अनुवाद अति दुस्तर है और न अनुवाद में इनके मूल प्रभाव का सम्यक अंकन हो सकता है)।

भाषा की मूर्तिमत्ता और अत्यन्त लाक्षणिकता—जो कि काव्य-भाषा का विशेष गुण है—भी अत्यन्य विकसित है। साम्य और उपमान घुलते-मिलते रहते हैं और किसी वस्तु के साधन और प्रतीक बन जाते हैं। प्रकृति का कोई व्यापार मनुष्य की दशा का (प्रतिबिम्ब) द्योतन करता है जिसे 'मानसिक बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव', कह सकते हैं। "प्रकृति-व्यापार द्वारा तथ्य-द्योतन की क्रिया विधेयात्मक और नकारात्मक दोनों हो सकती है। पत्थर के नीचे, सफेद पत्थर के नीचे आग नहीं जल रही, किन्तु नवयुवक का हृदय जल रहा है।"

प्रकृति, वृक्ष और पशुओं के साथ मानव-संबंध की ऐसी सारगर्भित व्यंजना इन गीतों में मिलती है और वे सबके समझने में इतने सहज हैं कि वे स्थिर प्रतीक से बन गए हैं। जब किसी गीत में हंस वर्णन होता है तो उसका अर्थ है कन्या या नववधू। 'श्वेत हंस' अविवाहित का प्रतीक है और बत्तक (Duck) विवाहित स्त्री का द्योतक है ये इनके स्थिर प्रतीक बन गए हैं और इनमें कोई परिवर्त्तन नहीं होता। इसी प्रकार 'बाज़' आदि अन्य जवान या दूलह के प्रतीक हैं। पति का प्रतीक है चक्रवाक

और [illegible] विवाह या विरहिणी का प्रतीक है। [illegible] का, पेड़ों का [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] का प्रतीक है। इन प्रतीकों को यदि [illegible] नहीं फिर भी लोग इनके [illegible] अर्थ को समझते हैं।

[illegible] इन गीतों का पद-विधान (या छंद) [illegible] के लिए [illegible] है। [illegible] के लिए कुछ आवश्यक नहीं है और [illegible] है। [illegible] पंक्तियाँ [illegible] जा सकते हैं और [illegible] एक [illegible] है। प्रत्येक गीत की अपनी लय है और वह दूसरी लय में नहीं गाया जा सकता।

उन्नीसवीं शती के लोक-गीत

प्राचीन लोक-गीत के [illegible] जनता के बीच में थे और उनके नाम अज्ञात हैं। अठारहवीं शती से [illegible] लेखकों के गीत लोकप्रिय हो गए। इस शती में बहुत से गीत लिखे गये और पुश्किन, लेर्मोन्तोव, निकीतिन, नेक्रासोव [illegible] जैसे (उन्नीसवीं शती के) कवियों की कविताएँ जनता के बीच मौखिक साहित्य के रूप में फैल गईं।

उन्नीसवीं शती में [illegible] वर्ग के [illegible] के साथ काम करनेवालों के गीत सामने आए। पहले तो इन गीतों में इस वर्ग की भावनाओं का ही [illegible] था और केवल [illegible] के [illegible] की कठिनाइयाँ [illegible] और उनके [illegible] के प्रति घृणा की अभिव्यक्ति थी [illegible], बाद में [illegible] क्रान्तिकारी हो गए और वे क्रान्ति के संघर्ष के गीत बन गए। इन गीतों में 'मार्सेलेस' 'दुश्मन का तूफ़ान हमारे सिर पर चलता', 'कुछ [illegible], [illegible] के साथी [illegible] हैं', 'दफन के गीत', 'तुमने किया समर्पित जीवन' आदि गीत हैं। ये गीत अधिकतर लेखक विशेष की रचनाएँ हैं जैसे—लेनिन का प्रिय गीत 'निष्ठुर दुर्भाग्य प्रपीड़ित' या गोर्की का 'सूरज फिर निकला फिर डूबा'।

चस्तूश्की या सड़क के गीत

उन्नीसवीं शती के अन्त में एक विशेष प्रकार के लोक-गीत बहुत प्रचलित हुए इनका नाम 'चस्तूश्की' है। यह अत्यन्त संक्षिप्त प्रायः चार पंक्तियों का होता है जिसे बाजे के साथ लोग चलते हुए या नाचते हुए गाते हैं।

प्रेम के गीत प्रधान रूप से जवानों और जवानी के बारे में है। करुण गीतों के साथ-साथ बहुत से प्रसन्नता और उत्साह के गीत हैं। जीवन के प्रति स्वस्थ-प्रेम जनता के हृदय से कभी न मिटा। विनोदपूर्ण गीत और नृत्य के गीतों का वस्तु-विपय आनन्द से परिपूर्ण है। अन्त में हमें रूसी बच्चों के पालना के गीत, लोरियों, खेल के गीत की ओर भी ध्यान देना चाहिए।

प्रत्येक गीत के दो पक्ष होते हैं—उसके शब्द और उसका संगीत या उसका शब्द-विधान और उसकी लय। अधिकांश गीतों के स्वच्छंद मुक्तक (गीत) होने के कारण उनके शब्द और लय परस्पर पूरक होते हैं और समान रूप से भावों और अनुभूतियों की अभिव्यक्ति में सहायता करते हैं।

इनकी रचना के प्रधान रूप से काव्यपूर्ण शाब्दिक विधान के आश्रित होने के कारण ये गीत लोक-साहित्य की अन्य शाखाओं से अपनी काव्यपूर्ण शब्द-सम्पत्ति और काव्य-युक्तियों के कारण पृथक् हो जाते हैं। विशेष कर इनके काव्य-पूर्ण विशेषण और प्रेम, कोमल तथा लघुता-सूचक शब्द लोक-गीत की पहली पहचान या कसौटी हैं। (इन शब्दों और इनके मेल तथा योजनाओं का अनुवाद अति दुस्तर है और न अनुवाद में इनके मूल प्रभाव का सम्यक अंकन हो सकता है)।

भाषा की मूर्तिमत्ता और अत्यन्त लाक्षणिकता—जो कि काव्य-भाषा का विशेष गुण है—भी अत्यन्य विकसित है। साम्य और उपमान घुलते-मिलते रहते हैं और किसी वस्तु के साधन और प्रतीक बन जाते हैं। प्रकृति का कोई व्यापार मनुष्य की दशा का (प्रतिबिम्ब) द्योतन करता है जिसे 'मानसिक बिम्ब-प्रति-बिम्ब भाव' कह सकते हैं। "प्रकृति-व्यापार द्वारा तथ्य-द्योतन की क्रिया विधेयात्मक और नकारात्मक दोनों हो सकती है। पत्थर के नीचे, सफेद पत्थर के नीचे आग नहीं जल रही, किन्तु नवयुवक का हृदय जल रहा है।"

प्रकृति, वृक्ष और पशुओं के साथ मानव-संबंध की ऐसी सारगर्भित व्यंजना इन गीतों में मिलती है और वे सबके समझने में इतने सहज हैं कि वे स्थिर प्रतीक से बन गए हैं। जब किसी गीत में हंस वर्णन होता है तो उसका अर्थ है कन्या या नववधू। 'श्वेत हंस' अविवाहित का प्रतीक है और बत्तक (Duck) विवाहित स्त्री का द्योतक है ये इनके स्थिर प्रतीक बन गए हैं और इनमें कोई परिवर्त्तन नहीं होता। इसी प्रकार 'बाज़' आदि अच्छे जवान या दूलह के प्रतीक हैं। पति का प्रतीक है चक्रवाक

और कोयल विधवा या विरहिणी का प्रतीक है। बर्र द्वेष का, पेड़ों का सरसराहट शोक का, पिघलता हुआ बर्फ विफल प्रेम का प्रतीक है। इन प्रतीकों की चाहे व्याख्या की जाय या नहीं फिर भी लोग इनके काव्यपूर्ण अर्थ को समझ जाते हैं।

गाये जाने के उद्देश्य से रचे जाने के कारण इन गीतों का पद्य-विधान (या छंद) कभी-कभी पाठ्य वाक्यों से भिन्न होता है। उदाहरण के लिए तुक आवश्यक नहीं है और पुराने गीतों का अधिकांश तुकविहीन है। शब्द या पंक्तियाँ दोहराई जा सकती हैं। अनावश्यक शब्द छोड़ दिये जा सकते हैं और स्वराघात एक शब्द से दूसरे पर बदला जा सकता है। प्रत्येक गीत की अपनी लय है और वह दूसरी लय में नहीं गाया जा सकता।

उन्नसवीं शती के लोक-गीत

प्राचीन लोक-गीत के रचयिता जनता के बीच से थे और उनके नाम अज्ञात हैं। उन्नीसवीं शती में बहुत से लेखकों के गीत लोकप्रिय हो गए। इस शती में बहुत से गीत लिखे गये और पुश्किन, लेरमेन्तोफ, निकीतिन, निक्रासोव पलूस्की जैसे (उन्नीसवीं शती के) कवियों की कविताएँ जनता के बीच मौखिक साहित्य के रूप में फैल गईं।

उन्नसवीं शती में श्रमिक वर्ग के विकास के साथ काम करनेवालों के गीत सामने आए। पहले तो इन गीतों में इस वर्ग की भावनाओं का ही प्रतिबिम्ब था और केवल फैक्टरी के काम की कठिनाइयाँ मिलमालिक और उनके गुमाश्तों के प्रति घृणा की अभिव्यक्ति थी लेकिन. बाद में उनका रंग क्रांतिवादी हो गया और वे क्रांति के संघर्ष के गीत बन गए। इन गीतों में 'वर्षयांका' 'दुश्मन का तूफान हमारे सिर पर चलता', 'युद्ध प्रयाण, साहस के साथी उठते हैं', 'दफन के गीत', 'तुमने किया समर्पित जीवन' आदि गीत हैं। ये गीत अधिकतर लेखक विशेष की रचनाएँ हैं जैसे—लेनिन का प्रिय गीत 'निष्ठुर दुर्भाग्य प्रपीड़ित' या गोर्की का 'सूरज फिर निकला' फिर डूबा'।

चस्तूस्की या सड़क के गीत

उन्नीसवीं शती के अन्त से एक विशेष प्रकार के लोक-गीत खूब प्रचलित हुए इनका 'चस्तूस्की' है। यह अत्यन्त संक्षिप्त प्रायः चार पंक्तियों का होता है जिसे बाजे के साथ लोग चलते हुए या नाचते हुए गाते हैं।

इनके अत्यन्त संक्षिप्त और सरल होने के कारण इनकी रचना और इनका याद रखना भी सहज है। इस गीत का रूप-विधान साधारण जनता के अत्यन्त निकट है। ऐसे हजारों गीत लिखे गए और संगृहीत किए गए हैं। ये अनेक गाँवों में गाये जाते हैं, थोड़े दिन गाए जाते हैं फिर भुला दिये जाते हैं और फिर नये गीत उनकी जगह बन जाते हैं।

इन 'चस्तूश्की' के वस्तु-विषय में जीवन की भी अनेकरूपता और विभिन्नता मिलती है। इनमें से अधिक गीतों में व्यक्तिगत अनुभूतियों और भावनाओं का आवेश है और इनका विषय प्रेम है फिर भी बहुत से गीतों का आधार सामाजिक है और उनमें सामाजिक और राजनीतिक जीवन की टीका-टिप्पणी है। ये गाँव की सामाजिक जागृति और किसान-जनता की राजनीतिक चेतना से संबद्ध हैं। इन गीतों के रचयिता और व्याख्याता वे किसान नवयुवक थे जो गाँव में प्रगतिशील विचार के समर्थक थे।

रूसी जापानी युद्ध, सन् १९०५ की क्रांति और रूसी जर्मन युद्ध ने अगण्य गीतों के लिए विषय प्रस्तुत किये।

सोवियत् समय का लोक-साहित्य

अक्टूबर की क्रांति से जनता की रचनात्मक शक्तियों के स्वतन्त्र विकास का अपूर्व अवसर मिला। लोक-साहित्य को प्रोत्साहन देने के लिये सोवियत् ने क्लब, केन्द्र आदि का प्रसार किया और उनकी ऐसी देखभाल की जैसी कि पहले कभी नहीं हुई थी और उनको प्रदर्शनी (राष्ट्रीय तथा जनपदीय) सप्ताह आदि के द्वारा जनता के बीच लोकप्रिय बना दिया जिसमें कि सभी प्रांतों के उत्तम गायक, कवि, कलाकार, नर्तक आदि ने सहयोग दिया।

कुछ रूसी गीतों के प्रकार या रूप नष्ट हो गए हैं या नष्ट हो रहे हैं—वे प्रकार जो कि प्राचीन रीति के जीवन (जो अब लुप्त हो रहा है) के अधार पर थे या जो प्राचीन विश्वास जैसे जादू-टोना, विवाह आदि के आधार पर थे। किन्तु जन-काव्य के बहुत से प्रकारों का विकास जारी है—बिलीना या कहानी और गीत। ये नई रचना और सोवियत् सिद्धान्तों से समृद्ध हो रहे हैं। कुछ में तो परिवर्तन इतना अधिक हो गया है कि यह कहा जा सकता है कि नये प्रकार का आविर्भाव हो रहा है।

प्राचीन वीर-काव्य 'बिलीना' की रचना आज भी हो रही है। उसके साथ बिलीना के विश गानेवाले इस पुराने रूप या प्रकार के माध्यम से सोवियत् समय

की [illegible] पर [illegible] रखी गई। इस प्रकार [illegible] स्टालिन में [illegible], स्टालिन के [illegible] में 'गद्दों का चुनाव' की [illegible]। [illegible] (जो [illegible] कहानी कहने [illegible]) [illegible] है। इनके पास पुराने [illegible] और [illegible] का बहुत [illegible] है और [illegible] प्रतिभाशाली [illegible] है। [illegible] प्राचीन [illegible] है जो [illegible]। [illegible] बहुत [illegible] है। प्राचीन [illegible] कहती हैं। [illegible], 'स्टालिन [illegible]', [illegible] है। इन [illegible] उपयोग किया है और [illegible] और [illegible] का भी समावेश किया है।

[illegible] कहने का क्रम जारी है और उनका [illegible] और [illegible] के द्वारा [illegible] परिवर्तित है। [illegible] के समान इन नई कहानियों का [illegible] प्राचीन कहानियों से मिलता-जुलता [illegible] है फिर भी उनका [illegible] भिन्न है। [illegible] में किस तरह [illegible] पानी पर [illegible] है। यह उन [illegible] कहानी से मिलती है जिनमें [illegible] पशु और पक्षियों की सहायता से [illegible] कार्यों में सफल होता है। 'लाल फूल' में [illegible] विमान की [illegible] 'फूल' [illegible] है। जब यह [illegible] जाता है तो लाल फूल निकल कर [illegible] प्रकट कर देता है।

क्रांति, गृह-युद्ध, संस्कृति आदि विषयों पर यथार्थवादी कहानियों का भी विकास हुआ है। गृह-युद्ध के नायकों की कहानियाँ अधिक लोकप्रिय हैं जैसे, '[illegible] से भेंट' या '[illegible] ने सहेलियों [?] को किस प्रकार बुलाया'।

इन कहानियों में बताई गई घटनाएँ चाहे वास्तव में कभी न घटी हों फिर भी वे उस समय और उन लोगों की प्रतीक हैं। कई बार की पुनरावृत्ति से ये कहानियाँ जन-कथा बन गईं। लेनिन और स्टालिन के बारे में और उनसे मिलने और बातचीत की बहुत-सी कहानियाँ हैं।

क्रांति और गृह-युद्ध के आरम्भिक वर्षों में, क्रांति के गीत और साथियों के

गीत (Partisan) बहुत लोकप्रिय थे। यद्यपि ये प्राचीन गीतों के समान (सतत प्रयोग से) परिमार्जित न थे फिर भी जनता की क्रान्तिकारी मनोवृत्ति की अभिव्यंजना करते थे।

अब हमारे समय में उन्नीसवीं शती की, साहित्यिक गीतों का जनता के प्रयोग की प्रवृत्ति का और भी विकास हो रहा है। व्यापक प्रसार उनको लोक-गीतों में परिवर्तित कर देता है। उनका लय-विधान व्यवसायी (प्रोफेशनल) संगीतकार निश्चित करते हैं। सोवियत् के कवियों में से लिबेदेव, कुमाच, गुसेव, इसाकोव्स्की आदि की रचनाएँ बड़ी लोकप्रिय हो गई हैं।

प्राचीन और नवीन गीतों की मण्डलियों का सरकारी मंचों पर प्रयोग होता है। चस्तूस्की आधुनिक जीवन के सभी प्रकार के विषयों पर सभी शहरों और गाँवों में खूब प्रचलित है और बढ़ रहा है।

— —

प्राचीन तथा मध्यकालीन साहित्य

रूसी साहित्य नौ सौ वर्ष से अधिक पुराना है। यह पूरा समय दो भागों में विभक्त किया जाता है। पीटर महान् के समय तक का साहित्य प्राचीन साहित्य के नाम से ज्ञात है, और अठारहवीं शताब्दी के आरम्भ से लेकर वर्तमान समय का साहित्य नवीन साहित्य कहलाता है। प्राचीन साहित्य तीन युगों या कालों में विभक्त है।

कीव-युग

दशवीं शताब्दी के अन्त में कीव या कीव्स्कया रूस का बहुत बड़ा केन्द्र बन गया था जिसके राजकुमार कारपेथियन पर्वत से वालगा नदी तक फैले हुए बहुत से रूसी स्लाव फिरकों को संगठित रखते थे और उनका अधिकार था। यह राष्ट्र केवल इतने बड़े प्रदेश पर शासन करने में और पूर्व और पश्चिम के आक्रमणकारियों से रक्षा करने में ही समर्थ न था प्रत्युत बाइज़ेंटाइन से युद्ध करने में भी समर्थ था। रूसी साम्राज्य के राज्यवंशों के फ्रांस, नार्वे, हंगरी, पोलैंड और इंगलैंड से वैवाहिक संबंध थे। चारों दिशाओं में स्थल और नदी के मार्ग से व्यापारिक संबंध बाल्टिक से लेकर ब्लैक सागर तक और कैस्पियन से लेकर मध्य एशिया तक थे। कीव और नोवोगोरद इन्हीं प्रधान व्यपार-मार्गों पर थे। पुरातत्व-ज्ञान से इस बात का पता चलता है कि वहाँ बहुत समय से व्यापार होता था और सातवीं शताब्दी से अरब और यूनानी सिक्कों के विनियम का पता चलता है। इसके पहिले के चिन्हों से पता लगता है कि नीपर नदी की घाटी में स्लाव का कृषी-कर्म अत्यन्त विकसित था और वे धातुओं के बहुत से औजार बनाते थे। तत्कालीन बाइज़ेंयाइन के इतिहासकारों की रचनाओं मे पृथक् और स्पष्ट स्लाव संसार, उनकी सांस्कृतिक परम्परा, धर्म और युद्ध में उनकी वीरता के उल्लेख प्रायः मिलते हैं। यद्यपि सामान्म जनता किसान थी जो कि गाँवों की पंचायतों (Communes) में रहती थी और फिरकों के संगठन की कुछ पुरानी संस्थाओं को जीवित बनाये हुए थीं फिर भी जमींदारों का आभिजात्य और सामन्तशाही, दास-प्रथा एवं व्यवस्था का आरम्भ हो गया था। दसवीं शताब्दी के अन्त तक नागरिक सँस्कृति भी बहुत ऊँचे दर्जे तक पहुँच गई थी, जिसमें बहुत बड़े शहर बन गये थे और जिनमें सौदागर, कारीगर और राज्यवंश के लोग रहते थे। नोवोगोरद जैसे शहर में पक्की सड़कें 'लकड़ी के·

पुल और सफाई के लिये पाइप आदि यूरोप के अन्य शहरों में भी नहीं पहिले से थे। दशवीं शताब्दी के अन्त में कीव को आबाद और बड़ा नगर बनाया गया जिसमें चार सौ चर्च और आठ बाजार थे। ये नगर, धातु और चमड़े के काम, मिट्टी के बर्तन, गहने, कपड़े और रंगाई के काम के लिये मशहूर थे। लकड़ी, पत्थर और संगमरमर में शिल्प की नवीन शैली का आविर्भाव हुआ। इमारतें, [illegible]-खुदाई, पच्चीकारी, छतों की रंगाई और रंगीन पत्थरों से खूब सजाई जाती थीं। उस समय के ग्यारहवीं और बारहवीं शती के पत्थर के किले जिन्हें कि क्रेमलिन कहते हैं और बड़े कैथडेरल जो कि बाहर से खूब सजे हुए और अन्दर छत से लेकर फर्श तक अपूर्व चित्रों (Fres Coes) से सजे हैं वर्तमान हैं।

यह निश्चियपूर्वक नहीं कहा जा सकता कि इन नगरों के लोगों ने लिखने की कला कब सीखी या इनकी लिपि किस प्रकार की थी, किन्तु पुराने यात्रियों द्वारा देखे गये ऐतिहासिक लेखों (Documents) पता चलता है कि दसवीं शती तक किसी न किसी प्रकार की लेखन-प्रणाली विद्यमान थी, परम्परा स्लाव वर्णमाला (जिससे कि रूसी वर्णमाला निकलती है) के आविष्कार का श्रेय सेलोनिका के दो भाई किरिल और मेथोडियस को देती है जो नवीं शती में बाल्कन के स्लाव को ईसाई बनाने लगे और जिन्होंने ईसाई धार्मिक पुस्तकों का प्राचीन बल्गेरियन में प्रथम अनुवाद किया। ग्रीक लिपि के आधार पर बनी हुई यह वर्णमाला स्लेवानिक भाषाओं की ध्वनियों के वहन में अत्यन्त सफल सिद्ध हुई और रूसियों में ईसाइयत के प्रचार से यह उनकी साहित्यिक भाषा का आधार बन गई। दशवीं शती के अन्त तक रूसी अपने प्राचीन धर्म को सुरक्षित रख सके। सन् ९८८ में राजनीतिक कारणों से कीव के राजकुमार ब्लदीमिर ने ईसाइयत को स्वीकार किया और रूस योरप के राष्ट्रों के घनिष्ठ संपर्क में आया। ईसाइयत के समावेश से राष्ट्र के केन्द्रीकरण में सहायता मिली और इससे केवल धार्मिक रचनाओं को ही प्रेरणा न मिली किन्तु साहित्य और साधारण शिक्षा को भी प्रोत्साहन मिला। यह कहा जाता है कि राजवंश के लड़कों (Nobility) के लिये ब्लदीमिर ने स्कूलों स्थापना की। साहित्य, विदेशी भाषाओं, दर्शन, गणित, धर्मशास्त्र में शिक्षित एक नये वर्ग का आविर्भाव हुआ, अभिजात्य वर्ग की बहुत-सी स्त्रियाँ भी अपनी विद्वत्ता के लिये विख्यात हुईं। धार्मिक पुस्तकों के पठन, प्रतिलिपि और बाइज़ेंटाइन साहित्य के अनुवादों के थोड़े ही समय बाद, रूसी चर्चवाले और अन्य लेखक नई और मौलिक पुस्तकें लिखने लगे, एक नए सांस्कृतिक युग का आरम्भ हुआ जो केन्द्रित राष्ट्र की आवश्यकताओं के अनुकूल था।

इसके साथ ही सरकारी धर्म ने अपने को प्राचीन विश्वास और जनता के रीति-रिवाज़ के विरोध में पाया। इस संघर्ष का उल्लेख वंशकथाओं

और पुरोहितों के विवरणों में मिलता है जो विधर्मियों के विश्वास, नाचगान और रस्म रिवाज (जो अभी तक वर्तमान थे) को जड़ से उखाड़ देने की बात करते हैं। जो लोग इस नई शिक्षा से वंचित रहे वे अपने ढंग पर प्रबंध-काव्य, गीत और कथाओं का मौलिक साहित्य रचते रहे जिससे कि सामान्य भाषा की अभिव्यंजन शक्ति विकसित हुई और जिसने लिखित साहित्य को प्रभावित किया। ग्रीक की अनूदित पुस्तकों के द्वारा साहित्य केवल ईसाई साहित्य के सम्पर्क में ही न आया प्रत्युत उस यूनानी ज्ञान और साहित्य के सम्पर्क में भी जो कि बाइज़ेंटाइन में आ गया था। स्वयं बाइज़ेंटाइन में नवीन और प्राचीन के संघर्ष के चिह्न देखे जा सकते हैं और यह भी जाना जा सकता है कि ईसाइयत कि विजय ने किस प्रकार धार्मिक रचनाओं, ईसाई-साधना (Christian asceticism) और रहस्यवाद पर जोर दिया, फिर भी ऐहिक साहित्य ऐतिहासिक विवरणों (Historiography) में विशेष रूप से और प्रेमकथाओं में समृद्ध था। उसके संग्रह-ग्रन्थों में प्राचीन काव्य आदि के साथ उस समय के ज्ञान-विज्ञान का भी संकलन है। कीव-युग में अनूदित ग्रन्थों की कोटि निम्नलिखित भागों में विभक्त की जा सकती है—

(१) धर्मशास्त्र बाइबिल, कर्मकांड, प्रार्थना आदि।

(२) गुप्त पुस्तकें (Apocrypha) जिनमें बाइबिल की कथाओं में नई लोकप्रिय कथाएँ जोड़ी गई थीं और जिनका चर्च द्वारा गहरा विरोध होने पर भी रूसियों के बीच प्रचार हुआ और जिनमें फिर उन्होंने (रूसियों ने) और बदला तथा बढ़ाया; इनमें से कुछ लोक-कथाओं में मिलेंगी।

(३) संतों के जीवनचरित्र।

(४) ऐहिक कथाएँ, जैसे अलेक्ज़ेंडर की कथा।

(५) ऐतिह्य (Chronicles)

(६) ऐहिक या अर्थ ऐहिक शास्त्र, जैसे सर्ग-रचना की कथा और भौतिक इतिहास (Physiologos)

(७) संग्रह-ग्रंथ जिनमें विविध प्रकार के संक्षिप्त वर्णन, प्राचीन दार्शनिक और लेखकों की रचना के टुकड़े, चर्च के अधिपतियों का जीवन और उनके धर्मोपदेश और सभी प्रकार के लेख आदि होते थे।

इसी प्रकार मौलिक और रूसी विषयों से संबद्ध रचनाएँ बढ़ीं। रूसी ऐतिह्य (Chronicles) व्यावहारिक उद्देश्य से लिखे गये। सामान्य घटनाओं के वर्णन से लेकर मौलिक तथा विस्तृत ऐतिह्य तक हैं। उनमें न्येस्तर का ऐतिह्य सबसे प्रसिद्ध है। इनके साथ ऐतिहासिक कथाओं (जैसे बोरिस और ग्लेब का संबंध), रूसी धार्मिकों के जीवनचरित्रों, यात्रियों के भ्रमण-वृत्तांतों, और एक

प्रकार के मौखिक उपदेश जिसे 'स्लोव' अर्थात् शब्द या वर्णन कहते हैं, इन सब का उल्लेख भी किया जा सकता है। इस समय की सबसे प्रसिद्ध कृति—और जिसे संसार के सभी विद्वान् जानते हैं—ईगर की सेना का शब्द (या वर्णन) है।

मध्यकालीन सभी योरोपीय साहित्य की भाँति प्राचीन रूसी साहित्य जनता और उसकी जटिल मनोवृत्तियों के सजीव वर्णन में अभी कुशलता नहीं प्राप्त कर सका था, किन्तु इसने बड़ी जल्दी तर्क, विचाराभिव्यक्ति और भावाभिव्यञ्जन की क्षमता प्राप्त कर ली। यह शक्ति और क्षमता लेखन की प्रक्रिया (या शैली) से संबद्ध थी। कीव के बहुत से लेखक साहित्यिक शैली के आचार्य थे। इनकी अधिकांश रचनाएँ भाव-गांभीर्य में अपूर्व हैं प्राचीन साहित्य की सभी प्रकार की उत्तम रचनाएँ जातीय भावना और देशभक्ति से व्याप्त हैं। लौकिक और धार्मिक दोनों प्रकार के लेखकों को अपने देश का गर्व है और जब वे घर से दूर या विदेश में होते हैं तो इसे याद करते हैं, मानवता की प्रबल भावना का स्वर भी सामान्य रूप से मिलता है, विदेशी के प्रति शत्रुता के भाव का अभाव उस समय तक रहता है जब तक कि वे देश पर आक्रमण न करें। ग्यारहवीं शती का लेखक लिखता है कि "केवल अपने ही धर्म से नहीं प्रत्युत अपरिचित के धर्म से भी प्रेम रखो, यदि तुम किसी को नंगा भूखा, या तकलीफ में पाओ तो उसकी मदद करो चाहे वह 'यहूदी' हो या 'सारासन' या 'बल्गर' हर एक को प्यार करो और सबके दुख को दूर करो।"

आरम्भ से ही एक विशेष प्रकार की साहित्यिक भाषा का—जो उस दक्षिणी स्लाव भाषा से मिलती-जुलती थी जिसमें बलगेरिया और सर्बिया में प्रथम पुस्तकें लिखी गई थीं—रूसी साहित्य में प्रयोग हुआ। लोग उस भाषा को समझ सकते थे किन्तु यह रूसियों की जीवित, बोलचाल की भाषा न था। कीव का लिखित साहित्य इसी भाषा में था, किन्तु आरम्भ से ही विकास की एक दूसरी धारा देखी जा सकती है, व्यापार और व्यवहार के पत्रों, इकरारनामों और वसीयतों आदि में स्पष्टता के लिए रूसी भाषा का समावेश और प्रयोग आवश्यक था। रूसी दण्ड-विधान (Russian Code) में यही सरल और लोकप्रिय (popular) भाषा मिलती है। लोककथाएँ और मौखिक साहित्य जीवित भाषा का दूसरा स्रोत था जिसकी झलक कीव साहित्य में और उदाहरणातः 'ईगर के गीत' में मिलती हैं।

सबसे पुराने ऐतिह्य (Chronicles) दो हस्तलिखित पुस्तकों में हैं जो "रूसी ऐतिह्य के आरम्भ' (नचाल्नया रूस्कयाल्येतोपिस) के नाम से ज्ञात हैं। यह किसी एक लेखक की किसी एक समय में लिखी हुई कृति न होकर संग्रह या संकलन है जो समय समय पर परिवर्धित हुआ, इस पुस्तक का इतिहास इस प्रकार

ऐतिह्य बाद की कई पीढ़ियों के लेखकों के लिये इतिहास का मौलिक स्रोत बना रहा।

ईगर की सेना का गीत या 'कहानी'

किसी अज्ञात कवि ने इसकी ११८५-८७ ई० के निकट रचना की। सबसे प्राचीन हस्तलिखित प्रति का अठारहवीं शती के अंत में पता लगा। मुसिन-पुश्किन ने इसकी प्रतिलिपि ली और सन् १८०० में छपाया, इसकी मूल प्रति सन् १८१२ के मास्को के अग्निकाण्ड में जल गई। मूल प्रति के नष्ट हो जाने से पाठ-संशोधन आदि की विशेष कठिनाइयाँ उपस्थित हो गई हैं क्योंकि अब केवल मुसिन-पुश्किन का संशोधित पाठ प्राप्य है। 'स्लोव' के प्रकाशित होने के समय से लेकर लेखक, कलाकार, कवि और संगीतकार इससे प्रेरणा प्राप्त करते रहे हैं। बहुत से कवि इसे आधुनिक रूसी में रूपांतरित करने का लोभ न रोक सके और अनुवादकों ने इसका विदेशी भाषाओं में अनुवाद किया। विश्व के विश्रुत प्रबंध-काव्यों (या महाकाव्यों) में से यह एक है। अनुवाद में किसी ग्रंथ का पूर्ण रसास्वादन सम्भव नहीं फिर भी सभी बड़े महान् ग्रंथों के समान अनुवाद में भी इसका ओज और रंग देखा जा सकता है।

इस ग्रन्थ की ऐतिहासिक कथावस्तु का उल्लेख नेस्तर तथा दूसरों के ऐतिह्य में मिलता है। सन् ११८५ में उत्तरी नोवोगोरद के राजकुमार ईगर स्व्यतोस्लवोविच ने पलोव्स्ती (जिसका दूसरा नाम कुर्चाक है) जाति के विरुद्ध असफल युद्ध किया। यह जाति प्रायः तेज घोड़ों पर चढ़कर अचानक युद्ध करती और गाँवों को लूटकर और नगरों को नष्ट कर तथा पशु और कैदियों को लेकर चटपट भाग जाती थी। कीव के उस समय तेरह मुख्य प्रान्त थे किन्तु वे बराबर छोटे टुकड़ों में विभक्त होते जाते थे। इन टुकड़ों के शासक सीमा की रक्षा में भी सहयोग न देते। ११८४ में कीव के महान् राजकुमार ने दूसरों के साथ इसके विरुद्ध सफल युद्ध किया और पलोव्येत्सखा को कैदी बना लिया। ११८५ के ग्रीष्म में राजकुमार ईगर ने अपने सम्बन्धियों और उनके अनुगतों को इकट्ठा कर अपनी प्रशंसा के लिए अपने तथा शत्रु को स्टेप में भगा देने तथा उत्तरी काकेशस के तुमूराखान के रूसी प्रान्त के उद्धार के लिए स्वतन्त्र रूप से युद्ध करने की ठानी। इसकी सेना पराजित हुई और चार राजकुमार बन्दी हुए। रूसियों में एकता न हो सकी। फलतः इन बर्बर जातियों ने फौरन आक्रमण किया और कीव दुःख से कराहने लगा।

किन्तु 'स्लोव' का उद्देश्य घटनाओं का वर्णन नहीं है। यह ईगर की पराजय का मातम मनाता है और उसके वीर साथियों के लिये सहानुभूति जगाता है। लेखक केवल दो चार महत्वपूर्ण घटनाओं को चुनकर उनका वर्णन करता है, उसके वर्णन

पड़ती है वह अपने तेज घोड़े पर सवार होता है और पानी बतख की तरह या बाज की तरह तेजी से भाग निकलता है। नदी राजकुमार को अपनी लहरों पर झुलाती है, हरी घास उसके चलने के लिये फैली है। कोहरा उसे ढक लेता है, कौए बोलना बन्द कर देते हैं और कठफोड़वा पक्षी ठीक रास्ता बताता है। बुलबुल प्रभात का स्वागत करती है। ईगर रूस वापस आ गया। सूर्य फिर से चमकता है और कन्याएँ गाती हैं। काव्य वीरों के संक्षिप्त संस्मरण (Commemoration) के साथ समाप्त होता है।

'स्लोव' शब्द का मौलिक अर्थ था बोलचाल की भाषा या उपदेश। एक दूसरी जगह लेखक अपनी इस कृति को कहानी या गीत कहता है। इसकी शैली लोक-प्रबन्ध-काव्य या बिलीना के निकट है। किन्तु फिर भी यह लिखित साहित्य की कृति है और व्यक्तिगत भावों और विशिष्ट लेखक की व्यक्तिगत भावनाओं और विचारों से पूर्ण है। इसे गीतात्मक प्रबन्ध-काव्य कहा जा सकता है। इसकी प्रधान भावना कि देश को आक्रमणकारियों से बचाने के लिये साथियों में एकता आवश्यक है, बिलकुल स्पष्ट है। उस समय के अधिकांश साहित्यों के विपरीत इसमें मनुष्यों और प्रकृति के वर्णन अत्यन्त सजीव हैं। प्रत्येक व्यक्ति का अपना चरित्र है और उसका निश्चित कार्य है।

जोरदार वर्णन और संवादों के साथ-साथ इसमें बहुत कुछ भावात्मकता भी है। सारे काव्य का प्रभाव, इसका नाटकीय उत्कर्ष, विशेषकर घटनाओं की सम्बन्ध योजना और वातावरण के कल्पनात्मक विवरणों पर निर्भर है। इसकी शैली मूर्त्तिमत्ता, रूपकों और अन्य काव्य-युक्तियों और कौशलपूर्ण प्रयोग से भरी है। रूपकों के मानवीकरण (Personification) की मूर्त्तिमत्ता, कवि को अत्यन्त प्रिय है और कोई भी चित्र अमूर्त्त या सूक्ष्म के द्वारा नहीं प्रकट किया गया है। प्राकृतिक शक्तियाँ भी रूपकान्वित हैं। प्रतीकों से केवल वर्णन में सजीवता ही नहीं आती प्रत्युत काव्य में करुणा भी बढ़ती है। लड़ाई की उपमा अनाज कूटने से दी गई है, "सिर अनाज के गट्ठर की तरह ज़मीन पर बिछे हैं, वे उनको लोहे की तलवारों से कूटते हैं, और निराने के समान (Winnow) प्राण को शरीर से निकाल देते हैं" या विवाह-शादी की दावत के समान है जिसमें मेहमानों के लिए लाल शराब काफी नहीं है। पुराने प्रबन्ध-काव्यों के समान 'स्लोव' में विशेषणों का प्रयोग बड़े प्रभावपूर्ण ढंग से हुआ है, जो लोककाव्य में अत्यन्त प्रचलित है।

मौखिक काव्य के अत्यन्त निकट होते हुए भी 'स्लोव' साहित्य की कृति है और इसका लेखक स्पष्ट रूप से शिक्षित व्यक्ति है जिसे तत्कालीन साहित्य का अच्छा ज्ञान था।

सामन्ती राष्ट्र का युग

तेरहवीं शती के पूर्वार्ध में, दक्षिण रूस में तातारों के आक्रमण के बाद, संस्कृति का केन्द्र कीव से हटकर उत्तर-पूर्व में चला जाता है, महान् राजकुमार की उपाधि व्लदीमिर सुज़दाल के प्रान्त के शासकों को मिलती है, और कीव विजयी लिथुआनियों के अधिकार में चला जाता है। उत्तर तथा उत्तर-पूर्व के साहित्य में प्रांतीयता या स्थानीयता आती है। क्रमशः मास्को राजनीतिक और सांस्कृतिक केन्द्र बन जाता है, जिसके चारों ओर उत्तर-पूर्व रूस गुम्फित होता है। मंगोल अधिकार का समय जीवन के अस्तित्व के लिए कठोर संघर्ष का युग था। फलतः उस समय की साहित्य की न्यूनता स्वाभाविक है। बची हुई प्रधान कृतियाँ निम्नलिखित हैं—

(१) अलेक्जेंडर नेव्स्की का जीवन (तेरहवीं शती),

(२) सेरापियन के उपदेश (तेरहवीं शती),

(३) अथानेसियस निकोतिन की यात्रा (चौदहवीं शती),

(४) कुछ ऐतिहासिक वर्णन।

अलेक्जेंडर नेव्स्की का जीवन, उसकी मृत्यु (सन् १२६३) के बाद उसके एक साथी ने लिखा, जिसे किसी साधु (Monk) ने सन्त की जीवनी के रूप में फिर से ढाला। यह चरित्र का अच्छा अध्ययन है और इसमें पश्चिम के आक्रमणकारियों के विरुद्ध संघर्ष का वर्णन है। इसकी तीन मुख्य घटनाएँ हैं—स्वीडन के राजा को चुद झील पर पराजय, अलेक्जेंडर की तातारों के यहाँ यात्रा और वापसी यात्रा में उसकी मृत्यु। 'बात्का साजन पर आक्रमण' (सन् १२३७) भी साहित्यिक गुणों से समन्वित कृति है। एक बड़ी हस्तलिखित पुस्तक में लगा हुआ 'विस्तृत और प्रिय रूस के दुर्भाग्य' पर विलाप मिला। यह किसी अज्ञात लेखक की अत्यन्त भावपूर्ण कृति 'रूस के नाश का स्तोत्र' कहा जाता है। साजन के सफोनियस के चौदहवीं शती के काव्य 'डान के पार का युद्ध' में कुलिकोव की लड़ाई में तातारों के ऊपर मिली हुई प्रथम विजय का गान और मास्को के राजकुमार दिमित्री ईवानोविच दान्स्कॉय की प्रशंसा है। इसमें मास्को के प्रति नवराजनीतिक परिवर्त्तन (Orientation) का संकेत मिलने लगता है।

मास्को युग—(पन्द्रहवीं-सोलहवीं शताब्दी)

सारे रूस का एक राष्ट्र में सुसंगठन पन्द्रहवीं शती के निकट मास्को के महान् राजकुमार ईवान तृतीय के आधिपत्य में हुआ और उसने इसके पश्चात् रूस के ज़ार की उपाधि धारण की। इस प्रकार केन्द्रित निरंकुश शासन (Centrali-

sed autocracy) का आरम्भ होता है। ईवान चतुर्थ के समय में (जो भयानक ईवान कहलाता है) सोलहवीं शती में साम्राज्य की सीमाएँ बहुत आगे बढ़ीं और उसमें पहले के तातार प्रान्त कज़ान, अस्त्राख़ान और साइबेरिया मिला लिए गए। इस प्रबल राष्ट्र का बाहरी दुनिया से राजनीतिक और व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित हुआ। बहुत बड़े साम्राज्य के राजनीतिक और धार्मिक केन्द्र के रूप में मास्को 'तीसरा रोम' बन गया।

कला और साहित्य से प्रान्तीयता या स्थानीयता की छाप भी बदली। भव्य-विशाल और खूब सजी हुई इमारतों का युग शुरू हुआ। बाहरी सम्पर्क के कारण इटली आदि विदेश के कलाकार और शिल्पी वहाँ पहुँचे। सोलहवीं शताब्दी में छापेखाने का आरम्भ हुआ। इससे पहली रूसी पुस्तक सन् १५६४ में मास्को में छपी। इसे ईवान-फ़िदोरोव और उसके सहायक मस्तीस्लाव्वेत्स ने तैयार किया था। फिर भी कुछ समय तक प्रेस का उपयोग केवल धार्मिक (Liturgical) पुस्तकों के लिये हुआ।

सोलहवीं शताब्दी में सारी हस्तलिखित रूसी पुस्तकों को इकट्ठा करने की योजना मास्को में शुरू हुई। २० हजार पृष्ठों का एक बड़ा ग्रन्थ सारे रूसी रेकार्डों को देखकर तैयार किया गया और २७ हजार पृष्ठों की चर्च-साहित्य की इनसाइक्लोपीडिया तैयार हुई।

पुराने ढंग के युद्ध के वर्णनात्मक ग्रन्थों के स्थान पर राजनीतिक और सामाजिक समस्याओं पर ग्रन्थों की रचना सामान्य रूप से होने लगी। मास्को के 'तृतीय रोम' या 'कांसटैंटिनोपुल और रोम के उत्तराधिकारी' होने की भावना कई ग्रन्थों में पाई जाती है। 'ईवान (The Terribce) और कुर्ब्स्की का पत्रव्यवहार' (सोलहवीं शती) में निरंकुशता और प्राचीन व्यवस्था के राजनीतिक संघर्ष की समस्या का स्पष्ट चित्रण है। अफनासीनिकीतिन की 'तीन सागर की यात्रा' भारत के व्यापारिक भ्रमण का पहिला साहित्यिक वृत्तान्त है। एपीफानी-प्रीमुद्री के मास्को के वीरों की जीवनी में जीवन-चरित्र की एक नई अलंकृत शैली का विकास हुआ जिसने बहुत समय तक लिखित साहित्य को प्रभावित किया। प्रसिद्ध दमस्त्राय ने एक नये प्रकार के साहित्य का आरम्भ किया जिसका विषय गृहस्थ-जीवन के व्यावहारिक और नैतिक प्रश्न थे और जिसने पारिवारिक जीवन और रीति-रिवाज का उदाहरण उपस्थित किया।

कलात्मक साहित्य ने मनोरंजक और साथ-साथ नैतिक उपदेशवाली कहानियों [illegible] नया मार्ग ग्रहण किया। 'पीटर और फेवरोन्या की कहानी' बड़ी [illegible] मूरोम का राजकुमार है और नायिका रूसी किसान लड़की [illegible] पहिली बार रूसी साहित्य में पूरा विस्तृत [illegible] हुआ—जो

[illegible] और [illegible] जाती है। [illegible] और [illegible] जा सकी [illegible] आता है। [illegible] में [illegible] [illegible] भाषा में [illegible] सामान्य बोल-चाल की भाषा में [illegible] है। [illegible] शैली था, [illegible] था, [illegible] शैली का भी प्रयोग हो [illegible] था। [illegible] और [illegible] है।

[illegible] (Nobility) के [illegible] (जो [illegible] में और भी तीव्र हो गया) [illegible] के [illegible] में [illegible] और [illegible] में [illegible] किया। [illegible] राष्ट्रीय [illegible] पर [illegible] और [illegible] कठिनाइयाँ [illegible] हुआ और नई शक्ति प्राप्त बढ़ी हुई [illegible]। किन्तु इससे सामान्य जनता की स्थिति में कोई सुधार न हुआ। अतः मास्को में विद्रोह हुआ और [illegible] के नायकत्व में दूसरा विप्लव-युद्ध हुआ।

यूरोप के अन्य राष्ट्रों के मुकाबले रूस इस समय बड़ा पिछड़ा हुआ था। ज़ार राजकीय सत्ता के शासन में आत्मतुष्टि (Self-sufficiency) और ईश्वरीय चुनाव (Devine election) के सिद्धान्त के कारण बड़ी रुकावटें थीं। अनुदार दल के साथ साथ एक शिक्षित प्रगतिशील वर्ग पश्चिम के सम्पर्क के द्वारा ज्ञान और शिक्षा के बढ़ाने को बड़ा उत्सुक था। सत्रहवीं शती में नई विदेशी पुस्तकें छियाई पढ़ने लगीं और मास्को तथा दूसरे नगरों में स्कूल और अकेडमी स्थापित हुई। अमीर आदमी अपने निजी पुस्तकालय बनाने लगे। १६८० में मास्को में स्लाव-ग्रीक-लेटिन अकेडमी की स्थापना हुई।

कला और साहित्य दोनों में तड़क-भड़क और सजावट के साथ-साथ चित्रण और यथार्थ के प्रति रुचि भी बढ़ी। ऐसी प्रवृत्तियाँ नई सामाजिक शक्तियों के आविर्भाव से सम्भव हो सकीं। इस समय तक शहर के न्यून वर्ग और किसानों के

पास अपना मौखिक लोक-साहित्य हो गया था। अब यदि किसान नहीं तो कम से कम शहर के रहनेवाले गरीब लिखित साहित्य के संपर्क में अधिकाधिक आने लगे और साहित्य स्वयं जनता के बड़े हिस्से की रुचि और विचार की झलक दिखाने लगा। पश्चिमी यूरोप के व्यापारिक संबंध से फ्रेञ्च, जर्मन और इटालियन के अनुवाद भी प्रस्तुत हुए जिनमें स्वच्छंद और सांसारिक प्रेम के उपन्यास (Romances) भी थे इस तरह साहित्य ऐहिक बन गया और उसने अपने को जीवन के धार्मिक दृष्टिकोण (Ecclesiastical view of life) से मुक्त कर लिया औ उनकी हँसी उड़ाना भी शुरू किया, अब कहानियों और उपन्यासों के नायक केवल राजवंश या चर्च के बड़े आदमी न थे, किन्तु व्यापारी वर्ग के लोग भी थे, और सामान्य नागरिक और किसान का भी उसमें चित्रण था। रुचि अब युद्ध या धर्म के साहसपूर्ण कार्यों से हटकर प्रतिदिन के परिचित विषयों या अद्भुत कर्मों (Adventures) और पात्रों के आंतरिक जीवन और मनोविज्ञान की ओर लगी। भाषा और शैली बोलचाल के अधिक निकट आ गई।

उन नई पुस्तकों में, जिनमें प्राचीन 'जीवनी' (अर्थात् संत या राजा की जीवनी) को नया रूप दिया गया, हम व्यक्तिगत अनुभूतियों और वातावरण के यथार्थ चित्र पाते हैं। उदाहरणतः पुरोहित अवाक्रम की आत्मजीवनी है जिसका जोरदार लोकप्रिय (Popular) भाषा, हास्य और सीधी शैली के कारण आधुनिक लेखकों में बड़ा आदर है।

उपन्यास के अगुआ के रूप में, एक नई किस्म की घरेलू कहानी सामने आई। 'सवाग्रुत्सिन की कहानी' एक सौदागर के लड़के की लम्बी और जटिल कथा है जिसमें एक स्त्री के प्रेम के लिए वह शैतान के हाथ अपनी आत्मा बेच देता है। शैतान की कथा होने पर भी इसमें सत्रहवीं शती के व्यापारी वर्ग के जीवन का चित्र है। चरित्र-चित्रण की कुशलता और अद्भुत कर्मों (Adventures) की योजना 'फ्रोल स्कोबयेव की कहानी जैसी अन्य कहानियों में भी देखने को मिलती है। इस कहानी का नायक एक छोटा अफसर है जो अमीर पत्नी पाने को बड़ा षड्यन्त्र रचता है। पुराने नैतिक और धार्मिक उपदेश (कि सद्गुणों का अच्छा फल मिलेगा) की जगह चालाकी के परिणाम-स्वरूप प्रात भौतिक सफलता के साथ कहानी समाप्त होती है। 'गोर्या ज्लोच्स्ताया' पद्यबद्ध अन्योक्ति-सी कहानी है, जिसमें बच्चों और माता-पिता या नवीन और प्राचीन पीढ़ी के बीच में संघर्ष का चित्रण है। सामाजिक इतिहास के उस प्रश्न पर यह अत्यन्त मनोरंजक प्रकाश डालनेवाली कहानी है। इसकी शैली लोक-काव्य और लोक-कथा के बहुत निकट है। लेखक का नाम अज्ञात है किन्तु यह प्राचीन साहित्य की अत्यन्त

मौलिक कृति मानी जाती है। नायक के दुर्भाग्य के बहुत बड़े प्रभावपूर्ण वर्णन मिलते हैं। यद्यपि उसे अपने जीवन-सुधार के कई अवसर मिलते हैं फिर भी वह प्राचीन दुर्बलता के कारण असफल रहता है और अन्त में शोक या दुर्भाग्य के पंजे में पड़ जाता है। यह 'शोक' उसका सभी जगह पीछा करता है। यदि नायक चिड़िया बनकर उड़ता है तो वह बाज़ बनकर झपटता है, यदि वह घास में छिपता है तो शोक हँसिया बनकर काटता है, उसके बचाव का केवल एक ही उपाय है। वह मठ में चला जाता है। अतिरंजन (Fantasy) के होने पर भी चरित्र-चित्रण यथार्थता से पूर्ण है। वह पुराने ढंग से न रहकर अपने हिसाब से रहना चाहता है किन्तु नया रास्ता निकालने की संकल्प-शक्ति उसमें नहीं है, शोक एक ओर तो 'शैतान की शक्ति' का पुराना प्रतीक है (जैसा कि चर्च में बताया गया है)। और दूसरी ओर जनता की भावना 'दुर्भाग्य' का रूपक है जो कि कुछ आदमियों का हमेशा पीछा किया करता है। लेखक इसी नैतिक शिक्षा के साथ कहानी समाप्त करता है कि यह माता-पिता की आज्ञा की अवहेलना का परिणाम है। फिर भी नायक का चित्रण सहानुभूति और करुणा (Pity) के साथ हुआ है। कहानी 'बिलीना' से मिलती-जुलती शैली में है और बहुत से अवतरण लोक-काव्य के निकट हैं।

सत्रहवीं शती में, व्यंग, साहित्य की नई किस्म थी। अमीर 'बयार' (स्वामी), मठाधीश (Monks) और पुरोहितों पर व्यंग है। 'यर्शा यर्शोविच की कहानी' मौलिक कथा है जिसमें मनुष्य मछली के रूप में है। कहानी का विषय मछलियों का मछली-संसार के स्वामी और बेईमान न्यायाधीशों के विरुद्ध संघर्ष है। 'शेम्याकिन की कचहरी की कहानी' (पन्द्रहवीं शती के बेईमान न्यायाधीश शेम्याकिन के नाम पर) अमीर आदमियों की बेईमानी और रिश्वत पर व्यंग है।

सत्रहवीं शती में सबसे पहले पद्यबद्ध नाट्य-साहित्य सामने आया। पहला रंगमंच ज़ार के परिवार और दरबार के लिये इसी शताब्दी के उत्तरार्ध में स्थापित हुआ; पहले रूसी नाटक न थे, और अनूदित नाटकों का अभिनय होता था। सबसे पहला रूसी नाटककार सीमियन पलोत्स्की (जो संन्यासी-Monk-था) श्वेत रूस (ब्येते रूस) से मास्को आया। वह उस युग का अत्यन्त प्रतिभाशाली लेखक और सत्रहवीं शती का सबसे बड़ा कवि था। उसका सबसे प्रसिद्ध नाटक 'बहुव्ययी पुत्र' (Comedy of Prodigal Son) है। उसने बहुत बड़े परिमाण में धार्मिक तथा अन्य कविताएँ भी लिखीं।

अब हम साहित्य की सत्रहवीं शती तक की उन्नति का अत्यन्त संक्षिप्त उल्लेख करते हैं:—

(१) साहित्य चर्च के दृष्टिकोण के प्रभाव से मुक्त हो गया, और उसका रूप ऐहिक हो गया।

(२) यथार्थता की ओर यह आगे बढ़ा और इसने सामान्य मनुष्य और प्रतिदिन के वातावरण के बीच उसकी मनस्थिति का सच्चा चित्रण करना सीख लिया।

(३) इसने साहित्य के विविध रूपों को—जीवनी से लेकर व्यंग तक परिमार्जित कर लिया था जिससे साहित्यिक रचनाओं में विविधता आ सकी।

(४) साहित्यिक भाषा जन सामान्य की जीवित भाषा के निकट आने में सफल हो सकी।

ये सब प्रवृत्तियाँ आनेवाली शताब्दियों में और भी तेजी और व्यापकता से विकसित हुई, इस प्रकार प्राचीन साहित्य नवीन से सर्वथा भिन्न या अलग नहीं है। प्राचीन साहित्य के विषय व्यक्तित्व (Figures) और विचारों का आधुनिक लेखकों ने प्रायः उपयोग किया—जैसे पुश्किन लेरमन्तोव, तुर्गेन्येव, त्येस्कोव, ब्लॉक आदि। इसके साथ-साथ प्रसिद्ध चित्रकार और संगीतकारों को भी प्राचीन साहित्य के विषयों से प्रेरणा मिली है—बरोदिन का 'प्रिंस ईगर का ऑपेरा', रिम्स्की कार्सिकोफ का 'कित्येज़ नगर की कहानी', प्रकोफियेव का कन्ताला, 'अलेक्जेण्टर न्येव्स्की', शपोरिन के 'कुलीकोव के क्षेत्र में'—आदि।

अठारहवीं शताब्दी

रूस के इतिहास में अठारहवीं शताब्दी का आरम्भ विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है, पीटर महान् के राजत्वकाल में रूसी साम्राज्य की सीमा बाल्टिक समुद्र से प्रशान्त सागर तक फैल गई। नये उद्योग, आर्थिक और सांस्कृतिक सुधार, शिक्षा की नई व्यवस्था और उच्च कोटि की सेना तथा जहाजी बेड़े के निर्माण ने रूस को योरुपीय देशों के बीच उच्च स्थान पर प्रतिष्ठित कर दिया। यद्यपि इस शासन ने किसानों की बलि देकर जमींदार और व्यापारी वर्ग को शक्तिसम्पन्न बनाया फिर भी यह उन्नति का समय था—राष्ट्र की शक्ति बढ़ी, पश्चिमी योरप से सम्पर्क शुरू हुआ, आधुनिक विज्ञान, नये आविष्कार और नये विचार फैलने लगे। ज्ञान और साहित्य स्पष्ट रूप से ऐहिक बना, पढ़े-लिखे रूसी और व्यापारी विदेशों की यात्रा को चले, और विदेशी विद्वान्, इञ्जीनियर और कलाकारों को रूस में काम करने और बसने को प्रोत्साहित किया गया, किताबों का छपना शीघ्रता से बढ़ा और पाठ्य-पुस्तकों की ओर विशेष ध्यान दिया गया, जिनका शुरू-शुरू में योरुपीय भाषाओं से अनुवाद ही हुआ। इस समय से साहित्यिक भाषा 'चर्चस्लेवानिक' न रही और वह बोलचाल की भाषा के अधिकाधिक निकट आई। वर्णमाला को सरल बनाने की योजना इस समय के मुख्य सुधारों में है।

इस शताब्दी के आरम्भिक वर्षों में थोड़े से कवि (किन्तु कोई बड़े कलाकार नहीं) हुए, किन्तु बहुत से प्रतिभाशाली पत्रकारों ने सामयिक समस्याओं पर लिखा, पीटर महान् के सुधारों से अनुप्राणित कन्तेमीर (१७०८ से १७४४) इस समय का प्रथम प्रमुख लेखक है जो अपने व्यंगात्मक पद्यों के लिए प्रसिद्ध है और जिससे आधुनिक रूसी साहित्य का आरम्भ माना जाता है। फिर भी इस शताब्दी का सबसे बड़ा लेखक मिखेल वसील्येविच लमोन्सोफ (१७११-१७६५) है।

'मिखेल वसील्येविच लमोन्सोफ'

यह इतना बड़ा और गम्भीर विद्वान् था कि पुश्किन उसे 'अपना प्रथम विश्वविद्यालय' कहता था और बेलेन्स्की ने उसे 'रूसी साहित्य का पिता' और 'रूसी साहित्य का पीटर महान्' कहा। उत्तर के स्वतन्त्र किसान और मछुओं के बीच पैदा होकर और ऐसे प्रदेश में पलने के कारण जहाँ दासता कभी नहीं रही, और जहाँ के लोगों का विदेशी सौदागरों से सीधा व्यापारिक सम्पर्क था, और

जिनका प्राचीन मौखिक काव्य और जनता के प्रबन्ध-काव्य 'बिलीना' की परम्परा से सजीव सम्बन्ध था। उसने अपने बुद्धि-बल से उच्चतम सम्मान का पद प्राप्त किया। वह पहला रूसी था जो शाही अकेडेमी (Imperial Academy of Seience) में प्रोफ़ेसर बनाया गया। वह मास्को विद्यालय के संस्थापकों में से एक था, उसके विविध कार्यों में 'प्राकृतिक विज्ञान और आरोपित शिल्पशास्त्र' (Natural Science and Applied Technology) के आविष्कार और गणित की देन भी सम्मिलित हैं। उसकी साहित्यिक सेवाओं में रूसी भाषा का सर्वप्रथम आधुनिक अध्ययन, व्याकरण के विषय पर विख्यात पुस्तक, भाषा और शैली तथा वैज्ञानिक और पारिभाषिक (टेकनिकल) शब्दकोष की समस्याओं पर सैद्धान्तिक रचनाएँ हैं। उसने छन्दों के विषय में भी लिखा और मौखिक काव्य तथा सजीव भाषा के अध्ययन से प्रभावित होने के कारण उसने वर्णिक छन्दों के स्थान पर, जिनका कि लिखित साहित्य में पहले आधिपत्य था, मात्रिक छन्द चलाए। उसकी अपनी साहित्यिक रचनाओं में मुक्तक गीत, कथाएँ, गीत, व्यंग और विशेष रूप से शास्त्रविधायिनी (क्लासिकल) शैली में लिखे हुए 'ओड्स' (Odes) सम्मिलित हैं। बड़ी-बड़ी घटनाएँ, व्यक्ति, देशभक्ति तथा धार्मिक विषयों के साथ-साथ वैज्ञानिक शिक्षाएँ, आविष्कार, ज्ञान के सिद्धान्त और रूस का उज्ज्वल भविष्य, 'ओड' के विषय हैं।

अठारहवीं शताब्दी में उच्चवंशों के अधिकार (अरिस्टोक्रैसी) तथा पद और भी दृढ़ किये गये। कैथरीन के समय में (१७६२-९६) वे राष्ट्र की नौकरी के नियम और कर से मुक्त किये गये और साधारण न्यायालयों में उनका विचार नहीं किया जा सकता था। इसी के अनुपात से दासों की दशा बिगड़ती गई। उन पर अत्याचार होता। उन पर मालिकों की निरंकुश इच्छा का राज्य था और व्यवहार-रूप में कोई नियम उनकी रक्षा न करता था। इनमें से अधिकांश अनुदार रईसों का जीवन अधिकाधिक विलासमय, खोखला और संस्कृतिविहीन होता गया। यह बादशाह और प्रिय दरबारियों की असीम निरंकुशता का जमाना था। फिर भी बुद्धिमान् उच्चवर्ग (Nobility) के बीच प्रगतिशील विरोध था, जिसकी अभिव्यक्ति इस शती के उत्तरार्ध से निकलनेवाले व्यंगात्मक पत्रों में होने लगी। जनता का असन्तोष एमेलियन पुगाचोव (१७७३-७५) द्वारा संगठित किसान-युद्ध में अपनी चरम सीमा को पहुँच गया।

साहित्य में यह समय शास्त्रवाद (क्लासिसिज्म) के पूर्ण विकास का है जो कि योरप की सत्रहवीं शती के शास्त्रवाद की सामान्य विशिष्टताओं से युक्त है। यह (शास्त्रवाद) अठारहवीं शती की अपनी (टिपिकल) उपज है जो एक ओर तो निरंकुश एकाधिपत्य और दूसरी ओर पुनरुत्थान (Ranaissance) के सांस्कृतिक

[illegible] और [illegible] की [illegible] से [illegible] हुआ। अपनी उदात्त [illegible], [illegible] और [illegible] की रीति, निश्चित और अपरिवर्तनीय [illegible] आदर्श [illegible] रूप में [illegible] है। [illegible] और [illegible] ([illegible]) [illegible] नाटक, दुखान्त नाटक, प्रबन्ध-काव्य, [illegible] प्राचीन [illegible] ([illegible]) [illegible]। [illegible] अनुकरण और [illegible] ([illegible]) [illegible]। इस [illegible] (फार्मल) [illegible] का [illegible] ([illegible]) और [illegible] प्राचीन साहित्य में [illegible]।

[illegible] की [illegible] अनुकरण [illegible] और [illegible] करने [illegible] सुमारोकोव (१७१८-१७७७) था, [illegible] के लिए [illegible] था और जिसका नाम रूसी रंगमंच [illegible] के साथ जुड़ा है।

[illegible] फ्रांस के [illegible] प्रभाव से शास्त्रवाद के साथ-साथ ज्ञानशील और [illegible] विचारों का भी प्रभाव पड़ा। वाल्तेयर, दिदेरो, मान्तेस्क्यू, रूसो जैसे [illegible] विचारकों की रचनाएँ शिक्षित व्यक्तियों के प्रगतिशील वर्ग की अच्छी [illegible] थीं। फिर भी रूस में शास्त्रवाद की अभिव्यक्ति अपनी निजी और [illegible] थी और इसके सभी [illegible] अधिकतर प्रगतिशील विचारों के व्यक्ति थे। इनमें से बहुतों ने दास-प्रथा और जमींदारों तथा गुलाम के मालिकों के [illegible] का विरोध किया और जनता के प्रति उनके कर्तव्यों की बात चलाई। [illegible] की अपेक्षा इस साहित्य में यथार्थ पक्ष भी अधिक प्रबल या स्पष्ट है, [illegible] शास्त्रीय नियमों को अपने अनुरूप बनाने, बोलचाल की भाषा तथा राष्ट्रीय और लोकप्रिय प्रतीक (Images) काव्य-उपमान या दृश्यों के समावेश की [illegible] प्रवृत्ति है।

इस युग के लेखकों में दर्जाविन (१७४३-१८१६) का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। पुश्किन से पूर्व का सबसे बड़ा कवि यही माना जाता है। इसके 'ओड' (Ode) और मुक्तक गीतों के विषय तत्कालीन राजनीतिक, नैतिक तथा सांस्कृतिक समस्याएँ हैं। उसका दावा है कि मैं "सबसे पहला लेखक हूँ जिसने बादशाहों से सच को मुस्कुराहट के साथ कहने की हिम्मत की।"

फानवीज़िन (१७४५–१७९२)

अठारहवीं शती का प्रमुख नाटककार है। उसके सुखांत नाटक 'नाबालिग' (किन्तु बुद्धू या बेवकूफ) का यथार्थवादी नाटकों के इतिहास में विशिष्ट स्थान है। इसका मुख्य विषय है युवकों की शिक्षा, यह उच्चवंश (Nobility) के रंग-ढंग और नैतिकता की हँसी उड़ाता है और दास रखने की क्रूर प्रथा की निन्दा करता है। इसमें गाँव के रईसों के अशिष्ट व्यवहार और उनकी शिक्षा के अभाव पर व्यंग है और किसानों के शोषण (जिससे कि किसानों के विद्रोह हुए) की भर्त्सना है। मुफस्सिल के एक कुटुम्ब के बेवकूफ लड़के की शादी के चारों ओर चलनेवाले चक्र से इस नाटक की कथावस्तु गुम्फित है। वर्गपात्र (Type Character) के रूप में साहित्य और समाज दोनों में पाए जानेवाले इस पात्र का नाम मित्रोफनुस्का अत्यन्त परिचित है। इस नाटक का नाम ही 'न्येदोरोस्ल', जो कि नाबालिग के लिये सरकारी तौर पर प्रयुक्त होता है, नये अर्थ से युक्त हो गया और जी उबानेवाले बेवकूफ या बुद्धू का पर्याय बन गया। यद्यपि यह कृति शास्त्रविधायिनी (क्लासिकल) परम्परा में आती है फिर भी यह शास्त्रीय भावना से दूर है, इसकी हँसी में गम्भीर एवं विषाद (Tragic) के क्षण भी मिले हैं, इसके पात्र किसी गुण या दोष के प्रतीक मात्र और एकांगी न होकर गुम्फित व्यक्तित्व वाले हैं। यद्यपि इसमें अच्छे और बुरे की विरोधात्मक तुलना (Contrast) का सिद्धान्त वर्तमान है। वस्तुस्थिति का आदर्शात्मक चित्रण न कर मालिकों की क्रूरता और दासों की दयनीय दशा को बड़े जोरदार ढंग से दिखाया गया है। दास और नौकर आदि अप्रधान पात्र, जो कि यद्यपि निष्क्रिय और उदासीन रहते हैं, ऐसे गुणों से युक्त दिखाए गए हैं जिनसे कि उनके मालिकों की बुराइयाँ और भी निखर उठती हैं। संवाद और भाषा में यथार्थवाद की विशिष्टता है। इस प्रकार के नाटक की रचना में, जो कि विनोद, वाक्यपटुता और हँसी से भरा है, जिसका उद्देश्य गंभीर है और जो कि सामाजिक और नैतिक (Ethical) समस्याओं के सुलझाव में लगा है, फानवीज़िन शास्त्रवाद (Classicism) के इस सिद्धान्त से दूर जा पड़ता है कि सुखांत नाटक का उद्देश्य मनोरंजन मात्र है। फानवीज़िन के हृदय में होनेवाले शास्त्रवाद और यथार्थवाद के संघर्ष में यथार्थवाद की जीत हुई। गोर्की रूसी साहित्य में फानवीज़िन के महत्व को 'यथार्थवाद का संस्थापक' कहकर प्रकट करता है।

रदीश्चेव (१७४९–१८०२)

यह पहला लेखक है जिसने कि भौतिकवाद के सिद्धान्तों को रूसी परिस्थिति

पर घटाया और इस क्रांतिकारी निष्कर्ष पर पहुँचा कि निरंकुशता के विरुद्ध संघर्ष आवश्यक है। उसकी विख्यात पुस्तक 'पीटर्सवर्ग से मास्को की यात्रा' में दास-प्रथा की क्रूरताओं का वर्णन है और सुधार की योजनाएँ हैं। इसमें केवल प्रभावपूर्ण उद्घाटन और निन्दा ही नहीं है प्रत्युत कटिबद्ध होने का आह्वान भी है। यद्यपि प्रथम रूसी क्रांतिकारी लेखक की यह पुस्तक सेंसर द्वारा बहुत दिनों तक दबी रही फिर भी इसने अपने समय और उसके बाद की प्रगतिशील लेखकों की पीढ़ियों को बड़ी प्रेरणा दी। बचपन से दर्बार में किंकर (Page) के लिए शिक्षित होने से और बाद में विदेश के लेपज़िक विश्वविद्यालय में अध्ययन के लिए भेजे जाने के कारण रदीश्चेव बहुत वर्षों तक बड़े सरकारी पदों पर रहा। उसके क्रियाकलाप का आरम्भ उस समय होता है जब कि केथरीन द्वितीय को अपने शुरू के उदार (लिबरल) सुधारों के लिए पछतावा शुरू हो गया था। सन् १७७३ के कृषक-विद्रोह के बाद से कठोर दमन और प्रतिक्रिया का आरम्भ हो गया था। रदीश्चेव के विचार बहुत से लेख, अनुवाद और छोटे निबन्धों में प्रकट हुए जिनमें से कुछ सम्राज्ञी की आज्ञा से १७९० में जला दिये गये। उसे अपनी प्रधान पुस्तक को पूरा करने में बीस वर्ष लगे और वह १७८९ (फ्रांस की क्रांति के वर्ष) में पूरी हुई। इसके छपने का कोई उपाय न देखकर रदीश्चेव ने अपना प्रेस लिया और १७९० में साढ़े छः सौ प्रतियाँ छापीं। वह फौरन गिरफ्तार कर लिया गया। सेनेट ने मौत की सजा दी लेकिन वह बाद में घटाकर दस साल के साइबेरिया प्रवास में बदल दी गई। १७९६ में सम्राज्ञी की मृत्यु पर चार वर्ष और घट गये और उसे रूस लौटने किन्तु राजधानी से बाहर और पुलिस की निगरानी में रहने की आज्ञा मिली। १८०१ में अलेक्जेंडर प्रथम के राज्याभिषेक पर वह फिर से बहाल हो गया और नियम- (Law) सुधार की योजना में नियुक्त किया गया। किन्तु उसके विचार अधिकारियों को मान्य न हो सके और वह एकाकी स्वप्न देखनेवाला ही रहा। उसके जीवन के अन्तिम वर्ष निराशा और आर्थिक कठिनाइयों में बीते। दूसरी बार फिर देशनिकाले की सम्भावना उपस्थित होने पर उसने १८०२ में ज़हर खा लिया। यह 'यात्रा' केवल उसकी हिम्मत का ही निदर्शन नहीं है, प्रत्युत उसके विचारों की गम्भीरता, मानवता की भावना, गाँव के दृश्य और तत्कालीन सामाजिक जीवन के सजीव चित्रण के लिए अपूर्व है।

भावुकतावाद (Sentimentalism)

सामन्तशाही (Feudalism) के अंतिम दिनों में, योरुप में मध्य वर्ग के आविर्भाव को साहित्य में अभिव्यक्ति मिली। दरबारी साहित्य से पृथक्, इस

उन्नीसवीं शताब्दी

सामाजिक आन्दोलन, साहित्य, उन्नीसवीं शती का प्रथम चरण

उन्नीसवीं शती के प्रथम चरण से रूस की सामाजिक अवस्था बड़ी जटिल और अपने ढंग की निराली थी। सन् १८०१ में अलेक्ज़ेन्डर प्रथम रूस के सिंहासन पर बैठा। पाल प्रथम के चार वर्ष के त्रस्त और निरंकुश शासन के बाद अलेक्ज़ेंडर प्रथम के राज्याभिषेक का रूसी जनता ने नयी आशाओं के साथ स्वागत किया। अलेक्ज़ेंडर जिसकी शिक्षा स्विस-रिपब्लिकन ला हार्प के निरीक्षण में हुई थी अपनी उदार प्रवृत्तियों के लिये विख्यात था। राजनीति के क्षेत्र में अलेक्ज़ेंडर ने सचमुच कुछ सुधारों का श्रीगणेश किया। कैथरीन और पाल के समय के १२००० निर्वासितों को वापस बुलाना, रदीश्च्येव को शासन में लगाना, योरप में स्वच्छंद यात्रा की सुविधा, व्यक्तिगत प्रेस रखने की आज्ञा, भूमिरहित किसानों के विक्रय के विज्ञापन की मनाही, 'स्वतन्त्र किसान' (Free Peasants) के बारे में कानून, जमींदारों को पूरे गाँव के किसानों को स्वतन्त्र करने का अधिकार, नयी युनिवर्सिटी और स्कूलों की स्थापना, रूसी में 'महाराज की आज्ञा से' मांटेस्क्यू, ऐडम स्मिथ, बेन्थम आदि का रूसी में अनुवाद—इन सबसे समाज में नई आशाओं का संचार हुआ और इस अफवाह को दृढ़ता मिली कि किसी बड़े सुधार की तैयारी हो रही है। यह बात मशहूर थी कि अलेक्ज़ेंडर के उदार लिबरल मित्रों की एक कमेटी बनी थी जिसने विधान की समस्या और गुलामी के नियमों (Serf Laws) पर वादविवाद किया। दास-प्रथा के उन्मूलन की पूरी पूरी योजनाएँ भी गवर्नमेंट के विचार के लिये भेजी गईं। अलेक्ज़ेंडर का सबसे महत्वपूर्ण कार्य एम. एम. स्परांस्की को शासन से संयुक्त करना था। उसे शासन की सुधार-योजना बनाने का कार्य सौंपा गया अर्थात् रूसी शासन का प्रथम विधान बनाने का। लिबरल जागृति के इस वातावरण का सजीव चित्र करमज़ीन की डायरी में इन शब्दों में है—"सब सो रहे हैं और विधान का स्वप्न देख रहे हैं।"

यह उन्नीसवीं शती के आरम्भ की सामाजिक स्थिति थी, ज़ब कि नई घटनाओं का तूफ़ान-सा देश में फट पड़ा। सन् १८०५ में नैपोलियन के विरुद्ध रूसी युद्ध छिड़ा और फिर एक के बाद दूसरी अत्यन्त महत्वपूर्ण घटनाएँ घटीं—नेपोलियन का मास्को पर आक्रमण, फ्रेंच सेना की पराजय, योरप में रूसी सेना की विजय और पेरिस में प्रवेश और नेपोलियन का पतन, फ्रेंच के ऊपर विजय ने रूस को

गर्व से भर दिया और उसकी शक्ति का भान दिया । देश प्रजामान्य देशभक्ति की [illegible] ।

इस बीच [illegible] देश को [illegible] वर्ष तक (१८०५-१८१५) [illegible] युद्ध, व्यवस्था और विनाश के बीच बीता । उससे केवल शिक्षा की उन्नति ही न हुई, उसका व्यक्तित्व भी बदल गया, सरकार की लिबरल नीति समाप्त हो गई ।

[illegible] नेपोलियन पर विजय [illegible] गया । इस विजय ने उसे कट्टर धार्मिक अंधों के हाथ का खेल बना दिया । वह अपने को योरप का रक्षक समझने लगा और क्रांति को [illegible] क्रांति का नाशक या शत्रु मानने लगा और इस प्रकार प्रतिक्रियावादी हो गया । अलेक्जेंडर जिसने पहले यह कहा था कि 'मैं रिपब्लिकन ही [illegible] और मरूँगा' अब 'पहले की गलतियों' पर पछताने लगा । (अर्थात् लिबरलिज्म) और राजनीति की बिल्कुल दिशा परिवर्तित कर दी । इन वर्षों में जब कि उदारवादी या परिवर्तनवादी बना ऊँचा चढ़ा हुआ [illegible] स्वभाव में उसके प्राण ठंडा हो गया, अब अपरिवर्तनवादियों का सिद्धान्त वाक्य था—'ईश्वर [illegible], क्रांति के गर्भ से युद्ध' और वे रूस के भीतर जनक्रांति के संकट का शोर मचाने लगे ।

स्पेरान्स्की का सन् १८१२ में निर्वासन बढ़ती हुई प्रतिक्रिया का पहला संकेत था । अपने काल के साथियों को हटाकर अलेक्जेंडर ने देश को दो नये प्रिय पात्रों को सौंप दिया । युद्ध-सचिव अरकचेयेव और चर्च कौंसिल के सभापति और शिक्षा-सचिव गलीत्सिन, ये दोनों शासन की प्रतिक्रिया के प्रतीक बन गए । क्रांति के गर्भ के विरुद्ध युद्ध धीरे धीरे स्वच्छंद विचार के विरुद्ध जिहाद बन गया । दास-प्रथा के उन्मूलन और शासन-विधान की योजनाएँ दफना दी गईं । साहित्य पर अत्याचार (Persecution) शुरू हुआ और सेंसर के नये कानून बने । प्रतिक्रियावाद विजयी हुआ ।

किन्तु एक महत्वपूर्ण कारण ऐसा था कि जिससे इस प्रतिक्रिया के समय के बीच भी सामाजिक जागृति बनी रही । नेपोलियानिक युद्ध ने जिससे कि रूस की देशभक्ति और जातीय भावना जाग्रत हुई रूसी सेना को योरप की व्यवस्था से परिचित करा दिया । योरप के इस परिचय ने पेरिस में प्रवेश करनेवाली रूसी सेना को यह स्पष्ट बता दिया कि हम सांस्कृतिक और राजनीतिक बातों में बहुत पिछड़ा हुआ है । देश के राजनीतिक और सामाजिक जीवन के सभी क्षेत्रों में गतिरोध (Stagnation) था । सरकार के सभी सुधार दास-कानून की चट्टान से टकराकर चूर होने को थे । सुधार की अनिवार्यता स्पष्ट थी, किन्तु प्रतिक्रियावाद बराबर गहरा होता जा रहा था । इन सबसे विरोध की भावना या प्रवृत्तियों के

बढ़ने को अच्छा अवसर या अच्छी जमीन मिली। ये प्रवृत्तियाँ सबसे पहले सेना के रक्षक या गार्ड के उन अफसरों में जो पेरिस और योरुप हो आए थे फैलीं। राजधानी के अफसरों के बीच १८१६ में सेंट पीटर्सबर्ग में 'रक्षा-समिति' बनी। १८२१ में इसके बंद हो जाने पर 'उत्तरी और दक्खिनी खुफिया समितियाँ' बनीं। इस प्रकार प्रसिद्ध 'दिसम्बर के षड्यन्त्र' का आन्दोलन बढ़ा।

दिसम्बर के इस षड्यन्त्र में न तो राजनीतिक विधान-संबंधी कोई सम्मिलित एकता थी और न पुरानी व्यवस्था के विरुद्ध लड़ने के साधनों में एकमत था। इनमें योग देनेवालों में नियंत्रित बादशाही के समर्थक थे (उत्तरी सभा जिसका नेता निकीता मुराव्योफ था) और रूस के लिये प्रजातन्त्र के समर्थक भी थे जिससे ज़ार-परिवार का विनाश आवश्यक था (दक्खिनी सभा जिसका नेता पेस्टेल था)। किन्तु इन सबमें निरंकुशता और दास-कानून के विरुद्ध घृणा थी और इसमें सब एकमत थे। उच्च देशभक्ति, देश की भलाई और स्वतन्त्रता के विचारों की प्रचार-इच्छा से ये सब एक थे। इन खुफिया सभाओं और सरकार के बीच का संघर्ष बढ़ा और अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया। यह जोशीला ऐतिहासिक संघर्ष इस शती के प्रथम चरण के अन्त में अत्यन्त उत्कट हो गया, इसकी गूँज (सेंसर द्वारा) अनुमोदित और गैरकानूनी हस्तलिखित साहित्य में मिलती है।

साहित्यिक भाषा के सुधार का संघर्ष

उन्नीसवीं शती के प्रथम चरण के राजनीतिक और सामाजिक विचारों की जागृति के साथ साथ देश के साहित्यिक जीवन में भी जागरण हुआ। रूस में नये पत्र निकले—'व्येस्निक यवरोप्ये' (Herald of Europe) (करमज़ीन ने इसे चलाया और बहुत समय तक बड़ा प्रसिद्ध पत्र रहा), 'मास्कोव्सकी म्येरकुरी' (Moscow Mercury), 'रुस्की व्येस्निक' (Russian Herald), 'जूनी-लसिन ओत्यच्येस्त्वा' (Son of the Fatherland), 'पोलात्न्या ज्वेद्ज़ा रिल्येक' आदि। राजधानी में बहुत-सी सभा-समितियाँ बनीं, जिनमें साहित्य, कला और राजनीति की समस्या पर वाद-विवाद होता था। इस प्रकार विचारों का संघर्ष साहित्य-क्षेत्र में डाल दिया गया। करमज़ीन द्वारा प्रवृत्त साहित्यिक भाषा के सुधार में यह संघर्ष विशेष रूप से प्रकट हुआ। करमज़ीन का यह सुधार एक प्रकार से भाषा को ऊँचे समाज की बोलचाल की भाषा के निकटतर लाना था। करमज़ीन—जिसने कि सामान्य साहित्यिक भाषा की ओर कदम बढ़ाया था—के विचारों का अस्वीकार और उत्कट विरोध ऊँचे समाज के अपरिवर्त्तनवादियों की ओर से हुआ। करमज़ीन की नव वर्ग की समझ में आनेवाली भाषा के जन्म की इच्छा संकीर्ण वर्गीय लेखकों को (सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्र के बीच) समता

की रूसी गद्य प्रवृत्ति और इसका प्रतिनिधित्व हुई। एडमिरल ए० एस० शिशकोव इन लोगों और पुराने लेखकों का नेता था।

१८०३ में शिशकोव ने 'प्राचीन और नवीन रूसी शैली का विश्लेषण' लिखा। इसमें उसने कहा कि लिखित भाषा को बातचीत की भाषा बनाने की इच्छा जिस नवीन फ्रांसीसी लोगों की इच्छा में मिलती है जो कि समझते हैं कि रूसी शब्दों के स्थानों को बाहर निकाला जा सकता है।' शिशकोव ने कहा कि रूसी साहित्य की भाषा चर्च स्लोवानिक ही होनी चाहिए। साहित्यिक भाषा में विदेशी शब्दों के समावेश को उसने भाषा को नष्ट करने का मूल माना। रूसी भाषा की शुद्धि को वह सबसे बड़ा लक्ष्य मानता था और उसने विदेशी शब्दों को रूसी के शब्दों से बदलने और गढ़ने का प्रस्ताव किया। शिशकोव का साहित्यिक केन्द्र 'रूसी साहित्य के प्रेमियों की वार्तालाप सभा' थी जो सन् १८११ में स्थापित हुई। पहले इस सभा ने करमज़ीन का विरोध किया, लेकिन १८१५ में वी० ए० जुकोव्स्की इसका शिकार बना। जुकोव्स्की की लेखनी रचनाओं में उनको करमज़ीन के सिद्धान्तों का व्यावहारिक विकास दिखाई पड़ा। पश्चिमी (योरपीय) साहित्य से जुकोव्स्की की रुचि और इसकी रचनाओं में अद्भुत और अलौकिक के प्रति प्रेम से ये चिंतित हो उठे।

शिशकोव के अनुयायियों के इस आक्रमण ने जुकोव्स्की के मित्रों को साहित्यिक सभा बनाने को प्रेरित किया। इस प्रकार विख्यात 'अरजमस' का जन्म हुआ जिसका नाम अरजमस नगर के ऊपर रखा गया। पी० ए० व्याजेम्सकी, के० बात्युश्कोव, वी० एल० पुश्किन, ए० एस० पुश्किन, ए० आई० तुर्गेन्येव, एन० आई० तुर्गेन्येव, ब्लूदोव, दशकोव इसके सभासद बने। अरजमस की सबसे बड़ी सेवा 'बेसेदा' की प्रतिक्रियावादी प्रवृत्ति का विरोध था और उदार शिक्षा तथा साहित्य के स्वच्छंद विकास की सहायता थी। यह स्वतन्त्र प्रगतिशील लेखकों का वर्ग था जो कि दास-प्रथा के प्रत्येक रूप के विरुद्ध था। 'बेसेदा' १८१६ में और 'अरजमस' १८१८ में बंद हो गई। इसके साथ रूसी साहित्य का करमज़ीन युग भी समाप्त होता है जब कि भावुकता के स्थान पर रोमांटिसिज्म और यथार्थवाद का प्रवेश होता है।

रोमांटिसिज्म और यथार्थवाद

उन्नीसवीं शती के दूसरे दशक के अंत में रूसी साहित्य में नई प्रवृत्ति दिखाई पड़ी। इसका नेता जुकोव्स्की था और इसे रोमांटिसिज्म का नाम दिया गया।

रोमांटिसिज्म वह साहित्यिक प्रवृत्ति है जो योरप में उन्नीसवीं शती के तीस

वर्ष तक व्यापक रही। यह शब्द 'रोमान' से—जिसका अर्थ उपन्यास है—बना है।

भावुकतावाद (Sentimentalism) के समान रोमांटिसिज्म शास्त्रवाद (Classicism) के विरुद्ध प्रतिक्रिया थी। सामाजिक क्षेत्र में नई शक्ति अर्थात् मध्यम वर्ग के प्रादुर्भाव से निस्सृत नये विचारों का अत्यन्त गुम्फित और जटिल रूप था। इसमें विरोधी भावना का समावेश था। इनका मूल एक ही था। वर्त्तमान से असंतोष, वर्त्तमान समाज की योजना में असामंजस्य की भावना, अपने चारों ओर फैली हुई वास्तविकता में खुशी न पाकर मनुष्य ने इसे भविष्य के स्वप्न या अतीत की स्मृति में ढूँढ़ने की कोशिश की। इससे रोमांटिसिज्म की दो दिशाएँ सामने आईं।

प्रगतिशील या उद्वेगपूर्ण रोमांटिसिज्म

इसकी विशेषता है नये विचारों से सहानुभूति और भविष्य की ओर जाने या आगे बढ़ने की इच्छा। इसका ध्यान नायक के उन अनुभवों की ओर है जो वास्तविकता के संघर्ष से उत्पन्न हुए हैं। यह संघर्ष नायक के सामने से कभी-कभी जीवन की भ्रान्त धारणा (Disillusionment) का पर्दा हटाता है और उसमें निराशावाद या विषाद की भावना भरता है। इसकी अभिव्यक्ति इंग्लैंड में बायरन, फ्रांस में विक्टर ह्यूगो और रूस में पुश्किन की आरम्भिक रचनाओं और लरमन्तोफ की रचनाओं में मिलती है।

स्वप्निल या प्रशांत रोमांटिसिज्म

इसकी विशेषता वर्त्तमान वास्तविकता से प्राचीन दुनिया के रीति-रिवाजों में पलायन है। रोमांटिक लेखकों ने इसे प्राचीनता की रंगीनी दी। योरप में इसका प्रतिनिधि शतोब्रियाँ और रूस में जुकोव्स्की है।

रोमांटिसिज्म साहित्य की अत्यन्त जटिल प्रवृत्ति है जिसकी विविध शाखा-प्रशाखाएँ और रूप हैं। रोमांटिक शैली की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं—

(१) जीवन के मूल्यांकन में अन्तर्मुखी प्रवृत्ति और व्यक्तिवाद का रुख (Mood)। अन्तर्मुखी प्रवृत्ति के साथ कवि के संसार-सम्बन्धी व्यक्तिगत अनुभवों का साथ अनिवार्य है। 'भावुकता' (Cult of Sentiments) और व्यक्तिवाद 'नायकत्व' की ओर ले जाता है। और साहित्य में नायक पर जोर देता है।

(२) कलाकार की प्रतिभा की स्वतन्त्रता की घोषणा और उन नियमों की अवहेलना जो कलाकार के विचारों और कल्पना को बाँधते हैं।

(३) असामान्य, [illegible] और रहस्यपूर्ण की ओर रुचि। रोमांटिक लेखकों की 'विदेशीयता' (Exotic) की ओर बढ़ी चढ़ी रुचि का कारण इसमें भी कुछ-

कुछ समझा जाता है। [Exotic साधारणतः में 'विदेशी' जैसे पूर्वी देशों का निराला, और साहित्यिक अर्थ में असामान्य और चमत्कारक वाली]

(४) जनता की कलाओं और कथा में नयी नयी रुचि, जनता की रचनाओं का संग्रह, और साहित्य में [illegible] रोमांटिकों की उनमें रुचि, जिसमें वे अपने लिए सामग्री और प्रेरणा पाते हैं।

(५) नये साहित्यिक प्रकार का उद्योग और आविष्कार जिसमें कवि के व्यक्तिगत भावों के [illegible] का [illegible] है। उदाहरणतः मुक्तक [illegible], [illegible], [illegible] गीत।

(६) भाषा की [illegible] में शैली की परिवर्तनता और शब्दों की सजावट और [illegible] आदि में [illegible] होती है।

[illegible] और विचारों की बाढ़ के अंत—जिसने कि योरुप को अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में हिला दिया—रोमांटिसिज्म के प्रसार या [illegible] भावों की अभिव्यक्ति की जा सकती थी। [illegible] और भाषा में—सामाजिक व्यवस्था पर निर्भर—रोमांटिसिज्म [illegible]।

किन्तु उन्नीसवीं सदी के पूर्व और तीसरे दशक तक रूसी साहित्य की प्रधान प्रवृत्ति रोमांटिसिज्म से हटकर यथार्थवाद की ओर हो गई। इस प्रवृत्ति से [illegible] होना ही था। यथार्थवाद वह साहित्यिक प्रवृत्ति है जिसका लक्ष्य जीवन का सच्चा चित्रण है। इसको समझने के लिए इसके दो पक्षों की विभिन्नता का भेद जान लेना चाहिए—अर्थात् वस्तुस्थिति का चित्रण करने वाला यथार्थवाद, और साहित्यिक प्रवृत्ति का यथार्थवाद। वास्तविकता का चित्र उपस्थित करनेवाली युक्ति के रूप में यथार्थवाद बहुत प्राचीन समय से कला का आवश्यक अंग रहा है। इलियड और ओडेसी जैसे प्राचीन काव्य में—जो कि मानव-समाज के शैशव में लिखे गये हैं—भी यह मिलता है। ईगर के गीत और अठारहवीं सदी के रूसी साहित्य में भी यह वर्तमान है। इसके अतिरिक्त वास्तविकता का चित्रण करनेवाली युक्ति के रूप में यथार्थवाद अनिवार्य रूप से रोमांटिसिज्म, शास्त्रवाद (Classicism) और भावुकतावाद (Sentimentalism) में वर्तमान है क्योंकि प्रत्येक साहित्यिक रचना के तल में वास्तविक जीवन का कुछ न कुछ सम्बन्ध है।

फिर भी साहित्यिक प्रवृत्ति के रूप में पाया जानेवाला यथार्थवाद रोमांटिसिज्म और शास्त्रवाद से तत्त्वतः भिन्न है। इस यथार्थवाद के मूल सिद्धान्त हैं—वास्तविकता के प्रति सचाई और यथार्थता (Objectivity)। ये गुण न तो शास्त्रवाद में

हैं—जो निर्णयात्मक और कोटिवादी या योजनात्मक है—और न रोमांटिसिज्म में जो भावना और कल्पना की अतिरंजना करता है।

'वास्तविकता के प्रति सचाई' के सिद्धान्त को हम कैसे समझें। इसका अर्थ वास्तविकता का कोरा अनुकरण नहीं है। यथार्थवाद कल्पना के रचनात्मक रूप या कार्य को अस्वीकार नहीं करता किन्तु उसे अवास्तविक अतिशयोक्तिपूर्ण कल्पना, (Fantasy) रहस्यवाद और झूठे आदर्शात्मक चित्रण मान्य नहीं हैं। 'वास्तविकता के प्रति सचाई' जीवन के, (भौतिक) संसार की सच्ची जानकारी की इच्छा है। एंगेल्स की परिभाषा के अनुसार सामान्य अंग और पक्ष के उद्घाटन द्वारा यह 'परिस्थिति विशेष के बीच चरित्र विशेष का चित्रण या उद्घाटन है' (Truthfulness in conveying type character in type situations)।

यथार्थवाद के इस कर्त्तव्य को इस रूप से समझ लेने से हमें इसके दूसरे सिद्धान्त बाह्यार्थता (Objectivity in telling stories) के भी ठीक-ठीक आँक लेने में सहायता मिलती है। कलात्मक रूप में यथार्थवाद पूर्णतया तभी मिलता है जब कलाकार जीवन के दृश्य (Phenomenon) को वैज्ञानिक निष्पक्षता से आँकता है। इस प्रकार यथार्थवाद वह कलात्मक उपाय, साधन या ढंग है जिसका उद्देश्य जीवन के अंग और तद्रूप (Typical) सामान्य परिस्थितियों का सच्चा और ठीक-ठीक चित्रण है और कथन में बाह्यार्थता (Objectivity) इसकी विशेषता है।

इसके साथ यह भी कह देना चाहिए कि अठारहवीं शती के अंत में यथार्थवाद में कुछ विशिष्ट प्रवृत्तियाँ दिखलाई पड़ीं जिससे कि इसमें संसार के साहित्य के बीच भी ताजगी और अपनापन आया।

यद्यपि अठारहवीं शती में फानवीजिन और रदीश्चेव जैसे लेखक और उन्नीसवीं शती के आरम्भ में क्रिलोफ़ और ग्रिबयेदोव अपनी समस्याओं को सुलझाते हुए यथार्थवाद की ओर बढ़ रहे थे फिर भी यथार्थवाद की पूर्ण विजय उन्नीसवीं शती के द्वितीय दशक में पुश्किन की विख्यात कृतियों 'येवग्येनिया अन्येगिन' और 'यगीन गद्नोफ़' से हुई।

रदीश्चेव के समय से प्रजातन्त्र की भावना रूसी साहित्य की विशेषता बन गई थी। जनता के कल्याण या लाभ पर आग्रह से इसका आविर्भाव हुआ। अठारहवीं शती में ही यह 'विद्रोह की भावना' से ओत-प्रोत था। इसने रूसी यथार्थवाद को सैद्धान्तिक, आधारभूत भावनाओं से समृद्ध बनाया, और इसे जनता की जातीयता या राष्ट्रीयता से भर दिया।

उन्नीसवीं शती में रूसी लेखकों का बाहुल्य है—'दिसेम्बरिस्ट' लेखक रिल्येव

अर्थात् नव्यशास्त्रवादी कवि और नाटककार (Neo-classic Poets and Dramatists), जिनको अठारहवीं शती के अन्त शास्त्रवाद (Classic) और ग्रीक [illegible] से प्रेरणा मिली, [illegible] प्रतिभावाले अनेक कवि हैं—किन्तु उनमें सबसे विख्यात नाम दर्जाविन, [illegible], [illegible], क्रिलाफ, ग्रिबोयेदाव और [illegible] हैं।

क्रिलोफ (१७६८–१८४४)

इवान क्रिलोफ का साहित्यिक [illegible] साठ वर्ष तक चलता रहा। [illegible] और [illegible] के [illegible] में उसका रचनाकाल कैथरीन के शासनकाल के अन्त में क्रान्तिकारी [illegible] में [illegible] पड़ा। यह समय पुगाचेव विद्रोह के [illegible] था और यह समय था जब कि [illegible] की राज्यक्रान्ति की शान्ति नष्ट करने [illegible] था। उसके रचनाकाल का सबसे महत्त्वपूर्ण युग सन् १८०६ में करीब शुरू होता है और १८१८ तक चलता है। इसके बाद उसकी कलाविदी प्रतिभा का क्रमशः ह्रास हो जाता है। वह एकेडेमी का सदस्य और प्रसिद्ध तथा सम्मानित व्यक्ति था और उसके जीवन के अन्तिम वर्ष शान्तिमय और एकतान (Monotonous) थे। ऐतिहासिक दृष्टि से उसका रचनाकाल अठारहवीं शती से आगे बढ़कर उन्नीसवीं शती के नये साहित्य में भी पहुँच जाता है।

वह चौदह वर्ष की अवस्था में पीटर्सबर्ग आया और उस समय से अपनी रचनाएँ प्रकाशकों और रंगमञ्चों को देने लगा। उन्नीस वर्ष की अवस्था तक उसने कॉमिक ऑपेरा (सुखान्त संगीत) और बहुत से करुण नाटक शास्त्रवादी (क्लासिक) शैली के अनुकरण में और कुछ सुखान्त नाटक लिख डाले थे। १७८६ में उसने अपना व्यंग पत्र निकाला जिसका नाम 'स्पिरिट मेल' था। जो प्रेत दार्शनिक मलिकुलमल्क के पानी, हवा और पाताल में रहनेवाले थे, उनसे व्यंगपूर्ण, नैतिक और आलोचनात्मक लिखा पढ़ी थी। अपने को बचाने के लिये, अपनी रक्षा के लिये उसने व्यंग को अन्योक्ति का रूप देकर उच्चवंश की रूसी नारियों में फ्रेंच के अन्धानुकरण के पागलपन, उनकी शिष्टता के अभाव, न्याय के भ्रष्टाचार, सरकारी नौकरियों की सिफारिश और दास प्रथा की खूब हँसी उड़ाई। बाद में उसने अपने साहित्यिक मित्र और रंगमंच वालों की एक कंपनी बनाई और अपना प्रेस चलाया जिसमें कि बहुत सी किताबें और व्यंग का नया पत्र 'प्रेक्षक' (Observer) निकला। उसकी इस समय की प्रकाशित रचनाओं में बहुत सी कहानियाँ और रेखाचित्र हैं। जिनमें उसकी कहानी कैब है जो कि उसकी सबसे अच्छी गद्य-कृति है। कैब अमीर, बुद्धिमान् और

शान्तिप्रिय पूर्वी शासक है। वह बुद्धिमानों की तुलना मोमबत्तियों से करता है जो एक मात्रा तक तो सुखमय प्रकाश देती हैं किन्तु उनकी बहुतायत आग लगा सकती है। वह अक्सर कहता है कि अच्छी व्यवस्था बनाए रखने के लिये बेवकूफ उतने ही जरूरी हैं जितने कि बुद्धिमान्। कहानी कैब और उसके वजीरों की यात्रा का वर्णन करती है जिसमें जनता के गोप-जीवन (Idgllic life) के बीच दुख और भूख का उद्घाटन होता है। यह स्पष्ट है कि अन्योक्ति के रूप में यह व्यंग रूस पर है। 'मृत बाबा का मर्सिया' में प्राचीन सुखमय जीवन और दास-प्रथा पर व्यंग और आक्रमण है। बाबा के रूप में पूरा वर्ग सम्मिलित है।

रदीश्चेव-संबंधी आन्दोलन के सिलसिले में उसके प्रेस की तलाशी हुई और स्वयं उस (क्रिलोफ) पर निगरानी रखी गई। थोड़े समय के लिये उसने अपना साहित्यिक काम रोक दिया और पीटर्सबर्ग छोड़कर वह कई वर्ष तक देश में भ्रमण करता रहा। थोड़े समय के लिये उसने निरादृत राजकुमार गलीत्सिन के यहाँ यूक्रेन में नौकरी कर ली। वह उसका सेक्रेटरी और शिक्षक हो गया और उसने राजकुमार के निजी रंगमञ्च के लिये कई नाटक लिखे और उनका अभिनय किया। अलेक्जेंडर प्रथम के अभिषेक के बाद भी जब कि गलीत्सिन फिर सम्मानित हुआ वह उसका सेक्रेटरी बना रहा और फिर १८०५ में यकायक मास्को आ गया। नाटकों के अभिनय के साथ साथ अब वह कथाएँ (Fables) लिखने लगा। १८०९ मे प्रकाशित उसके प्रथम संग्रह ने बहुत लोगों का ध्यान आकृष्ट किया और स्थायी ख्याति प्रदान की। जीवन के शेष वर्षों में उसने 'कथा' छोड़कर और कुछ न लिखा। मरने के पहले ही उसकी स्थायी ख्याति जन-सामान्य के बीच लोकप्रियता पर प्रतिष्ठित हो चुकी थी।

कथा (Fables) अन्योक्तिपूर्ण संक्षिप्त कहानी है, जिसमें कोई न कोई नैतिक या दूसरी शिक्षा रहती है। शास्त्रवाद (Classicism) के युग में कथा निम्नकोटि की कला मानी जाती थी जिसमें अपरिमार्जित शैली क्षम्य थी। फ्रेंच लेखक लाफान्टेन के आदर्श पर बहुत से रूसियों ने कथाएँ लिखीं। किन्तु क्रिलोफ की कथा और २०५ संक्षिप्त कविताओं की जो ख्याति हुई और (रूस में) जो उभार चढ़ा वह इस बात का प्रमाण है कि उसने इस [illegible] माध्यम का नया और मौलिक प्रयोग किया। उसकी सबसे बड़ी विशेषता जीवन अभिव्यक्ति की अद्भुत विशदता है। उसकी ऊपर से [illegible] पशु की कहानियों में गहरा मानव-समाज-विज्ञान छिपा है। [illegible] उस समय के सामाजिक, राजनीतिक, साहित्यिक और घरेलू जीवन के सभी [illegible] स्पष्ट चित्र के साथ झलक है—सम्राट्, उच्चवंश,

(Aristocracy), [illegible] (Bureaucracy), न्यायाधीश, सौदागर और [illegible] के [illegible] (Privileged) की [illegible] और [illegible] के [illegible] (Nobility) की [illegible] (Parasitism), [illegible] [illegible], [illegible] की [illegible], [illegible] की [illegible] आदि पर [illegible] है। [illegible] की [illegible] है। वह माता पिता की [illegible] [illegible] (Ignorance) के [illegible] आदि पर [illegible] करता है। [illegible] आलस्य आदि [illegible] के [illegible] में [illegible] है। [illegible] [illegible] और [illegible] में [illegible] [illegible] नहीं।

[illegible] [illegible] विचार, [illegible] और [illegible] और [illegible] के [illegible] और [illegible] (Brevity) [illegible] में [illegible] कथाओं की कला के [illegible] [illegible] और जनता की [illegible] प्रयोग करता है। कथाओं की अपने [illegible] हुआ वह कहता है कि मैंने इसे [illegible] है और इसे बच्चे और नौकर [illegible] है। [illegible] और [illegible] का प्रयोग करता है। [illegible] और [illegible] आज भी [illegible] की [illegible]।

[illegible] मुहावरों का प्रयोग करता है जिसे [illegible] की [illegible] के लिये छन्द या ध्वनि के [illegible] है।

[illegible] जा चुका है। रूसी [illegible] स्थान है। पुश्किन उसे जनता का कवि [illegible] है। [illegible] की भाँति इसकी कथाओं में व्यावहारिक [illegible], [illegible], [illegible] हास्य, जन्तुओं के प्रति अपनी स्वाभाविक [illegible] (Exactitude) और [illegible] तथा [illegible] अभिव्यक्ति की क्षमता के साथ [illegible] है। [illegible] देश में भाषा के मुहावरों और स्वर में प्रकट किया [illegible] कि अन्य भाषा के मुहावरों और प्रतीकों में अनुवाद असम्भव है। यह [illegible] की [illegible] सम्पत्ति है जिसमें लोकप्रिय रूसी भाषा का [illegible] और [illegible] प्रकट होता है। इस संबंध में क्रिलोफ के बिना पुश्किन भी अपूर्ण है। उसकी भाषा की स्वाभाविकता, सादगी और बोलचाल की

सजीवता की चर्चा (Coloquial Lightness) की तो कोई आवश्यकता ही नहीं ।"

फ्रेंच और इटालियन में इन कथाओं का बड़ी जल्दी अनुवाद हुआ और क्रिलोफ की ख्याति उसके जीवन-काल में ही सब ओर फैल गई। योरप की अधिकांश भाषाओं में उनका अनुवाद हो चुका है और इधर हाल में सोवियत् संघ की सब्ह अरूसी भाषाओं में, और अरबी, तुर्की तथा जापानी में उनका अनुवाद हुआ है ।

जुकोव्स्की (१७८३–१८५२)

जुकोव्स्की तूला प्रान्त के अमीर जमींदार का जारज (Illegitimate) पुत्र था और इसकी माँ तुर्की लड़ाई की कैदी थी । मास्को में इसकी शिक्षा हुई । जहाँ कुछ स्थिर धार्मिक विचार उसमें बने और राजनीति में वह जीवन भर अनुदार रहा । उसके शुरू के भाव और विचारों पर करमजीन के भावुकतावाद का बड़ा प्रभाव पड़ा । जब कि वह सम्बन्धियों के यहाँ शिक्षक था वह अपनी एक शिष्या से प्रेम करने लगा । किन्तु उससे विवाह न हो सका । इसका उस पर बड़ा प्रभाव पड़ा । जुकोव्स्की मुक्तक गीतों का प्रथम रूसी कवि माना जाता है जिसने प्रेमगीत और व्यक्तिगत घनिष्ठ भावना के गीतों को उच्चता प्रदान की । जुकोव्स्की के लिये जीवन और काव्य एक ही है । अंग्रेजी कवि ग्रे की एलेजी के अत्यन्त सफल अनुवाद ने जो कि करमजीन के पत्र यूरोपियन हेरल्ड (European Herald) में १८०२ में छपी—पहले ही लोगों का ध्यान उसकी ओर खींचा था । नेपोलियन के रूस के आक्रमण के समय उसके देश भक्ति के गीत अत्यन्त लोकप्रिय हुए और उनका बड़ा प्रचार हुआ । रूसी दर्बार का ध्यान उसकी ओर गया और १८२६ में उसे रूसी गद्दी के होनेवाले उत्तराधिकारी का शिक्षक नियुक्त किया गया । उसने अपने शिष्य के साथ रूस का दौरा किया और बाद में विदेश भी गया । १८४१ में उसने जर्मन चित्रकार की लड़की से विवाह किया और रूस को छोड़कर पहले ड्यूसेल्डोर्फ और बाद में फ्रंक फोर्ट में बस गया । जीवन के अन्तिम वर्षों में वह अनुवाद में लगा—जैसे नलदमयन्ती (१८४२), रुस्तमसोहराब (१८४३), ओडेसी (१८४६) । वह रूस कभी न लौटा और बाडन बाडन में सन् १८५२ में उसकी मृत्यु हुई । उसकी रचनाओं का अधिकांश अनुवाद है फिर भी वह बड़ा प्रतिभाशाली अनुवादक था । उपर्युक्त रचनाओं के अतिरिक्त उसने बहुत से जर्मन मुक्तक गीतों को चुना जिनकी भावना उसके अपने विचारों से बहुत मिलती जुलती थी—जैसे प्राचीन या

मध्यकालीन विषयों पर शिलर के गीत (Ballads), बायरन का शिलॉन का कैदी (Prisoner of Chillon), वाल्टर स्काट की कविता, करुण प्रेम, वीरता आदि के उसके अपने गीत भी प्राचीन या मध्यकालीन कथाओं के ऊपर हैं।

रूसी साहित्य में जुकोव्स्की मनुष्य की अन्यतम भावनाओं और आत्मा की खोज को अभिव्यक्ति देनेवाला प्रथम मुक्तक गीतों का कवि माना जाता है। उसके लिये 'काव्य और जीवन' एक है। अंतर-अनुभूतियों की अभिव्यक्ति में मनोवैज्ञानिक सत्य के चित्रण में उसने इस सीमा तक यथार्थवादी तत्त्व का दिग्दर्शन कराया।

उच्चकलाकार होने के कारण उसने छन्दयोजना (Verse form) को पूर्ण (Pefrect) बनाया, सुधारा और संगीत के तत्त्व (Flexibility) का समावेश किया। उसने बहुत बहुत प्रकार के छन्द, लय, तुक आदि का नवीन प्रयोग किया और इसमें वह पुश्किन और बाद के मुक्तक गीतकारों का अगुआ है। उसने स्वच्छन्द छन्द का भी प्रयोग किया। उसकी प्रक्रिया और सुधारों के बारे में बताते हुए बेलिन्स्की लिखता है कि 'जुकोव्स्की के बिना हमें पुश्किन न मिलता।'

उसके मुक्तक गीतों का विषय या तो सुदूर अतीत की स्मृति है या परलोक आशा की। (फलतः) दोनों में यथार्थ के चित्रण में उन्नयन स्वाभाविक था और उसकी जगह स्वप्न और अनियत चिंतना (Reverie) ने ले ली। इसलिये उसकी कविताओं में मूर्त्त विचारों के स्थान पर भावों की अस्पष्टता है और शान्ति का वातावरण है क्योंकि उसका उद्देश्य है कि पाठक अपने आप दृश्यों और भावों की कल्पना करे। उसके समय के आलोचक उसके बड़े प्रशंसक थे।

अलेक्जेन्डर सरग्येविच ग्रिबयेहोव (१७९५–१८२९)

ग्रिबयेहोव का पालन-पोषण मास्को के पुराने उच्चवंश (Aristrocracy) और शासन के अवसरप्राप्त उच्च पदाधिकारियों के बीच हुआ था। उसे अच्छी शिक्षा की सभी सुविधाएँ प्राप्त थीं और वह मास्को यूनिवर्सिटी के सर्वोत्तम युग का बहुत अच्छा विद्यार्थी था। उसके विद्यार्थी-काल के मित्रों में वे २९ भी थे जो भविष्य में 'डिसेम्बरिस्ट' कहलाये। नेपोलियन के युद्ध के कारण यूनिवर्सिटी १८१२ में सहसा बन्द कर दी गई और ग्रिबयेहोव जो कि सत्रह वर्ष का था फौज में भर्ती हो गया। १८१५ में उसने फौज को छोड़ दिया और पीटर्सबर्ग में विदेशी सचिव के विभाग में नौकरी कर ली।

उसकी बुद्धि और पटुता ने समाज में उसे बड़ा लोकप्रिय व्यक्तित्ववाला बना दिया। किन्तु उसकी रुचि पहिले ही से रंगमंच और साहित्य की ओर थी।

मास्को के ड्राइंग रूम के वास्तविक दृश्यों से कहीं अधिक व्यापक है। इसमें सभी तरह की तत्कालीन घटनाओं की चर्चा और संकेत है जिससे कि चित्र को पूर्णता प्राप्त होती है। चरित्रों की यथार्थता इससे और भी बढ़ जाती है कि वे अधिकतर उन लोगों की सच्ची तसवीरें हैं जिनको नाटककार स्वयं जानता था और जो कभी हाड़-माँस के पुतले थे।

क्रांतिकारी आन्दोलन के इतिहास को प्रभावित करने, दासप्रथा के विरुद्ध आवाज उठाने के कारण और प्राचीन प्रथा की बुराइयाँ और बेइमानियाँ प्रतिबिम्बित करने के कारण यह नाटक सदा याद रहेगा। साहित्यिक रचना और नाट्यकला की दृष्टि से यह अपूर्व है। इस नाटक ने यथार्थवादी नाटक की नींव रखी।

कोन्द्राती फ्योदोरोविच रिल्येव (१७९-५१८२६)

दिसेम्बरिस्ट के एक नेता के रूप में रिल्येव की चर्चा पहले हो चुकी है। इसी कारण उसका बहुत सा रचनात्मक कार्य दबा दिया गया। वह एक छोटे जमींदार का लड़का था और सेना के लिये शिक्षित हुआ था। उसने बहुत से वर्ष विदेश में बिताए। जहाँ कि वह फ्रेंच साहित्य और स्वतंत्रता एवं क्रान्तिकारी विचारों से भलीभाँति परिचित हो गया। अपने को पूर्णतया साहित्य में लगाने के लिये उसने सन् १७१८ में सेना की नौकरी छोड़ दी और १८२० में अपनी कविताएँ छपाना शुरू कर दिया। विशेष साधनों के अभाव में उसे सरकारी नौकरी ढूँढ़ने को विवश होना पड़ा। १८२० में उसके प्रकाशित एक व्यंग के कारण उसकी ओर पुलिस का ध्यान गया। और वह संसर से इसी कारण बच सका कि जिस अधिकारी पर व्यंग था उसने यह स्वीकार न करना चाहा कि वही इसका पात्र है और व्यंग उसी की तसवीर है। इस समय से उसकी कविता का विकास और आधार सामाजिक तथा राजनीतिक था। वह अपने लिए कहता है कि मैं कवि नहीं नागरिक हूँ। वह कवि का कर्त्तव्य देशवासियों की सेवा मानता है। उसकी शैली में शास्त्रवादी कविता के स्वरूप और ढंग (Form and Manner) की छाप है। उसकी सबसे प्रसिद्ध कृति है 'दूमी' या विचार। करमजीन के रूस के इतिहास से सामग्री लेकर उसने नवयुवकों को प्रेरणा देने के लिये अतीत के राष्ट्रीय महान् नेताओं और इतिहास के सर्वोत्तम युगों की गाथा सुनाई और ऐसे विषयों को चुना जिनको कि वह समाज-सेवा, देशभक्ति और राष्ट्रीय भावना-संबंधी विचारों को व्यक्त करने में प्रयुक्त कर गये। उसकी कविताओं में ऐतिहासिक आधार की अपेक्षा नैतिक या प्रयोजनात्मक उद्देश्य अधिक प्रबल है और राष्ट्रीयता का स्वर व्यापक है।

१८२३ में रिलेव 'उत्तरी गुप्त सोसायटी' (Northen Secret Society) का सदस्य हो गया और थोड़े ही समय बाद उसका सभापति हो गया। यद्यपि उसके उत्साह और उसकी सचाई ने दूसरों को बड़ी प्रेरणा दी, उसने दूसरों की अपेक्षा बड़ी स्पष्टता से जनता से इस आन्दोलन के अलगाव और गंभीर विषयों पर विचारों की एकता के अभाव के खतरे को देखा। उसकी कविता में अब अकेलेपन और भाग्यवाद का स्वर अधिकाधिक तीव्र होता जाता है यद्यपि उसमें निराशा या लड़ाई को धीमा करने का भाव नहीं है।

अब वह अधिक गंभीर और जटिल कविताएँ लिखने लगा। अपनी लम्बी कविता 'वाय नरोव्स्की' (Voy Narovski) में ऐतिहासिक सामग्री के मौलिक विन्यास और यथार्थवाद में मनोविज्ञान और वर्णन का विकास हुआ। रोमांटिक क्रान्तिवादी शैली में लिखी हुई इस कविता में कवि को अपने स्वतंत्र होने की अभिलाषा को क्रान्ति की करुणा (Pathos) का और गंभीर तथा महान कार्यों के नेता के रूप में उसकी अपनी अनुभूतियों को अभिव्यक्ति मिली। इसमें और दूसरी कविताओं में रिलेव भाग्य और नायक के अनिवार्य नाश का संकेत देता है।

सामाजिक रिलेव जैसे जैसे परिपक्व होता गया, वह भावनाओं की और व्यंग की कविताएँ लिखने लगा जिनमें उसका शब्दविधान अधिकाधिक बोलचाल और जनता के समीप का होने लगा। उसके कुछ गीत लोक-गीत की शैली पर हैं जिनमें वह पशुओं की तरह मनुष्य का व्यापार करने की निन्दा करता है और दास-प्रथा, न्यायाधीश और अधिकारियों की बेईमानी, बढ़ते हुए टैक्स के बोझ और पुरोहितों के दुराचार की निन्दा करता है। संक्षेप में उसके गीत पद्यमय घोषणाएँ हैं। किन्तु जनविप्लव के डर से दिसेम्बरिस्ट ने इनका सैनिकों, सिपाहियों और किसानों में प्रचार नहीं किया।

अलेक्जेंडर प्रथम के मरने पर जब विद्रोह का अवसर आया तो बहुत से समर्थक अलग हो गये। रिलेव ने विप्लव की योजना तैयार की जिसमें जार की हत्या का भी प्रोग्राम था। उसका उद्देश्य था कि या तो देश को स्वतंत्र कर ले या आगे आनेवाली पीढ़ियों के लिये शहीद होने का उदाहरण उपस्थित करे। उसके सर्वोत्तम राजनीतिक मुक्तक गीत इन्हीं अन्तिम दिनों की मानसिक उत्तेजना के बीच लिखे गये थे। इनमें की आखिरी कविता 'नागरिक' थी जिसमें उच्च वर्ग के नवयुवकों से प्रार्थना की गई थी। यह छापी नहीं जा सकती थी। इसलिये इसका प्रचार हस्त-लिखित प्रतियों के द्वारा किया गया।

१४ दिसम्बर १८२५ को षड्यंत्रकारी सेना की एक टुकड़ी के साथ—जिनके आगे रिलेव, कवि क्यूखेलबेग और लेखक ब्यसतूजेव थे—पीटर्सबर्ग में सेनेट स्क्वायर

में पहुँचे। अनिश्चय और स्पष्ट योजना के अभाव में इसकी असफलता अनिवार्य थी। फलतः इसके नेता पकड़ लिये गये। इनमें से पाँच को फाँसी की सजा मिली। कवि रिल्येव भी इन्हीं पाँच में था।

यद्यपि रिल्येव की रचना थोड़ी ही है फिर भी इसका ऐतिहासिक महत्व है क्योंकि इसमें क्रांतिवादी विकास की महत्वपूर्ण मंजिल की अभिव्यंजना है और स्वतंत्रता और मानवता की उच्च सेवा के कार्य के लिये कवि के कर्त्तव्य पर विशेष आग्रह है।

पुश्किन (१७६६–१८३७)

अलेक्जेंडर सर्गेविच पुश्किन का जन्म सन् १७६६ में मास्को में सबसे प्राचीन ताल्लुकेदार (Aristocracy) वंश में हुआ था। किन्तु इस वंश की मौलिक समृद्धि १६ वीं शती के आरम्भ में ही पतनोन्मुख हो चुकी थी। कवि के अपने शब्दों में 'पुश्किनों की बड़ी रियासत के टुकड़े हो गए हैं और वह नष्ट ही हो रही है। वंश की अंतिम रियासत भी नष्ट ही हो चुकी है। अब विख्यात प्राचीन वंश का केवल नाम ही विरासत में बचा है।' आर्थिक अधःपतन की यह प्रगति केवल पुश्किन ही नहीं प्रत्युत अन्य प्राचीन राजवंश (Nobility) वाले ताल्लुकेदारों की भी विशिष्टता बन गई थी।

माँ के वंश से पुश्किन अबीसीनियन अब्राहम पेत्रोविच हनीबाल का वंशज था जो अफ्रीका के तट पर अट्ठारह वर्ष की अवस्था में पकड़ा गया था और कुस्तुनतुनिया में लाकर सम्राट् को भेंट कर दिया गया। पुश्किन ने उसका चित्रण ऐतिहासिक कहानी 'पीटर महान् का हबशी' में किया है।

पुश्किन के माता-पिता का सामाजिक जीवन अत्यन्त अव्यवस्थित था। उन्होंने अपने पुत्र की शिक्षा-दीक्षा और पालन का भार विदेशी नर्स और अभिभाविकाओं पर छोड़ दिया था। सौभाग्यवश इससे पुश्किन ने फ्रेंच सीख ली और रूसी के समान ही अच्छी तरह बोलने लगा। उसके पिता के पास अठारहवीं शती के फ्रेंच साहित्य का बड़ा अच्छा संग्रहालय था। आरम्भ से ही पढ़ने का व्यसन होने के कारण पुश्किन ने 'पिता के कमरे में छिपकर चुपचाप एक के बाद दूसरी किताब पढ़ने में कितनी ही रातें जाग-जाग कर बिताईं।' इससे केवल उसे फ्रेंच साहित्य का ही व्यापक ज्ञान न हुआ प्रत्युत वह स्वतन्त्रता की भावना से भी भर गया (जिसकी अभिव्यक्ति फ्रेंच क्रांति में हुई और जिसकी भविष्यवाणी वाल्टेयर, रूसो, सिसेरो जैसे लेखकों ने बहुत पहले की थी)। फ्रेंच के साथ साथ उसने रूसी, ग्रीक और लैटिन (Classics) भी पढ़ी थी।

हमें यह भी जान लेना चाहिए कि पुश्किन के विकास में इन साहित्यिक रचनाओं के साथ साथ मौखिक लोककाव्यों का भी महत्वपूर्ण हाथ है। इसका ज्ञान उसे अपनी नर्स (दासी) अरीना रदीओनवा से हुआ। 'स्वप्न' नामक कविता

से (१८१६) पता चलता है कि उसके ऊपर बचपन में सुनी हुई उन कहानियों का कितना गहरा असर पड़ा। उसकी जागृति और साहित्यिक रुचि को तत्कालीन विख्यात लेखकों के ग्रंथों से भी सहायता मिली जो कि उसके संग्रहालय में थीं।

सन् १८११ में पुश्किन 'सारस्कोयेसेलो' की अकेडमी में भर्ती हुआ जो केवल उच्च वंशवालों के लिये थी और सरकारी नौकरियों के लिये शिक्षा देती थी। यह अकेडमी राजमहल के भीतर बड़ी सुन्दर जगह में स्थित थी। इसके दो शिक्षकों का पुश्किन के साहित्यिक जीवन पर बड़ा प्रभाव पड़ा—गालिच जो शास्त्रीय समीक्षा की प्राचीन शैली के विरुद्ध था, और कुनीत्सिन जो निरंकुशता और सामाजिक तथा राजनीतिक गुलामी के विरुद्ध था। बाद में प्रतिक्रिया के दौरान में ये दोनों शिक्षक निकाल दिये गये थे।

पुश्किन बचपन से ही कविता लिखने लगा था। अकेडमी में विद्यार्थियों के गोलों में कुछ हस्तलिखित पत्रिकाएँ निकलती थीं। पुश्किन की कविताओं ने उसे शीघ्र ही प्रतिभाशाली कवि के रूप में सबके सामने प्रस्तुत कर दिया। १८१४ में उसकी पहली कविता छपी जिसमें वह कविता को अपने जीवन का प्रधान लक्ष्य कहता है।

सन् १८१५ की वार्षिक परीक्षा पुश्किन के जीवन की महत्वपूर्ण घटना थी जिसमें कवि देरजाविन उपस्थित था। इसमें जब पुश्किन ने अकेडमी के संस्मरण रूप में शास्त्रानुयायिनी (Classical) ढंग की देशभक्तिपूर्ण कविता पढ़ी तो पुश्किन के कथनानुसार 'देरजाविन बड़ा आल्हादित हुआ। उसने मुझे गले लगाने को बुलाया। लोगों ने मुझे ढूँढ़ा किन्तु मुझे न पा सके।'

फिर भी देरजाविन ने पुश्किन के आगे के विकास पर प्रभाव न डाला किन्तु नई प्रगतिशील प्रवृत्तियों के प्रतिनिधि—भावुकतावाद का प्रतिनिधि करमजीन, रोमांटिसिज्म का जुकोव्स्की, नवशास्त्रवाद (Neo-classicism) का बातुष्का—का कहीं अधिक प्रभाव पड़ा। सन् १८१६ के अंत में पुश्किन साहित्य-सभा अरजामस का सदस्य चुना गया। इस समय से केवल साहित्यिक विचार ही नहीं किंतु सामाजिक और राजनीतिक विचारों पर भी प्रगतिशीलता और स्वतंत्रता की छाप पड़ी। तत्कालीन विद्रोहात्मक प्रवृत्तियों का प्रवेश अकेडमी के विद्यार्थियों में भी हो गया था। इसका एक कारण पुश्किन तथा अन्य विद्यार्थियों की हुजारगार्डस के अफसरों से (जो सारस्कोयेसेलो में स्थित थे) जान-पहचान थी। एक डिसेम्ब्रिस्ट याकुश्किन के अनुसार नेपोलियन के युद्ध से लौटने के बाद कुछ अफसरों ने 'जो कुछ देखा उससे घृणा से भर गए और आंदोलित हो उठे—अधिकांश रूसियों की गुलामी, अधिकारियों का अत्याचार, हर तरह के अधिकारों

का दुरुपयोग और सर्वत्र फैली हुई निरंकुशता।' इन अफसरों में से चदयेव पुश्किन का बड़ा घनिष्ठ हो गया और उसका पुश्किन पर बड़ा प्रभाव पड़ा। पुश्किन की कविताओं में अब दिसेंब्रिस्ट के विचार और सामाजिक भावनाएँ दिखाई पड़ने लगीं। यद्यपि वह खुफिया सोसायटी का सदस्य न था फिर भी उसकी कविताओं से दिसेम्ब्रिस्ट आंदोलन को बड़ी प्रेरणा मिली। अकेडमी छोड़ने के समय के आसपास की लिखी हुई कविताओं में दो प्रधान विचार दिखाई पड़ते हैं—एक तो ६ साल साथ रहने के कारण आपस की मित्रता और प्रेम की भावना है और दूसरी है क्रांतिवादी भावना जो उसे अकेडमी की सीमा से आगे ले जाकर जनता के साथ रखती है।

अकेडमी छोड़ने के बाद वह विदेशी विभाग में नौकर हो गया। उस समय ग्रिबयेदव भी उसी विभाग में नियुक्त था। पुश्किन का इस समय का जीवन अत्यन्त अनियमित था जिसका वर्णन उसने 'येवगेनिया अन्येगिन' में किया है, और काम में जी न लगाता था। वह अपनी लम्बी कविता 'रूसलान ल्यूदमिला' में व्यस्त था जिसे उसने स्कूल में शुरू किया था और १८२० में समाप्त किया। इसकी सामग्री उसने रूसी और विदेशी स्रोतों से ली थी—वाल्टेयर अरिओस्तो, और तासो के महाकाव्य, जुकोव्स्की के बारह सोती हुई कन्याएँ, और रूसी जनकथाएँ। रूसी जनसाहित्य के उपयोग की इस प्रवृत्ति का जान लेना आवश्यक है। जब यह कविता छपी तो स्पष्ट था कि एक नई प्रवृत्ति शास्त्रवाद को छोड़ रही थी और रोमांटिक कविताओं के स्वच्छंद छंद और युक्तियों को जन्म दे रही थी। इस कविता पर बड़ा वाद-विवाद छिड़ा, और कुछ लोगों को जन-साहित्य का समावेश साहित्य की उच्च परम्परा (Aristocratic) का असमय नाश प्रतीत हुआ। 'योरुपियन हेराल्ड' इस कविता की प्रजातन्त्रवादी आवाज और रूसी किसान के समावेश से घबड़ा उठा। प्रतिक्रियावादी आलोचकों पर पड़े हुए इस प्रभाव से हम समझ सकते हैं कि इस कविता ने जो कि वास्तव में विनोदपूर्ण थी कितना बड़ा कदम यथार्थवाद की ओर उठाया।

पुश्किन ने दिसेम्ब्रिस्ट भावनावाली बहुत-सी कविताएं लिखीं जिनमें जार पर और 'स्वतन्त्रता' पर कसीदा था। उसने विदेशी क्रांतिवादी शहीदों के प्रति भी सहानुभूति प्रकट की जिनमें फ्रांस के युवराज की हत्या करनेवाला भी था। अलेक्जेंडर ने, जो पुश्किन की विद्रोहात्मक प्रवृत्तियों से परिचित था, कहा 'पुश्किन को साइबेरिया भेजना चाहिए। उसने विद्रोह की कविताओं की रूस में बाढ़ ला दी है जो सभी जवानों को कंठस्थ हैं।' किन्तु जुकोव्स्की, करमजीन आदि के बीच में पड़ने से पुश्किन को हल्की सजा दी गई और वह दक्षिण में (काकेशस) औपनिवेशिक नौकरी में भेज दिया गया और बाद में बेसरेबिया को। उसने चार बरस देश-

निकाले में बिताए। इस समय वह दक्षिण यूरोप में व्याप्त स्वतन्त्रता के आदोलन—जो स्पेन, पुर्तगाल, इटली, ग्रीस—के अप्रत्यक्ष सम्पर्क में भी आया। दक्षिण में पुश्किन ने बायरन की शैली में कई कविताएँ लिखीं—काकेशस का कैदी, बाख्ची सराय का फौव्वारा, डाकूभाई, 'जिप्सी'। इनमें तत्कालीन सामाजिक विधान उच्च समाजवालों का विरोध है, काम करनेवालों (पहाड़ी) के प्रति सहानुभूति और स्वतन्त्रता का यशोगान। उसकी साहित्यिक शैली अत्यन्त संक्षिप्त, तेज और दृढ़ हो रही थी। वह वस्तु-विषय प्रकृति और पहाड़ियों के चित्रण में अधिकाधिक यथार्थवादी हो रहा था। उसका यथार्थवाद बायरनीय नायकों के मूल्यांकन में स्पष्ट होता है जिनको वह समाज के विरुद्ध विद्रोह करनेवाले व्यक्ति के रूप में देखता है।

किन्तु उसका काव्य 'येवेगेन्या अन्येगिन' उसके यथार्थवाद का सबसे ऊँचा स्तर है। इसके निराश नायक के रूप में सच्चे ठोस जीवन की स्थिति विशेष के बीच चरित्र विशेष का (Typical character in typical situation) चित्र है, बिना किसी आदर्शात्मक, आवेगात्मक और सामान्य से अलग उठानेवाले मनुष्योत्तर चित्रण के। इस समय से पुश्किन की आगामी कृतियों का यथार्थवादी रूप स्थिर तथा निश्चित हो जाता है। पुश्किन की कला का परमोत्कर्ष उसके 'मेखलोस्कोये' के निवास से संबंधित है।

पुश्किन 'मेखलोस्कोये' अगस्त १८२४ में आया। पुश्किन का पिता अपने पुत्र के देशनिकाले पर घबड़ा उठा और दोनों का संबंध और भी खराब हो गया। उसका पिता अधिकारियों की ओर से पुत्र पर जासूसी करने को तैयार हो गया। पारिवारिक कलह बढ़ते गए। बाद में पुश्किन-परिवार पुश्किन को उसकी नर्स के साथ 'मेखलोस्कोये' छोड़कर कर चला गया। अब वह गाँव के गुलामों के सम्पर्क में और अधिक आया और अपना समय जनकथाएँ सुनने में बिताने लगा।

पुश्किन की जनकथाओं में अभिरुचि उसके काव्यों में, लोगों के जीवन-चित्रण में और लोककाव्य की शैली में दिखाई पड़ती है।

अपनी बूढ़ी नर्स की कहानियों को सुनने के अतिरिक्त पुश्किन किसानों के वस्त्र पहनने लगा और बाजार तथा मेलों में जाने लगा और घूमते फकीरों के गीत सुनने लगा। वह गाँव के सम्मिलित गानों में भाग लेने लगा। उसने उनके गीतों को लिपिबद्ध किया। कहावतों और मुहावरों को इकट्ठा किया और वह किसानों की जीती जागती बोली के बीच रूसी भाषा की आत्मा का बड़ी सावधानी से अध्ययन करने लगा। इसलिये पुश्किन युवक लेखकों को सलाह देता है कि 'ऐ युवक लेखको! सामान्य जनता की बोली को सावधानी से सुना करो। तुम इससे बहुत-सी ऐसी बातें सीख लोगे जो कि समाचार-पत्रों में न मिलेंगी।'

अपनी पीढ़ी की सभी फैली हुई बुराइयों की तस्वीर है।' अपने भाग्य और समाज के प्रति यथार्थता रखने से लेरमेन्तोव यथार्थवाद की ओर बढ़ रहा था। इससे रचनात्मक कार्य में इससे नई मंजिल शुरू होती है। यह इस बात का प्रमाण है कि लेखक ने समाज के उच्चवर्ग की सीमा के बाहर भी देखा है। नायक के अतिरिक्त वह रूसी जीवन के अधिक प्रजातन्त्रवादी जैसे तबके के लोगों का चित्र भी उपस्थित करता है और ऐसे वर्गों की ओर अपनी बढ़ती हुई आकर्षण और सहानुभूति दिखाता है। दो तीन दशक बाद अन्य प्रजातन्त्रवादी लेखक जनता की ओर देखने लगे और जैसे ही सामाजिक जीवन के लिये जग गया भी असहाय मिला निराश पचोरिन की जगह नये प्रकार के नायकों ने ले ली।

यह उपन्यास रूसी गद्य का बड़ा श्रेष्ठ अंग (Classic) माना जाता है। जैसे लेरमेन्तोव की कविता, शक्ति, उपयुक्तता और स्पष्टता में बढ़ी चढ़ी है उसी प्रकार उसका गद्य भाषा की प्रांजलता (Purity of language), स्पष्टता और ओज का उदाहरण माना जाता है। अपनी अपूर्व मौलिकता और उपमाओं और चुस्त वर्णन की अभिव्यक्ति के लिये वह बहुमूल्य माना जाता है।

पुश्किन के बाद

पुश्किन की सन् १८३७ में मृत्यु हुई, और तीन वर्ष बाद ब्येलिन्स्की ने लेरमेन्तोव की प्रतिभा का 'पुश्किन का उत्तराधिकारी' कहकर स्वागत किया। उसके उपन्यास 'अपने समय का नायक' और कविता-संग्रह के सन् १८४० में प्रकाशन से यह अधिकार स्थापित हो गया। इसके एक वर्ष बाद ही उसकी भी मृत्यु हो गई। मई १८४२ में उसका शव दफनाने के लिये रूस में लाया गया। इसके दो सप्ताह बाद गोगल की सबसे बड़ी अन्तिम कृति चिचकोव का भ्रमण या मृत आत्मा का प्रथम भाग प्रकाशित हुआ। इन तीन महान कलाकारों ने जिनकी कृतियों का पूर्णविकास और अन्त इन पांच वर्षों में हुआ (१८३७-१८४२) रूसी साहित्य के भावी विकास और प्रवाह की धारा को यथार्थवाद, राष्ट्रीय जीवन के पूर्ण चित्रण, महत्वपूर्ण समस्याओं की अभिव्यक्ति और जनता के हित के दृष्टिकोण के अनुसार निश्चित कर दिया। उनकी महान् कृतियों ने न भुलाए जानेवाले चित्र और काव्या-कौशल के अपूर्व उदाहरण उपस्थित किये और समृद्ध एवं परिपक्व साहित्यिक भाषा प्रस्तुत की। निकोलस प्रथम के दमनकाल के बीच इनके उत्तराधिकारियों ने—हर्जन, तुर्गेन्येव, गोनचार्येफ अस्त्रोव्स्की, सालतिकोफ चेद्रिन, नेक्रासोव आदि ने—यद्यपि अपने जीवन और कृतियों में भिन्न भिन्न मार्गों का अनुसरण किया और वर्ग तथा विचारों के संघर्ष के सम्बन्ध में उनकी प्रतिक्रियाएँ अलग अलग थीं फिर भी व्यक्तिगत रुचि और प्रवृत्ति की भिन्नता के साथ इन सब पर उस दमनकाल की छाप समान थी और उनके लिये 'सन् चालीस के आदमी' की उपाधि उपयुक्त है।

'सन् चालीस' का युग

सन् चालिस के इन आदमियों के लिये उस समय की मुख्य बातों का संक्षिप्त विवरण आवश्यक है। 'दिसेम्बरिस्ट विद्रोह' ने उन लोगों के असन्तोष की अभि-व्यक्ति की थी जिनका कि नैपोलियन के ऊपर विजय पाने से सुधार और उन्नति की आशा थी। इन वर्षों में जनता को सबसे पहिले अपनी शक्ति का अनुभव हुआ और उसमें राष्ट्रीय स्वतंत्रता की भावना जगी। वे सैनिक जो कि नैपोलियन के युद्ध से लौटे कहने लगे कि हमने अत्याचारी से देश की रक्षा करने के लिये अपना खून बहाया और इसलिये अब हमको पुराने शासकों का अत्याचार न स्वीकार करना चाहिए। उन्होंने कहा कि क्या हमने योरोप को इसीलिये मुक्त किया कि उसकी जंजीर हम पहनें। फ्रांस को शासनविधान ही क्यों दिया गया जब

और क्रांतिकारी विचारों के प्रचारक थे जिनकी छाप आगे आनेवालों पर पड़ी।

बौद्धिक जीवन को मित्रों की छोटी-छोटी गोष्ठियों से उत्तेजना मिलती रही। जिनमें साहित्य, दर्शन और राजनीतिक गम्भीर समस्याओं पर वाद-विवाद होता था। सन् १८३० में इस प्रकार की गोष्ठियाँ मास्को में बनीं जिनमें हर्जन, बकूनिन, ब्येलिंस्की आदि थे और जो कई कारणों से—जिनमें कि प्रतिभाशाली व्यक्तियों का निर्वासन भी था—थोड़े वर्षों बाद टूट गईं। सन् ४० के आरम्भ में इनके दो विरोधी दल हो गए जो दो विरोधी प्रवृत्तियों के प्रतिनिधि थे और जो इतिहास में पाश्चात्यवादी और स्लाववादी के नाम से प्रसिद्ध हैं।

१८३६ में चादयेव (जो कि डिसेम्ब्रिस्ट का समर्थक और पुश्किन का मित्र था) ने सनसनीदार 'दार्शनिक पत्र' मास्को के जर्नल में छापा। समाचार-पत्र फौरन जब्त कर लिया गया। सेंसर जिसपर इसके छापने की जिम्मेदारी थी निकाल दिया गया। संपादक को देशनिकाला मिला और लेखक को पागल बताकर एक डाक्टर की अधीनता में रख दिया गया। लेख रूस की दशा, लोगों की नैतिकता और अफसरों की विचारधारा (जिसकी कि चर्चा की जा चुकी है) पर खुला आक्रमण था।

चादयेव के लेख ने रूस के अतीत, वर्तमान और भविष्य की तात्विक समस्याओं और योरप के साथ उसके संबंध की समस्याओं को उपस्थित किया। उसका कहना था कि रूस के एक बार अपने को अतीत और वर्तमान बर्बरता और आत्मतुष्टि से अलग कर लेने पर योरप की सदियों के ज्ञान और अनुभव की विरासत को अपनाने पर रूस के देशवासी अपनी युवावस्था की शक्ति और ताजगी से बहुत बड़े ऐतिहासिक उद्देश्य को पूर्ण करेंगे और अपनी सभ्यता बनाएंगे। इस प्रकार के वादविवाद के महत्व पर इसलिये जोर दिया जाता था क्योंकि विदेशों में रूस के भविष्य के कार्य-कलाप (Role) की विदेशों में भी चर्चा हो रही थी। विदेशी लेखकों के सामने जो रूस था वह अत्यन्त बर्बर और जार के शासनवाला रूस था। हेगल की यह सम्मति कि रूस और स्लाव जातियों को मानवजाति के इतिहास में कोई महत्वपूर्ण स्थान नहीं है प्रगतिशील विचारकों को सोचने को बाध्य किया और ऐसी सम्मतियों के निराकरण की स्वाभाविक इच्छा उनमें जगी। उन्होंने जर्मनों के इतिहास के आदर्शवादी सिद्धान्त के उस भ्रामक आधार की जाँच की जिसने लोगों को ऐतिहासिक और अनैतिहासिक राष्ट्रों में विभक्त किया और बाद में Pan German Chowinism का आधार बनी।

'सन् चालीस के आदमी' रूस के भाग्य और उसकी राष्ट्रीय आत्मा के महत्त्व

पर बराबर बहस कर रहे थे इसलिये उनकी अतीत के इतिहास, लोक-साहित्य और लोगों के रीत-रिवाज में बड़ी दिलचस्पी थी।

पाश्चात्यवादियों का यह कहना था कि रूस यूरोप का एक राष्ट्र है और उसके निवासी यूरोप के सांस्कृतिक परिवार के अन्तर्गत हैं। और रूस तथा यूरोप का ऐतिहासिक मार्ग एक ही है। सामंती रूस के विपरीत उस समय का पश्चिमी यूरोप पूंजीवादी उन्नति की बड़ी मंजिल पर पहुंच चुका था। मध्यम वर्ग के स्वतन्त्रता के सिद्धान्त बहुत व्यापक थे और इसीलिये पाश्चात्यवादी यूरोप के प्रजातन्त्रात्मक संस्कृति के सभी अच्छे तत्वों का ग्रहण करना चाहते थे। उन्होंने पीटर महान के सुधारों का स्वागत किया और उसे भविष्य के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण बताया। उनकी दृष्टि में रूस का वर्तमान ऐतिहासिक कर्तव्य यही है कि देशवासियों की दासता से मुक्तिप्राप्ति का काम और ज्ञान प्राप्त करने का काम जारी रक्खा जाय।

'स्लाववादियों' का कहना था कि रूस अपूर्व राष्ट्र है, पूर्वी स्लाव देश है जो कि अपने निजी ऐतिहासिक विकास के मार्ग का अनुसरण कर रहा है। पश्चिम को जो कुछ देना था वह दे चुका और उसके दिन खतम हो गये। भविष्य रूस का है और इसके विधायक जर्मन उच्चवर्ग (Aristocrat) न होंगे, प्रत्युत काम करनेवाले सामान्य मनुष्य या स्लाव होंगे। इसलिये हमको विदेशी विचारों को न ग्रहण करना चाहिए और सामान्य रूसी जनता के बीच में छिपे हुए रूसी जीवन का अपने ढंग पर विकास करना चाहिए। स्लाववादी पीटर के सुधारों के विरोधी थे क्योंकि उनकी समझ में वे सुधार रूस को सच्चे मार्ग से हटाने वाले हैं।

पाश्चात्यवादी जनता की गरीबी, अज्ञान और पिछड़ेपन (Backwordness) की निन्दा करते थे किन्तु उनकी अविकसित शक्ति और बुद्धि को महत्वपूर्ण मानते थे। इसके विपरीत स्लाववादी, जनता को रूसी पारिवारिक सिद्धांत का संरक्षक, धार्मिक, अराजनीतिक (राजनीतिक से उदासीन) और बाइजंटाइन के प्राचीन चर्च को परम्परा में पगी मानते थे। वे निष्क्रिय विनम्रता को उसकी विशेषता मानते थे और सम्मिलित परिवार और गाँव की पंचायत (Village Committee) को उसके जीवन के रहन-सहन का ढंग बताते थे। उनके विचार से पढ़े लिखे लोगों का कर्तव्य जनता को यूरोपीय शिक्षा से खराब न करके उनके जीवन का अनुभव सीखना और आन्तरिक नैतिक स्वतंत्रता की खोज करना और गर्व को दबाना है।

पाश्चात्यवादियों का एक दल वैधानिक राजतन्त्र (Constitutional Monarchy) में विश्वास करता था, दूसरा प्रजातन्त्र की स्थापना में।

कुछ लिबरल थे, कुछ क्रांतिवादी। स्लावावादी पीटर से पूर्व के प्राचीन रूस का आदर्शवादी रंगीन चित्रण करते थे और उनका राजनीतिक आदर्श प्राचीन ढंग की ऐसी रूसी योजना थी जिसमें उदार ज़ारशाही की प्रतिनिधि [illegible] हो और जनता को पूर्ण नैतिक और आत्मिक स्वतन्त्रता हो और बोलने और स्वतन्त्र विचार का अधिकार हो। इनमें से कुछ के सिद्धान्तानुसार जनता स्वयं शासन करना नहीं चाहती है। वह गाँव की कौंसिल में अपनी सम्मति प्रकट करना नहीं चाहती है। इसमें कोई संदेह नहीं कि उनके कुछ सिद्धान्त और थे, जैसे पश्चिम की नकल का विरोध और राष्ट्रीयता के सिद्धान्त पर विशेष ध्यान जिसका आधार उन्हें सामान्य जनता में दिखाई दिया। यद्यपि उनके सिद्धान्तों की राष्ट्रीयता के सरकारी स्वरूप या चित्रण का पर्याय न समझना चाहिए फिर भी वे इसके बहुत निकट थे और उनके सिद्धान्तों में प्रतिक्रियावादी धार्मिक रहस्यवाद था।

किन्तु पाश्चात्यवादी और स्लावावादी दोनों (इन वर्षों में) समझते थे कि अत्यन्त दारुण और क्रूर दास-प्रथा का अन्त होना चाहिए, निकोलस के शासन से घृणा करने में दोनों एक थे, और दोनों इस बात को मानते थे कि पढ़े लिखे लोगों का देश के प्रति ऐतिहासिक कर्तव्य है। विचारों का संघर्ष और भी तीव्र हो गया।

'सन् चालीस' के उत्तरार्ध में रूसी दर्शन और सामाजिक तथा राजनीतिक विचारों में बहुत बड़ी क्रांति (Crisis) उपस्थित हुई। हर्ज़ेन के लेखों में आदर्शवाद का भौतिकवाद में संक्रमण दिखाई दिया। इस समय का सबसे मुख्य व्यक्ति ब्येलिंस्की है।

१८४५-४८ में पीटर्सबर्ग के पढ़े-लिखे लोगों ने एक गोष्ठी बनाई जिसका नाम संस्थापक के नाम पर पेत्राशेव्स्की (Petrashevtsy) था और जिसका उद्देश्य प्रजातन्त्रात्मक था; यह न तो अत्यन्त सुगठित संस्था थी और न इसके सदस्यों के विचारों में मतैक्य था। पेत्राशेव्स्की स्वयं फ्रेंच युरोपियन सोशलिस्ट फोरियर (Fourrier) का शिष्य था और न वह न और न उसके मित्र ही फोरियर के मध्यमवर्गी आधार को समझ सके और न उनकी कोई निश्चित राजनीतिक योजना ही थी। सामान्य जनता के साथ उनका कोई सम्पर्क न था और उनका कार्यकलाप अधिकतर वादविवाद और व्यक्तिगत लेखक या लेक्चर के रूप में अपने विचारों के प्रचार तक सीमित था। उनको स्वतन्त्र विचारवाले स्वप्नद्रष्टा कहा जा सकता है जिनमें कुछ ऐसे भी थे जो समझते थे कि किसी भी प्रकार का सोशलिज्म भ्रम मात्र है। इनमें कुछ उत्साही प्रचारक भी थे और थोड़े ऐसे भी थे जो काम करने की बात भी कहते थे जैसे किसानों से विद्रोह करने की अपील। बहुत से विख्यात कवि और लेखक इस संस्था के सदस्य थे—जैसे ग्रिगोरयेव, दोस्तोव्स्की,

सालिकोवस्कीइन। १८४९ में यह गोष्ठी सरकार द्वारा दबा दी गई। इसके बहुत से सदस्य गिरफ्तार कर लिये गए और उनको सजा या देशनिकाला मिला या पुलिस निगरानी में रहना पड़ा। इनमें से इक्कीस को गोली से मारे जाने का हुक्म हुआ। वे फाँसी-घर ले जाये गए किन्तु अन्तिम क्षण के पहले क्षमा की घोषणा सुनाई गई और उनमें से अधिक कठिन कारावास के लिये साइबेरिया भेज दिये गए। इनमें से एक था प्रसिद्ध लेखक दोस्तोव्स्की जिसका अपराध केवल था बेलिन्स्की के गोगल को लिखे हुए पत्र को पढ़कर सुनाना था जिसमें आर्थोडोक्स (Orthodox) चर्च और सर्वोच्च अधिकारी पर आक्रमण किये थे।

सन् १८४८ की योरोप की क्रांति के बाद और क्रीमियन युद्ध की असफल समाप्ति के बाद पुलिस शासन की कठोरता और भी बढ़ गई। निकोलस प्रथम की मृत्यु (१८५५) से नया युग शुरू हुआ। सन् तीस और चालीस के दशक में क्रांतिवादी सिद्धान्तों की खोज उसी समय शुरू हो गई थी जब कि मध्यम और निम्नवर्ग के लोगों ने स्वातन्त्र्य आन्दोलन में उच्चवर्ग के लोगों का साथ दिया। दास प्रथा के विरुद्ध आन्दोलन, और किसानों का संघर्ष दिन प्रतिदिन बढ़ता गया। इसके साथ-साथ साहित्य भी प्राचीन उच्चवंशी सर्वभौम (Aristocratic Cormopolitanism) के स्थान पर साहित्य प्रजातन्त्र तथा रूसी संस्कृति के संघर्ष को प्रतिबिम्बित करने लगा।

साहित्य में सन् बीस और तीस के रोमांटिक आन्दोलन की जगह पुश्किन, लेरमन्तोव, गोगल और बेलिन्स्की ने यथार्थवाद के मार्ग-प्रदर्शन का श्रीगणेश किया और ढोंगी एवं भावुक देशभक्ति और रोमांटिक स्वप्न के कट्टर पक्षपाती और मिथ्याभिमान के विरुद्ध अपनी प्रतिक्रिया दिखाई। यद्यपि पुराने रोमांटिक लेखक अभी जीवित थे और वे उसी तरह लिखते रहे। जुकोव्स्की अब भी लिख रहा था और बहुत बड़ा कवि माना जाता था यद्यपि नई पीढ़ी के लिये वह पिछड़ा हुआ व्यक्ति (Back number) बन गया था।

यहाँ पर उन चार कवियों का उल्लेख आवश्यक है जिनकी रचनाएं इस काल के भीतर पड़ती हैं किन्तु जो मुख्यधारा से अलग हैं।

पलेजाएव १८०५–१८३८

वह मुक्स्मिल के जमींदार का दासी-पुत्र था, जो 'साश्का' कविता के कारण यूनिवर्सिटी से फौज में नायक (Non-Commissioned Officer) बनाकर भर्ती किया गया और बाद में पदच्युत कर दिया गया। तीन साल कॉकेशस की सीमा पर रहने के बाद उसकी कोड़े की मार से (अनुमति बिना रेजिमेंट से अनुपस्थित होने के कारण) मृत्यु हुई। उसके गीत उदासी और निराशा और

व्यक्तिगत अनुभूति के गीत हैं किन्तु उनकी भावना [illegible] (Democratic) और चित्रण यथार्थवादी है। अपने चारों ओर के लोगों को [illegible] बताता है या फांसी देनेवाला और जार की भावना [illegible]।

अदोयेव्स्की (१८०२–१८३९)

यह डिसेम्ब्रिस्ट कवि था जो साइबेरिया और [illegible] निर्वासित किया गया और जो पराजय के बाद भी संघर्ष के अंत में आशापूर्ण और [illegible] भाव प्रकट करता रहा। वह 'जनता के कवि' के रूप में उल्लेखनीय है। यद्यपि उसकी रचनाएँ कम हैं फिर भी उसकी कुछ कविताएं (जैसे पुश्किन की कविता 'साइबेरिया को पत्र' का जवाब) स्मरणीय हैं।

कोल्त्सोव (१८०९–१८४२)

केवल यही कवि निम्नवर्ग का है जो उन्नीसवीं शती में विख्यात हुआ। वह पशुओं के सौदागर का लड़का था और उसकी स्कूली शिक्षा केवल अठारह माह तक हुई। वह कहा जाता है कि वह न तो व्याकरण सीख सका और न वर्णविन्यास (Spelling)। बहुत समय तक किताबी कविता का अनुकरण करने के बाद उसे अपनी प्रतिभा की अभिव्यक्ति किसानों की कविता और लोकगीत में मिली। स्तान्केविच ने उसकी प्रतिभा को पहचाना और उसकी कविताएँ बीस वर्ष की अवस्था (१८३१) में एक पत्र में निकालीं। बेलिंस्की उसे बहुत चाहता था और उसे बड़ा प्रतिभाशाली कवि मानता था। अपनी छोटी सी जिंदगी में उसे एक के बाद दूसरी मुसीबत झेलनी पड़ी और उसकी प्रतिभा चारो ओर के वातावरण से दब सी गई। उदास, प्रेम, करुण अंत, गरीब किस्मत, जबरदस्ती ब्याही गई स्त्रियों की दशा, किसान का सर्वांगीण सुखदुख का जीवन, चौड़े स्टेप (Steppes), स्वतन्त्रता की प्यास, जवानों के साहस-भरे गीत, आत्मविश्वास से भरे युवक का संघर्ष, खेतों का काम आदि उसके काव्य के विषय हैं। उसके काव्य की राष्ट्रीयता और लोककाव्य की सामग्री से उसने जिस सौंदर्य का सृजन किया लिखित साहित्य में सर्वथा नवीन था। हर्जेन ने १८५१ में लिखा कि 'रूसी काव्य वह में दो कवि नये युग की अभिव्यक्ति दे रहे हैं, वे हैं लेरमोन्तोव और कोलत्सोव।'

त्यूच्येव (१८०३–१८७३)

त्यूच्येव अत्यन्त परिमार्जित मुक्तक गीतों का कवि है जिसने सन् १८२० और १८३० में अनेक पत्रों में चालीस कविताएँ छपाईं। किंतु विद्वानों की संकुचित गोष्ठी को छोड़कर उसकी कृतियों की ओर लोगों का बहुत कम ध्यान गया। बहुत दिनों की शांति के बाद उसकी कविताएँ १८५४ और १८५७ में फिर छपीं। वह शिष्ट लोगों का कवि विख्यात हुआ। डिप्लोमैट होने के कारण उसने बहुत

समय विदेश में बिताया और यूरोपीय सभ्यता से बहुत प्रभावित हुआ था। क्रान्ति का भय जो कि उस समय पश्चिम के उच्च वर्गों में समाया हुआ था और सभ्यता के नाश का भय उसे आक्रांत किये था। क्रिश्चियन नम्रता के गुण और अपूर्व रूसी आत्मा के सम्बन्ध में उसके कुछ विचार स्लाववादियों के हैं।

उसके काव्य का मुख्य विषय प्रेम, प्रकृति, मनुष्य और उसका भाग्य हैं। उसकी प्राकृतिक कविता रूसी साहित्य में एक अपूर्व वस्तु है। यद्यपि उसकी कविता में निराशावाद, भाग्य को टालने की असंभावना आदि के स्वर वर्तमान हैं फिर भी उसमें कवि के आध्यात्मिक संसार का गंभीर नाटक और उसकी चेतना तथा भावनाओं में होनेवाले उसके दोहरे व्यक्तित्व के जटिल संघर्ष की झलक मिलती है। संक्षिप्त कविता के भावात्मक चित्रों के द्वारा किसी जटिल विचार या भावना की अभिव्यक्ति उसकी शैली है। इसमें कोई संदेह नहीं कि वह सौन्दर्य के सर्जन में अक्सर सफल होता है। तुर्गनेव ने समकालीन कवियों के बीच प्रथम स्थान लिया। और वह अंतिम दिनों तक ताल्स्ताय का प्रिय बना रहा।

निकोलाई वसीलेविच गोगल (०१८९–१८५२)

गोगल का जन्म पोलतावा प्रान्त के बल्शिग्येवरा गाँव में हुआ था जहाँ उसका पिता (जो कि यूक्रेनियन का जमींदार था) नौकरी से अवकाश प्राप्त करके रह रहा था। उसका पिता नाटकों का बड़ा शौकीन था रूसी और यूक्रेनियन कविताएँ और नाटक लिखता था। उसकी माँ बड़ी लगनवाली, मेहनत करनेवाली किन्तु अव्यावहारिक स्त्री थी जिसे बहुत थोड़ी शिक्षा मिली थी, जिसका सारा जीवन उसी गाँव में बीता। इस प्रकार गोगल के आरम्भिक वर्ष मुफस्सिल में बीते (Provincial back water)। मकान हमेशा भरा रहता था। भोजन बड़ा गरिष्ठ रहता था और नौकरों की संख्या बहुत थी। पड़ोस के अमीर व्यापारी का पुस्तकालय और निजी रंगमंच भी कदाचित् भविष्य के इस लेखक की रुचि-निर्माण में सहायक हुए हों। उसकी इच्छा न्याय में जाने की थी। उसने एक रिश्तेदार को लिखा की अन्याय इस पृथ्वी पर सबसे बड़ा दुर्भाग्य है और सबसे अधिक इसने मेरे हृदय को विदीर्ण किया है। १८२८ में वह पीटर्सबर्ग गया किन्तु सिफारिशी पत्रों के होने पर भी उसे कोई सरकारी नौकरी न मिल सकी। उसका अभिनेता बनने का भी प्रयास असफल ही रहा।

१८२९ में उसकी पहिली पुस्तक दूसरे नाम से प्रकाशित हुई जिसका विषय भाग्यसुधार के प्रयास में नवयुवक की निराशा है। इसे कोई सफलता न मिली और गोगल ने स्वयं इसके संस्करण को नष्ट कर डाला। उसकी पहिली गद्य-कहानी १८३० में स्वीकृति हुई। इस समय तक उसे एक छोटी नौकरी मिल

गई थी और उसकी दशा कुछ सुधर गई थी। वह आर्ट एकेडमी में चित्रकला का अध्ययन करने लगा और एक अमीर परिवार में इतिहास की शिक्षा देने लगा।

जुकोवस्की और पुश्किन से उसकी मित्रता हो गई और उसने सिविल सर्विस की नौकरी छोड़ दी। सन् १८३१ में उसकी कहानियों का प्रथम भाग 'दिकान्का नदी के पास की शाम' निकला जिसका सबने और विशेष रूप से पुश्किन ने स्वागत किया। एक साल बाद इसका दूसरा भाग निकला। अब उसका ध्यान इतिहास की ओर गया। उसने अब यूक्रेन का इतिहास लिखना शुरू किया और यूक्रेनियन लोक-गीत इकट्ठा करने लगा। उसने विश्व इतिहास लिखने की योजना बनाई। १८३४ और १८३५ में वह पीटर्सबर्ग यूनिवर्सिटी में मध्यकाल इतिहास का असिस्टेंट प्रोफेसर नियुक्त किया गया किन्तु ऐसा मालूम होता है कि न तो वह और न उसके विद्यार्थी ही सन्तुष्ट थे। उसने अब अपने को पूर्ण रूप से लिखने में लगाया। इस समय उसकी कुछ अत्यन्त प्रसिद्ध कहानियाँ निकलीं जैसे 'पागल की डायरी, नेवस्की प्रास्पेक्ट, तसवीर, पुराने रईस, तारस बल्बा' आदि। मौलिक लेखक के रूप में उसकी ख्याति अब पूरी तरह स्थापित हो गई थी। १८३५ में उसने पुश्किन को लिखा कि मैं 'मृत आत्माएँ' लिख रहा हूँ और उसने अपना व्यंग नाटक 'सरकारी इन्सपेक्टर' समाप्त किया जो सन् १८३६ में रंगमंच पर खेला गया। इसने बड़ी सनसनी फैली और वे वर्ग—जैसे पुलिस, शासनाधिकारी (Bureaucracy), सौदागर और साहित्यिक संसार के एक वर्ग जिनपर व्यंग था बड़े नाराज हुए।

इसके बाद वह छः या सात वर्ष तक यूरोप में घूमा और सन् १८४२ में रूस वापस लौटने पर उसने 'मृत आत्माएं' छपाया और फिर यात्रा पर चल पड़ा किन्तु इस समय से उसकी बढ़ती हुई उदासी दुर्बल स्वास्थ्य और धार्मिक भय उसके चरित्र और दृष्टिकोण को तेजी से बदलने लगे। उसके दिल में अब यह डर समा गया कि उसकी प्रतिभा क्षीण होने लगी है। उसकी दूसरी पुस्तक 'दोस्तों से लिखा-पढ़ी' के प्रकाशन पर उसके अन्यतम मित्रों ने विरोध की आवाज उठाई और बेलेन्स्की ने भी विरोध में पत्र लिखा जो बड़ा प्रसिद्ध हुआ। मृत आत्माओं का लेखक अब दास-प्रथा और निरंकुशता के समर्थक के रूप में सामने आया। १८४७ में लेखक का 'कन्फेसन' छपा जिसमें उसने अपने विचारों के समर्थन का प्रयास किया। अब वह अपने को केवल कला में लगाना चाहता था और उसका विचार था कि जीवन के साथ सामंजस्य ही कला है। १८४८ में पेलस्टीन की यात्रा के बाद उसने धीरे धीरे और बीच में रुक रुक कर 'मृत आत्माओं' के तृतीय भाग को समाप्त किया उसके जीवन के अन्तिम दिन रुपये पैसे की तंगी और गिरती हुई तन्दुरुस्ती में बीते। मरने से एक हफ्ते पहिले उसने अपनी इस कविता के सब नये अध्यायों को जला डाला।

गोगल की आरम्भिक कहानियों की सामग्री यूक्रेन की जनता, वातावरण, गीत और परम्पराओं से ली गई है। १८२० में जब कि 'रोमांटिक आन्दोलन' ने लोगों की रुचि जन-साहित्य कथाओं और लोकगत राष्ट्रीय परम्पराओं में बढ़ाई तो साहित्य में ऐसे विषय अत्यन्त लोकप्रिय हो गये। गोगल की कहानियाँ अत्यन्त मनोरंजक हैं और उनमें यूक्रेनियन और कज्जाक ग्रामजीवन के सजीव चित्र हैं। जिनमें विनोद और भय दोनों का सम्मिश्रण है। शैली की दृष्टि से ये कहानियाँ जीवन के यथार्थवादी पर्यवेक्षण और रोमान्टिक वर्णन के सम्मिश्रण हैं और उनकी भाषा कभी भावात्मक और कभी लोककाव्य के समान है। किन्तु जब वह वर्तमान के वास्तविक जीवन की ओर उन्मुख होता है तो उसकी शैली अभिव्यक्तिपूर्ण सजीव मुहावरों को अपनाती है।

'टारस बल्बा' गोगल की इस शैली के परिपक्व कौशल का उदाहरण है। अन्य रोमांटिकों की तरह गोगल इस कहानी में यूक्रेनियन लोककाव्य के नायकों के समान वीर व्यक्तित्ववाले नायक की भावना की ओर आकृष्ट हुआ। सारी कहानी प्रेम की करुणा (Pathos of Love) और देश के लिये युद्ध की भावना में व्याप्त है। ऐतिहासिक भूलों (Inaccuracies) के होने पर भी अतीत के विविधात्मक दृश्यों के चित्रण में, अनेक वर्गों के वर्णन में, जन-आन्दोलन तथा वीर और हास्य की घटनाओं के सम्मिश्रण में कलात्मक सत्य वर्तमान है। यह देश की अतीत वीरता का आदर्श है।

उसकी दूसरी कहानियों में वर्तनाम का चित्र है। 'मीर गोरद का अजीब नगर' में वह वर्तमान और वीर पूर्वजों के आधुनिक वंशजों का वर्णन करता है। 'ईवान इवानोविच' ईवान निकीतोरोविच से कैसे लड़ा। कहानी में बेकार और फिजूल के जीवन का चित्र है। अतीत के वीर एवं साहसपूर्ण कृतियों की जगह पर वर्तमान में ईवान निकीतोरोविच गले तक पानी में पड़ा रहना चाहता है और चाहता है कि समोवर (Samovar) और चाय की मेज वहीं आ जाय जिससे कि वह ठंढक में चाय का आनंद उठा सके। ईवान इवानोविच जब अपनी पसन्द की चीज तरबूज खाता है तो उसके बीजों को बड़ी सावधानी से कागज़ में लपेट कर रख लेता है और उसके खाने की तारीख लिख लेता है और यदि कोई मेहमान भी हुआ तो यह भी लिख लेता है कि अमुक ने भी साथ में खाया। ये दोनों नगर के सम्मानित व्यक्ति हैं। छोटी सी बात पर दोनों लड़ जाते हैं और लम्बा मुकदमा लड़ते रहते हैं। यह जी उबानेवाले, नगर के बेकार के मनुष्य हैं। उसकी कहानियों की दूसरी माला (Series) पीटर्सबर्ग की है जिसमें कि वह छोटे क्लर्क और अधिकारियों को नायक रूप में लाता है। पुश्किन की कहानियों में हम इसका एक परिवर्तित रूप देख चुके हैं। हमें यहां सिविल सर्विस के नौकर का चित्र देखने को मिलता है।

'ओवर कोट' कहानी में गोगल एक छोटे क्लर्क का चित्र अंकित करता है। जिसकी न कोई रक्षा करता है, न जिसे कोई चाहता है, जो दफ्तर के सहकर्मियों का व्यंग सहता रहता है, लेकिन उसमें भी एक बार (जीवन के अन्त में ही सही) ओवर कोट के रूप में आनन्द की खोज और जीवन के प्रति अनुराग जागता है जिससे कि उसका निरर्थक जीवन क्षणभर को जागृत हो जाता है।

गोगल की दो अन्य प्रधान कृतियाँ 'गवर्नमेंट इंस्पेक्टर' और 'मृत आत्माएं' हैं। गोगल कहता है कि पहले में मैंने रूस की सभी बुराइयों की हँसी उड़ाने के लिये उनको एक जगह एकत्रित कर दिया है। इसकी कथावस्तु दैनिक जीवन की सामान्य घटना है जिसका कि भूलों के हास्यजनक नाटकों में प्रायः उपयोग होता है। संयोगवश एक आदमी होटल में ठहर जाता है और लोग उसे कानून की खुफिया जांच करने के लिये आया हुआ सरकारी इंस्पेक्टर समझ लेते हैं। इसमें न तो प्रेम की कथा है और न नैतिकता का पाठ पढ़ाने को पुण्यवान अच्छे पात्रों का चित्रण और न बुरे पात्रों का अधःपतन दिखाया गया है। यह सामाजिक नाटक है और इसके प्रधान पात्र स्थानीय बेईमान अधिकारी हैं किन्तु प्रत्येक पात्र को ऐसा व्यक्तित्व मिला है जो मनोवैज्ञानिक दृष्टि से पूर्णतया विश्वसनीय है। जनता ने इन पात्रों को फौरन पहचान लिया और वे जनता की चीज बन गए। नाटक की प्रतियाँ बड़ी जल्दी बिक गईं और अप्राप्य हो गईं। एक समकालीन लेखक ने लिखा कि "ये स्त्री और पुरुष स्रेस्की पार्क और सभी जगह टहलते हुए मिल जायँगे। जहाँ दस आदमी मिलेंगे उनमें कम से कम एक ऐसा अवश्य होगा जो सीधे गोगल के नाटक से आया है।"

इसी प्रकार 'मृत आत्माओं' में गोगल पूरे रूस के चित्रण में प्रवृत्त हुआ। उसका यह विचार यहां तक बढ़ा कि उसने केवल तत्कालीन रूस का चित्रण ही न करना चाहा किन्तु ऐसा काव्य बनाना चाहा कि जो लोगों को जीवन में उच्च आदर्शों से अनुप्राणित करे और उसके पतित नायक चिचिकोव को नीचता के नरक से निकाल कर नैतिक उद्धार (Regeneration) की आग में शुद्ध कर और नवीन जन्म देकर आदर्श भविष्य के स्वर्ग की ओर ले जा सके। इसलिये प्रथम भाग में उसने केवल राक्षसी, खराब और बेवकूफ (Stupid) लोगों का चित्रण किया। दूसरे भाग में, जिसे कि उसने नष्ट कर दिया, उसने अच्छे पात्रों को रक्खा और प्रधान नायक को दुख और कष्ट (Suffering) के बीच से ले जाकर यह चेतना जगाई कि उसे अपने को बदलना चाहिए।

जो भाग नष्ट होने से बचा है उसकी कथा-वस्तु अत्यन्त सादी है। चिचिकोव जिले के बहुत से जमींदारों के पास 'मृत आत्माओं' को खरीदने के लिये जाता है। वह नाम मात्र को पैसा देकर उन दासों का अधिकार चाहता है जो मर चुके हैं

जिससे कि वह भी दासों के स्वामी का पद पा सके। यह दासों के स्वामियों, प्रान्त के शासनाधिकारियों और कई प्रकार के मनुष्यों—बुरे, विनम्र और सम्मानित—और उनके वातावरण एवं सनकी और कंजूस का बिल्कुल नंगा चित्र है। चिदिकोव उच्चवंश का नहीं (Low origin) है और वह उस नए वर्ग का प्रतीक है जो कि समाज में उच्च स्तर प्राप्त करना चाहता है जिसकी सारी नैतिकता उसके रुपये के सन्दूक में है। चिदिकोव अच्छी-सी जमींदारी और आराम की जिन्दगी चाहता है। विद्यार्थी-जीवन से ही वह एक साहसपूर्ण कार्य से दूसरे साहसपूर्ण कार्य में लगता रहा है और उसे मृत दासों के व्यापार में कोई खराबी नहीं दीखती। प्राचीन (Landed Gentry की) जमींदारियों का बिकना और ऐसे लोगों द्वारा खरीदा जाना गोगल को बुरे समय का दुखद चिह्न प्रतीत होता था उनमें से एक पात्र पिछड़े हुए आलसी जमींदारों को स्पष्टतया सुप्रबन्ध का उदाहरण करने के लिये ही है। अधिकारी और जमींदारों के सजीव वर्णन के साथ-साथ पुस्तक में दास और किसानों के यथार्थवादी चरित्र भी हैं। वर्णन में भावात्मक उद्गार और लेखक के विचारों तथा व्यक्तिगत संस्मरणों से कभी-कभी व्याघात भी पड़ता है।

'मृत आत्मा' सन् १८४० के जमाने की बड़ी महत्त्वपूर्ण चीज सिद्ध हुई। यद्यपि प्रतिक्रियावादी आलोचकों ने इसे अवास्तविक और रूस का अपमान बताया, फिर भी प्रगतिवादी रूस ने उसे बड़े चाव से पढ़ा। इस पुस्तक में गोगल का जुकोव्स्की से कहा हुआ यह उद्देश्य कि 'कला को संसार के लोगों को हमारे सामने इस प्रकार उपस्थित करना चाहिए कि हममें से प्रत्येक उनको सजीव माने, और 'कला को हमारी जनता के अच्छे गुणों और विशेषताओं को हमारे सामने रखना चाहिए' पूरा हो गया।

गोगल का ऐतिहासिक महत्त्व आलोचनात्मक यथार्थवाद (Critical realism), जो सन् १८४० में स्वाभाविक वाद (Natural School) कहा जाता था, के संस्थापक होने में अन्यतम कलाकार, हास्यलेखक होने और उसकी राष्ट्रीय भावना एवं रूस की भविष्योन्नति के विश्वास में है। उसकी ख्याति उसके जीवनकाल में ही देश-विदेश में फैल गई थी। उसकी कृति मानवतावाद की विश्व विख्यात कृतियों में अमर है।

विसेरियन ग्रिगोर्येविच ब्येलिंस्की (१८११–१८४८)

समाज तथा कला के सम्बन्ध में प्रगतिशील जनात्मक क्रांतिवादी (Democratic revolutionary) दर्शन के प्रतिपादक और व्याख्याता तथा समालोचक के रूप में ब्येलिंस्की ने अपने समय के साहित्यिक जीवन में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण योग दिया। उसके शत्रु उसे 'साहित्यिक विद्रोही' कहा करते

थे। वह कला की सत्यता, उसके प्रगतिशील सामाजिक कर्तव्य, उसकी लोकगत जातीय भावना, समाज के उच्च उद्देश्यों को दृढ़ बनाकर उसकी उद्धारक शक्ति और स्वतन्त्रता के लिये उसके आह्वान में, विश्वास करता था और उसका समर्थक था। उसकी आलोचनात्मक विशेषता इसी बात में मिलती है कि उसने लेरमन्तोव और गोगल आदि कलाकारों की प्रतिभा को फौरन पहचान लिया। तुर्गन्येव का कहना है कि 'वह सुन्दरता और अनुपयुक्त दोनों को पहचान लेता था और सच को झूठ से अलग कर निर्भीकता और साहस से अपना निर्णय देता था, और अपने फैसले को शक्ति और आवेश के साथ किन्तु बिना सजावट के अभिव्यक्त करता था।' उसका बड़ा प्रभाव था और यद्यपि उसके निजी मित्रों में तुर्गन्येव, हर्जेन और नेक्रासोव जैसे प्रसिद्ध व्यक्ति थे फिर भी वह अप्रसिद्ध और अज्ञात लेखकों को बराबर प्रोत्साहन देता था। रूसी के आचार्य लेखकों के ऊपर लिखी गई ब्येलिन्स्की की कृतियां सर्वोत्तम आलोचनाएँ मानी जाती हैं।

जब कि वह मास्को विश्वविद्यालय का छात्र था उसने १८३१ में सेंसर के पास एक 'नाटकीय कहानी' भेजी जिसमें उसने उन मनुष्यों के अत्याचार पर घृणा प्रकट की थी जो दूसरे मनुष्यों को सताने के अन्यायपूर्ण और नष्टकारी अधिकार का दावा करते हैं, और दास-प्रथा के दुर्गुणों का उद्घाटन किया था। सेंसर की कमेटी ने इस रचना को अनैतिक (Immoral) और विद्यालय के लिये लज्जाजनक कलंक बताया। लेखक के सामने साइबेरिया के निर्वासन या सेना की नौकरी का चुनाव रक्खा गया। असंतोषजनक कार्य के नाम पर वह विश्वविद्यालय से हटा दिया गया और वह सम्पादन और अनुवाद में लगा। सन् १८३४ में उसका प्रथम महत्त्वपूर्ण आलोचनात्मक लेख 'साहित्यिक भावनाएँ' निकला। वह स्तानकेविच गोष्ठी में अच्छी तरह विख्यात हुआ और आगे आनेवाले वर्षों में वह अत्यन्त प्रतिभाशाली एवं गम्भीर आलोचक प्रसिद्ध हुआ।

उसे बराबर आर्थिक कठिनाइयाँ रहीं इसलिये उसे पाठ्यपुस्तक लिखने और पढ़ाने (ट्यूशन) के लिये बाध्य होना पड़ा। अन्त में उसने पीटर्सबर्ग के 'पितृभूमि के समाचार' (Fathenland notes) में आलोचक की नौकरी कर ली। इसी समय के लगभग (१८३९) उसकी दार्शनिक खोजों ने उसे आदर्शवाद से भौतिकवाद की ओर मोड़ दिया। इसके सिवा राज्य का सामंती रूप (Feudal Serf) जितनी नग्नता से पीटर्सबर्ग में दिखाई पड़ता था उतना मास्को में नहीं। इस व्यवस्था की ओर उसकी घृणा और भी तीव्र हुई और उसके सामाजिक राजनीतिक विचारों में और स्पष्टता आई। इन विचारों का खुले रूप से प्रकाशन निःसन्देह असम्भव था फिर भी उसने तात्त्विक सिद्धान्तों को साहित्य

शास्त्र पर लागू कर उनकी बराबर अभिव्यक्ति की। उसने इस समय लिखा कि 'सर्जनात्मक स्वतन्त्रता का युग-सेवा से सामंजस्य स्थापित करना सरल है। मातृ-भूमि के हितों के साथ अपनी इच्छाओं के सामंजस्य के लिये केवल नागरिक बनने और अपने को उसका पुत्र समझने की आवश्यकता है।'

सन् १८४६ में 'समकालीन' (Contemporary)—जिसे नेक्रासोव और उसके मित्रों ने ले लिया था—में नौकरी करने से उसे काम करने की सुविधाएँ प्राप्त हुई। किन्तु वह तपेदिक का रोगी हो गया था और उसके मित्रों ने उसे विदेश जाकर दवा करने के लिये आर्थिक सहायता दी। उसने जर्मनी और फ्रांस की यात्रा की। मौत ने उसे शारीरिक यातना और जेल की संभावना दोनों से छुटकारा दिला दिया। दूसरे साल 'पित्राश्येव्स्की गोष्ठी' के लोगों को 'गोगल को लिखे पत्र' का प्रचार करने के कारण कड़ी कैद की सजा दी गई।

ब्येलिंस्की रूसी समालोचना (Literary Criticism) का सच्चा संस्थापक माना जाता है। उसके पहले आलोचना का साहित्य के बीच महत्वपूर्ण योग न था। ब्येलिंस्की यथार्थवाद की ओर बढ़ती प्रारम्भिक (Early) प्रवृत्ति के महत्त्व को समझ सका। वह प्रकृतिवादी 'गोगल स्कूल' या आलोचनात्मक यथार्थवाद का, पूर्व के साहित्यिक युगों के ऐतिहासिक विकास की पूर्णता के रूप में, सच्चा मूल्यांकन कर सका और उसने उसे कला के प्रगतिवादी सामाजिक आदर्श और इस प्रकार रूसी जीवन की वास्तविकताओं और आवश्यकताओं के अनुरूप होने के अत्यन्त निकट माना। इसके साथ सन् १८४० में बहुत से यथार्थवादी स्केच नगर और ग्राम जीवन के सम्बन्ध में (जैसे तुर्गेन्येव के) निकले। इन वर्णनात्मक रचनाओं का मूल्य उनके विषयों के चुनाव में है। सामान्य जनता, क्लर्क, कारीगर, किसान, जीवन की कुरूपता और गरीबी लोकप्रिय विषय बन गए। ब्येलिंस्की ने ऐसे विषयों के लेखकों का समर्थन किया क्योंकि वे सौंदर्य और शुद्धता के सरकारी आदर्श के विपक्ष में जीवन की कटु वास्तविकताओं को सामने लाकर बहुत बड़ी सेवा कर रहे थे।

ब्येलिंस्की ने लिखा है कि 'प्रकृति, कला का चिरंतन आदर्श है, और मनुष्य प्रकृति का सबसे उदार और बड़ी चीज है' क्या किसान मनुष्य नहीं है, किन्तु अशिक्षित मनुष्य में क्या रोचक मिल सकता है? उसकी आत्मा, दिल, दिमाग, प्रवृत्तियां सभी कुछ उतनी ही रोचक हैं जितनी कि शिक्षित मनुष्य की। 'प्रकृतिवादी' स्कूल के विषयों के चुनाव में ब्येलिंस्की को एक नए सामाजिक आन्दोलन (Movement) या प्रगति की झलक मिली।

ब्येलिंस्की ने केवल रूसी साहित्य के बारे में ही नहीं लिखा, प्रत्युत उसकी क्रांतिकारी रचनाएँ तत्कालीन सभी विषयों—रंगमंच, इतिहास, दर्शन,

'सन् साठ' का युग

वास्तव में यह युग निकोलस प्रथम की (१८५५ में) मृत्यु, [illegible] पराजय (सन् १८५६), और अलेक्जेंडर द्वितीय [illegible] से शुरू होता है। इस युग की मुख्य घटना दास प्रथा का अन्त है। (फरवरी १८६१) यह तिथि इस युग को पूर्व-सुधार और उत्तर-सुधार में विभक्त कर देती है। नवीन औद्योगिक प्रबन्ध का आरम्भ पूर्व-सुधार-युग की [illegible] है। जिससे परिणाम-स्वरूप सामन्तशाही में परिवर्तन की आवश्यकता और भी बढ़ी। क्योंकि उन्नति के मार्ग में पुलिस, चर्च का प्रभाव, और किसानों पर जमींदारों की निरंकुशता बाधक बनी और फलतः जनता का असन्तोष और भी गहरा हुआ। क्रीमिया के युद्ध ने यह स्पष्ट बना दिया कि प्राचीन व्यवस्था इतनी सड़ गयी है कि वह अपनी सेना को भी ठीक और दृढ़ बना कर नहीं रख सकती। इस युद्ध के वीर सैनिक अपने मालिकों की रियासतों में बिना किसी नागरिक अधिकार के दास-रूप में ही वापस लौटे। सारे देश में किसान विचलित हो उठे, और किसान विद्रोह हुए और हलचल बढ़ने लगी।

इसके साथ सभी क्षेत्रों में बौद्धिक जीवन जाग्रत हुआ, और रूसी वैज्ञानिकों के शरीर-विज्ञान, (Natural Science) और आयुर्वेद के सैद्धान्तिक और व्यावहारिक कार्य की विदेशों में ख्याति हुई। विज्ञान के (प्रति इस) रुचि का दार्शनिक विचारों पर भी प्रभाव पड़ा। अपनी भौतिकवादी रुचि और दृष्टिकोण के कारण 'सन् साठ' के ये व्यक्ति 'सन् चालीस' के आदमीयों से भिन्न और पृथक् हैं। विद्यार्थियों में अब साधारण स्थिति और मध्यम वर्ग के छात्रों की संख्या (उच्च वर्ग के विद्यार्थियों की अपेक्षा) अधिक थी। उनका दृष्टिकोण यथार्थवादी था और वे साहस के साथ सामन्तशाही प्रथा और पुलिस विभाग (Police Bureaucracy) की आलोचना करते थे।

१८५५ में चर्निश्येव्स्की ने अपना निबंध (थीसिस) 'यथार्थता से कला के सौंदर्यवादी संबंध' (Aesthetic Relations of Art to Reality) पीटर्सबर्ग यूनिवर्सिटी में प्रस्तुत किया। यह प्रजातंत्रवादी नवयुवकों के लिये क्रांतिवादी चुनौती थी जिसमें कि युवक दार्शनिक ने भौतिकतावादी सौंदर्यशास्त्र के मुख्य सिद्धांतों का प्रतिपादन किया था। इसमें जर्मन दार्शनिक फायरबाख के विचारों का आधार लिया गया था किन्तु सेंसर के निर्णय से लेखक उसके नाम का उल्लेख न कर सका।

उसने कहा कि कला केवल सौंदर्य तक नहीं सीमित रखी जा सकती। उसमें

वास्तविकता अर्थात् प्रकृति और जीवन के बीच मनुष्य को आकृष्ट करनेवाली सभी चीजों का समावेश है। जीवन में जो सामाजिकता का अंश है वही कला का आधेय है। कला को सचाई के साथ जीवन का चित्रण, जीवन की व्याख्या और जीवन पर अपना निर्णय देना चाहिए और इस प्रकार जीवन में परिवर्त्तन को सम्भव बनाना चाहिए। कलाकार को वर्त्तमान की समस्या पर ध्यान देना चाहिए। उसे स्वयं इन समस्याओं को पेश करना चाहिए, और उनके सुलझाने का मार्ग बताना चाहिए। किन्तु उसके लिये आन्तरिक स्वतन्त्रता परम आवश्यक है और उसे वही लिखना चाहिए जो कि उसके दिल में है और जिसका वह अनुभव करता है। यदि कोई विचार ठंडा, अस्पष्ट और काव्य की संवेदनशीलता से हीन है तो वह काव्य की परिधि से बाहर है। कविता कल्पना और स्पष्टता चाहती है। पर चर्निश्येव्स्की के कला के आदर्शवादी सिद्धांत के इस आक्रमण का और उसके साहित्यशास्त्र का, उस युग के इतिहास और साहित्य में बड़ा महत्व है। आदर्शवादी बादलों को हटाकर उसके निबंध ने ब्येलिंस्की के काम को आगे बढ़ाया और ऐसा सैद्धान्तिक आधार प्रस्तुत किया कि जिस पर यथार्थवादियों का सर्जनात्मक कार्य बढ़ा।

'सन् साठ' के जमाने की, रूसी संस्कृति के इतिहास पर स्थायी छाप पड़ी, और यह कलात्मक सैद्धान्तिक (Ideological) विकास के मार्ग में आगे बढ़ता हुआ कदम साबित हुआ। इस युग में ताल्स्ताय, तुर्गन्येव, नेक्रासोव, साल्तिकोफ श्चेद्रिन जैसे प्रतिभाशाली लेखक और चर्निश्येव्स्की, दोब्रोल्यूबोफ और पिसारेव जैसे समालोचकों की कृतियाँ प्रौढ़ता को पहुंचीं। यथार्थवाद और जीवन के प्रति सच्ची कला केवल साहित्य में ही नहीं प्रत्युत चित्रकारी, नाटक और संगीत सभी क्षेत्रों में विजयी हुई।

यद्यपि अब यह स्पष्ट था कि सारी बुराइयों की जड़ दास प्रथा है फिर भी मुक्ति और छुटकारे के उपाय के संबंध में मतभेद था। चर्निश्येव्स्की विद्रोह और जन-संघर्ष का समर्थक था। उसने इन सुधारों के सच्चे स्वरूप को समझ लिया था कि इनसे नाम के लिये तो किसान स्वतंत्र हो जायगा किन्तु फिर भी जमींदारों का दूसरे रूप में शिकार बना रहेगा। 'फरवरी मेनिफेस्टो' के अवसर पर सरकार ने जमींदारों को किसानों के क्रोध से बचाने के लिये सारे देश में सेना तैनात कर दी और पुलिस ने 'उन नौकरों को पीटने के लिये, जो कि मालिक की आज्ञा न मानेंगे' कोड़े तैयार कर लिये।

स्थिति की विषमता का पता कई 'क्रांतिवादी मैनिफेस्टो' से लगता है, जो कि १८६१–६२ में निकले। दो सौ विद्यार्थी आन्दोलनों में भाग लेने के कारण जेल में डाल दिये गए, और किसान-विद्रोह सेना द्वारा कुचल दिया गया।

मृत्यु का आभास मिलने लगा—यह दोब्रोल्युबोव के जीवन की पूरी कहानी है।" (नेक्रासोफ)। उसमें बड़ी जल्दी प्रौढ़ता आई। और यद्यपि वह पच्चीस वर्ष की अवस्था में मर गया फिर भी उसका अपने समकालीनों और भविष्य की पीढ़ियों पर बड़ा प्रभाव पड़ा।

'पेडागागिक इन्स्टिट्यूट' में पढ़ते हुए उसने १८५६ में अपना पहला लेख 'समकालीन' से छपवा। चर्निशेव्स्की उसे अपने पत्र के घनिष्ठ सम्पर्क में लाया। सन् १८५७ में उसने इंस्टिट्यूट को छोड़ दिया और पत्र के आलोचनात्मक ग्रंथ, सूची-विभाग के सम्पादन में लग गया।

समकालीन साहित्य के मिथ्यात्व और वर्गीय स्वार्थपरता का उद्घाटन करने वाले लेखों ने उसे युवक 'सामान्य लेखकों' का नेता बना दिया। उसकी गद्य-पद्यमय साहित्यिक कृतियां बहुत हैं जिसमें चेद्रिन, ओस्त्रोव्स्की, गोन्चारोव, तुर्गनेव आदि पर उसके आलोचनात्मक लेख स्थायी निधि के रूप में हैं। उसके मुख्य विचारों का संक्षिप्त उल्लेख इस प्रकार है—

(१) लेखक को जनता और उसकी आवश्यकता के अत्यन्त निकट होना चाहिए। लेखक या उसकी कृति का मूल्यांकन युग विशेष और जनता की स्वाभाविक आकांक्षाओं की (उसमें) अभिव्यक्ति के अनुपात से आंका जाता है।

(२) कला को जनता की सेवा और उसके हितों की अभिव्यक्ति करनी चाहिए।

(३) कला को जीवन से दूर करनेवाली प्रवृत्ति का विरोध करके उसने चर्निशेव्स्की के विचारों को आगे बढ़ाया। कला को जीवन का दिग्दर्शन और मूल्यांकन करना चाहिए। कला का सर्वोच्च गुण उसकी सत्यता है। यह किसी संकीर्ण अर्थ में नहीं है। प्रत्युत लेखक की पारदर्शी दृष्टि वस्तुओं के सारतत्व के तल तक व्याप्त है।

(४) उसने समालोचना के स्तर को ऊंचा उठाया। अपने ढंग को 'यथार्थवादी आलोचना' कहा। उसने कहा कि आलोचना का 'लेखक की रचना के प्रति वही दृष्टिकोण रखना चाहिए जैसा कि जीवन के प्रति वह रखती है अर्थात् वह इसका अध्ययन करती है, सामान्य आधार निश्चित करती है और उसकी तात्विक विशेषताओं को एकत्रित करती है।' आलोचना का काम कलाकार की देन की व्याख्या है। इसे कृति के कलात्मक और सामाजिक मूल्य के निर्धारण में पाठक की सहायता करनी चाहिए। यह बताते हुए कि कभी कभी लेखक स्वयं अपनी कृति के अर्थ को ठीक नहीं बता पाता उसने यह कहा कि आलोचक का काम 'कलाकर की कृति में छिपे हुए मतलब को समझाना है।'

सामाजिक महत्व को प्रभावपूर्ण ढंग से बतानेवाले लेखों में ओस्त्रोव्स्की

ों का अध्ययन और गोन्चारोफ आदि पर उसके अन्य लेख अत्यन्त
र्ण हैं।

पिसारेव (१८४०–१८६८)

डेमोक्रेटिक लेखकों में यह सबसे अधिक प्रभावशाली था। उसके पत्र शब्द' की स्थापना १८६० में हुई। उद्देश्य में 'समकालीन' के समान ए भी सामान्य जनता की बातों की अपेक्षा बुद्धिमान् (Intellectual) की समस्या की अभिव्यक्ति उसमें अधिक थी। पिसारेव के ग्रंथों का मुख्य सबका हित या विश्व की मानवता की एकता और व्यक्ति की दास-प्रथा क है। उसने अपने जीवन को भूखे और नंगों की समस्या को हमेशा के सुलझाने के लिये लगा दिया। उसका आदर्श नायक 'यथार्थवादी' ोचने समझनेवाला मज़दूर जो कि अपने बोझ को प्रेम के साथ ढो । विज्ञान की उन्नति में उसे जनता के हित की समस्या का सुलझाव दिया। उसने समाज में विज्ञान के काम (Role) पर ज़ोर दिया, विज्ञान ान्य ज्ञान के प्रचार में रुचि दिखाई, और (Natural Science) और के संबंध को दृढ़ किया। उस समय के बहुत से आदमियों के समान इसके समाज के वर्ग-संघर्ष का रूप स्पष्ट न था। और वह सोचता था कि विज्ञान मस्याएँ सुलझा देगा और जनमत को जाग्रत् कर नवीन जातीय नेतृत्व को देगा।

ीवन के पिछले वर्षों में वह सौंदर्यशास्त्र (Aesthetics) को नष्ट करने ता। जिस सीमा तक कला लोगों को गम्भीर और आवश्यक समस्याओं के ाने से विरत करती है उस हद तक कला आपत्तिजनक हो सकती है। उसने क कहा कि आपरा, बैले, कान्सर्ट, थियेटर आदि में रुपया अधिक लगता है ा सदुपयोग गाँव की आर्थिक दशा सुधारने में, फैक्टरी, रेल आदि बनाने में । उसे पुश्किन की कविता में कोई गुण न दिखा और न वह प्रगतिशील ों के विकास में पुश्किन के प्रभाव को ही समझ सका।

न विचारों, और मज़दूरों के सक्रिय रूप के महत्व को न मानने में पिसारेव येव्स्की और दोब्रोल्यूबोफ से बहुत पिछड़ा हुआ था। फिर भी उसकी ती रचना ने लोगों को विचार करने को बाध्य किया, और प्रतिक्रियावाद के ारपूर्ण समय में हुये दोब्रोल्यूबोफ की मृत्यु के बाद और चर्निश्येव्स्की के न के बीच—सैद्धांतिक संघर्ष को जारी रखा।

व्यंग (Satire)

सन् 'पचास' और 'साठ' के ज़माने में चेद्रिन के अमर गद्यात्मक व्यंग निकले

और इसी समय व्यंग लिखनेवाले कवियों का वर्ग—जिसमें नेक्रासोव, दोब्रोल्यूबोव और कुरोच्किन (V. S. Kurochkin) थे—सक्रिय हुआ। 'सीटी' और 'चिनगारी' हास्य और व्यंग के पत्र थे जो इस समय इन गोष्ठियों में स्थापित हुए, 'चिनगारी' को कुरोच्किन ने चलाया, वह बड़ा बुद्धिमान कवि था और इसने प्राचीन व्यवस्था (Bureaucrats), लिबरल और साहित्य के अस्पष्टतावादियों (Obscurantist) का बड़ी निर्दयता से मज़ाक उड़ाया। वह दूसरे क्षेत्रों में भी क्रियाशील था और वह क्रांतिकारी समाज 'ज़मीन और स्वतन्त्रता' का नेता था। यद्यपि यह चीज़ छिपा रखी गई फिर भी वह गिरफ्तार कर लिया गया और कुछ समय के लिये जेल में डाल दिया गया।

डिमोक्रेट और यथार्थवादियों, तथा शासन के समर्थकों के बीच होने वाले संघर्ष ने 'शुद्ध कला' के स्कूल या वर्ग को जन्म दिया जो कि कटु वास्तविकता से भागता है और ऐसी रचनाओं (Forms) को प्रोत्साहन देता है जो कि कुछ चुने हुए लोगों के लिये हैं, इस वर्ग के कम से कम दो कवियों का उल्लेख आवश्यक है।

अफानसी अफनास्येविच फ्येत (१८१०-१८९२)

इस कवि ने सजीव विरोध का दृश्य उपस्थित किया। यह दैनिक जीवन में अत्यन्त व्यवहारकुशल जमींदार किसान था और साहित्य के क्षेत्र में मुक्तक गीत का रचयिता।

उसकी बहुत-सी छोटी कविताओं का कोई विषय नहीं है, वे कवि के हृदय में संचरित और तिरोहित होनेवाली भावनाओं की अभिव्यक्ति है, उसका पक्ष था कि कविता का उद्देश्य केवल सौंदर्य है और उसकी सर्जना न तो बुद्धि से नियंत्रित है और न चेतन है, जिस साहित्य में कोई 'वाद' है वह कूड़ा-कर्कट है, उसके प्रेम के मुक्तक गीत, अनुभूति की विविधता और समृद्धि, कोमलता और आवेश (Warmth) के लिये अपूर्व हैं, अपनी प्राकृतिक कविता में उसने प्रकृति से तादात्म्य स्थापित किया और उसे अपना मित्र माना, उसके दृश्यचित्रण सर्वोत्तम हैं। चर्निश्येव्स्की ने उसे केवल कवि ही न माना प्रत्युत उसे कवि-गायक कहा।

अपोलन निकोलयेविच मायकोव (१८२१–१८९७)

इसी प्रवृत्ति का कवि था, वह उच्च (Aristocratic) खान्दान का वंशज था और अत्यन्त शिष्ट परिवार में पला था। थोड़े समय तक उसका लेखकों और ब्येलिंस्की के साथ संबंध रहा। यह प्रभाव अधिक

समय नष्ट न करता और वह वास्तविकता से विरक्त होकर ग्रीक और लैटिन साहित्य और प्राचीन पौराणिक कथाओं से अपना विषय चुनने लगा। उसमें प्राचीन ग्रीक संसार से उसने भी शक्ति और चुनकर उसके स्पष्ट प्रांजल चित्रण की अपूर्व शक्ति थी। उसके कथानकों में—वर्तमान रूसी विषयों की अपेक्षा—प्राचीन रोमन, वसंतम और गीत, स्पेन की कथाएँ, इटली के गीतकाव्य आदि समाहित हैं। उसके काव्य की भावना स्पष्टतया उच्चवंशीय (Aristocratic) है। उसकी नवीनता और कल्पनात्मक प्रकृति-चित्रण है जिसमें उसका भावाधिकार (और उसकी सरल भाषा) अत्यन्त सौन्दर्यपूर्ण प्रभाव उपस्थित करता है। उसमें त्यूत्चेव प्रकृति-कवि त्यूत्चेव की दार्शनिक गम्भीरता का अभाव है और उसके छन्दों में सजीवता नहीं है। किन्तु 'फ़ेत' के समान वह शालीनता और संगीत की लय और छंद का आचार्य है।

इवान अलेक्ज़ेंडोविच गोनचारोफ़ (१८१२–१८९१)

उसका जन्म सिम्बर्स्क नाम के सुपरिचित शहर में हुआ था। वहाँ का जीवन प्राचीन (Patriarchal) पारिवारिक ढंग का था। उसका वंश सौदागर और उच्चवर्ग (Aristocrat) के बीच का था। उसके यहाँ अनाज का व्यापार होता था और उसकी बड़ी लियाकत थी। लेखक के पिता की मृत्यु पर उसकी माँ व्यापार का काम सँभालती रही और परिवार के एक मित्र ने उसकी शिक्षा-दीक्षा का प्रबन्ध किया। इस प्रकार गोन्चारोफ़ को सर्वोत्तम शिक्षा मिली। उसने व्यावसायिक स्कूल और यूनिवर्सिटी दोनों की शिक्षा पूरी की।

मास्को यूनिवर्सिटी में वह ब्येलिन्स्की, हर्ज़ेन, स्तान्केविच, लरमन्तोफ़ आदि के सम्पर्क में आया किन्तु उसने अपने को किसी वर्ग में सम्मिलित न किया। राजनीति के प्रति उसकी उदासीनता थी। किन्तु दो घटनाओं का उसपर असर पड़ा—सन् १८३२ में यूनिवर्सिटी में पुश्किन का आगमन और उसकी पहली साहित्यिक कृति (फ्रेंच उपन्यासकार 'यूजीन सू' के उपन्यास का अनुवाद) का प्रकाशन। यूनिवर्सिटी से वह अर्थसचिव के विभाग में पीटर्सबर्ग में नौकर हो गया। वहाँ उसकी, कवि मायकोफ़ के परिवार से बड़ी घनिष्टता हो गई।

उसका पहला महत्त्वपूर्ण ग्रंथ 'सामान्य इतिहास' (उपन्यास) सन् १८४७ में 'समकालीन' में छपा और इससे फौरन लोगों का ध्यान उसकी ओर गया। वह इस समय पैंतीस वर्ष का था। इस तरह यह उपन्यास प्रौढ़ प्रतिभा का परिणाम था।

१८४९ में उसके दूसरे प्रसिद्ध उपन्यास के आरम्भिक अध्याय 'ओब्लोमोफ़ का स्वप्न' के नाम से इसी पत्र में छपे। यह काम आगे न बढ़ सका और

इसकी तथा दूसरे उपन्यास 'कगार' की समाप्ति बहुत वर्षों के लिये टल गई। १८५२ में वह एडमिरल के सेक्रेटरी की हैसियत से विश्वयात्रा पर निकला। उसे अमेरिका और जापान के तट की यात्रा का हाल लिखने का आदेश दिया गया। फलतः १८५८ में दो भागों में गोनचारोफ की यात्रा का ग्रन्थ 'पलड़ा जहाज़' के शीर्षक से निकला।

१८५६ में वह शिक्षा-विभाग में सेंसर नियुक्त हुआ। इस नियुक्ति से सरकारी नीति-परिवर्त्तन की झलक भी मिली। देश की विषम अवस्था, और क्रीमिया के युद्ध के प्रभाव ने जुल्म और सेंसर की कठोरता को कुछ कम करने को विवश किया। गोनचारोफ की नियुक्ति केवल इसी लिये न हुई कि वह सरकार की दृष्टि में विश्वसनीय था प्रत्युत वह अत्यन्त कुशल था। और साहित्यिक संसार में उसका अच्छा नाम और मान था। यह सच है कि तुर्गनेव के 'खिलाड़ी के विचार' का द्वितीय संस्करण उसी के सेंसर रहते छप सका फिर भी पिसारेव के पत्र को कड़ी चेतावनी देने की जिम्मेदारी भी उसी के ऊपर है।

'ओब्लोमोव' १८५७ में जर्मनी में (Mariemlead में) समाप्त हुआ और १८५९ में छपा। १८६० से १८६२ तक वह विदेश में रहा, और फिर सरकारी पत्र का सम्पादक बनकर लौटा। १८६७ में उसने नौकरी से अवकाश ग्रहण किया और १८६९ में वह अंतिम विख्यात उपन्यास समाप्त कर सका। शेष बीस वर्ष तक वह कला आदि पर लेख लिखता रहा। इनमें से वर्तमान और प्राचीन साहित्य पर लिखा हुआ लेख बड़ा अच्छा है। १८९१ में उसकी परिपक्व अवस्था में मृत्यु हुई।

उसके ये तीन उपन्यास 'त्रयी' के रूप में हैं। जो अपने मुख्य विषय के कारण एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। रूसी जीवन के एक युग का दूसरे युग से संक्रांति और परिवर्त्तन इन उपन्यासों की मुख्य कथावस्तु है। स्वयं लेखक ने अपनी कृतियों को इसी दृष्टि से देखा।

'सामान्य इतिहास' में 'सन् चालीस' के ज़माने के रूसी जीवन का चित्रण है जब कि मुख्य संघर्ष पितृसत्ताक (Patriarchal) और बुर्जुआ संस्कृति के बीच था। गोनचारोफ ने प्रगतिशील मध्यम वर्ग का पक्ष लिया और जमींदार संस्कृति के अभावों का उद्घाटन किया।

'ओब्लोमोव' सन् 'पचास' के ज़माने के तीव्र संघर्ष का चित्र उपस्थित करता है। दास-प्रथा के उन्मूलन का प्रश्न बड़ा आवश्यक बन गया था। यह सन् १८६१ के सुधार के पूर्व का ज़माना है। गोनचारोफ प्राचीन व्यवस्था की कड़ी निन्दा करता है किन्तु मन ही मन उसे थोड़ा अफसोस भी हो रहा है।

'कगार' सन् 'साठ' के ज़माने की चीज़ है और उस समय तक पितृसत्ताक

(Patriarchal) जीवन अतीत की वस्तु बन गया था, और बुर्जुआ स्थिति दृढ़ हो गई थी। किन्तु अब क्रांतिवादी डिमोक्रेट के रूप में एक नई शक्ति का आविर्भाव हो गया था जो कि पूँजीवाद की नई विजय को संकट में डाल रही थी। गोनचारोफ अब अनुदार और अपरिवर्त्तनवादी बन गया था। वह इस नई शक्ति से विमुख होकर उच्चवर्ग (Aristocracy) और मध्यमवर्ग से संधि कर रहा था।

इन तीन उपन्यासों में 'ओब्लोमोव' सबसे प्रसिद्ध है। इसका नायक ओब्लोमोव रूसी शब्दकोष में आलसी का प्रतीक बन गया। यह उस बुद्धिमान, भावुक, संस्कृत, नवयुवक का चित्र है जो कि सोफा (बिस्तर) पर पड़ा रहता है और उसके ऊँचे स्वप्न कोरे स्वप्न ही रहते हैं। अपने चारों ओर की चीज़ों को ध्यान से (Critical) देखते हुए भी उसमें न तो संघर्ष में पड़ने की शक्ति है और न इच्छा, और कोई भी संघर्ष में क्यों पड़े जब कि रियासत की आमदनी पर जिंदगी आराम से बिताई जा सकती है। धीरे-धीरे उसके समाज के बंधन शिथिल पड़ जाते हैं और वह किसी प्रकार की विघ्न-बाधा नहीं चाहता और समाज के आमोद से विरत हो जाता है। वह पढ़ना भी छोड़ देता है और भाव में डूबकर क्रियाशून्य बन जाता है। वह परिवर्त्तन से और आराम में खलल डालनेवाली किसी भी चीज़ से सबसे ज्यादा डरता है। वह अपने कारबार की देखभाल भी छोड़ देता है। उसका मित्र जो कि उसके विपरीत बड़ा व्यवहारकुशल है उसे सुधारने का निष्फल प्रयत्न करता है। प्रेम भी उसे सँभालने म असमर्थ सिद्ध होता है। इसे अपनी गलती मानकर वह प्रेम करना भी छोड़ देता है।

'ओब्लोमोव के स्वप्न' में गोनचारोफ मनुष्य की इस अधोगति के मूल कारण को समझाता है। इस मे लेखक जमींदारों के परोपजीवी और मूर्खतापूर्ण जीवन का चित्रण करता है। जिनका खाने पीने के सिवा और कोई ध्येय नहीं है। जिनके पास बहुत से दास हैं और जो अपनी जमींदारी की भी देखभाल नहीं करते। यह वातावरण और पृष्ठभूमि 'ओब्लोमोव' को जन्म देता है। 'ओब्लोमोव' की आदतों और विचारों में इस नाशकारी दास-प्रथा का प्रभाव स्पष्ट है। उसकी आदतों को अच्छी तरह समझनेवाले नौकर भी इसी प्रथा से प्रसूत हैं। इसीलिये अच्छे स्वभाव का होते हुए भी वह अनुदार और अपरिवर्त्तनवादी है, और जब लोग उसे बताते हैं कि उसकी रियासत के पास ही बाज़ार बन रहा है और लोग सड़कों को पक्की बनाना चाहते हैं तो वह परेशान हो जाता है।

जनता ने 'बेकार आदमी' के किंचित् परिवर्त्तित परन्तु सजीव चित्र को फौरन

सहानुभूतिपूर्ण चित्रण करता है। यह समय (Phase) शीघ्र ही बीत गया और वह 'समकालीन' के लेखक-वर्ग के सम्पर्क में आया। १८५६ से उसकी अधिकांश कृतियाँ नेक्रासोव के पत्र में छपीं।

१८५६ में उसका नाटक 'लाभदायक नौकरी' निकला, जिसमें शासन के बेईमान अधिकारियों का नग्न चित्र था। एक ईमानदार आदर्शवादी की रिश्वत न लेने और अपने को बेईमानी से दूर रखने की कठिनाई इस नाटक की कथावस्तु है। इसी वर्ष उसने पर्यवेक्षण के प्रयोजन से वोल्गा की यात्रा की, और इस सम्बन्ध में प्राप्त सामग्री का कई रचनाओं में उपयोग किया, जिनमें 'तूफान' सबसे प्रसिद्ध है।

सन् 'साठ' के जमाने में उसने ऐतिहासिक नाटकों की ओर ध्यान दिया। यह उस जमाने की व्यापक रुचि का ही अंश था जिसके विषय में सार्वजनिक गोष्ठियों में वादविवाद छिड़ा हुआ था। उसके ऐतिहासिक नाटक अतीत के वातावरण के सच्चे चित्र, और जनता के आन्दोलनों के सच्चे चित्र के लिये प्रसिद्ध हैं। सत्रहवीं शती के अन्त ने उसे अपनी ओर आकृष्ट किया। यह समय विरोधी शक्तियों के संघर्ष का युग था। उसके कथानक देशभक्ति और जातीय स्वतंत्रता की भावना से पूर्ण हैं।

'तूफान' के बाद की रचनाओं में ओस्त्रोव्स्की ने बुरे दिनों के फेर में पड़े हुए प्राचीन रईसों का समावेश किया और इस प्रकार प्राचीन व्यवस्था के टूटने का दृश्य दिखाया। वह नए ढंग के सौदागरों का चित्रण करता है जो पुराने व्यापारियों के समान पिछड़े हुए और अशिक्षित नहीं वरन् व्यवसायपटु और रुपया कमानेवाले हैं। इसके साथ उसने मजदूरों और दूसरे काम करनेवालों का सहानुभूतिपूर्ण चित्रण भी किया। उसके सबसे प्रसिद्ध नाटकों में एक बिल्कुल दूसरे ढंग का और निराला है। 'हिमकन्या' (१८७३) अत्यन्त सुन्दर लोककथा के आधार पर बना हुआ काव्य-नाटक है।

१८५१ से वह अपनी नाटकीय कृतियों (की आमदनी) पर निर्भर था। यद्यपि ऊपर से उसका जीवन शांत दीखता था फिर भी उसे अपने बड़े परिवार के पालन में बड़ी कठिनता हो रही थी। वह शिकायत करता है कि मुझे अपने नाटकों को अभिनय के लिये स्वीकृत कराने को खुशामद करने और चाल चलने को विवश होना पड़ता है। रंगमंच पर उस समय सरकार का एकाधिकार था और उसे अपने कुछ नाटकों के अभिनय पर कुछ भी पैसा न मिला।

उसके अन्य कार्यों में, संकटापन्न लेखकों की सहायक सभा (१८५९), अभिनेता गोष्ठी (१८५९), रूसी नाटककार और आपरा रचयिता की सोसायटी (१८७४) की स्थापना है।

१८६१ में अभिनेताओं की दशा और उनके सम्बन्ध के कानून की जाँच पड़ताल के लिये नियुक्त कमीशन में उसने जातीय थियेटर की योजना पेश की और प्राइवेट रंगमंच के खोले जाने की स्वतन्त्रता के लिये कहा। १८८६ तक उसे कोई ऐसा अधिकारपूर्ण पद न मिला कि वह रंगमंच-सम्बन्धी सुधार की अपनी इच्छा पूर्ण कर सके। अब वह ड्रामेटिक अकेडमी का डाइरेक्टर नियुक्त हुआ और मास्को थियेटर में उच्च पद पर हुआ। उसका स्वास्थ्य बिगड़ चुका था। इसी साल उसकी मृत्यु हुई।

यथार्थवादी नाटक के आचार्य होने से ओस्त्रोव्स्की ने रंगमंच पर रूसी जीवन का सच्चा चित्र प्रस्तुत किया। सौदागर-वर्ग के गार्हस्थ्य जीवन के दृश्यों में हमें उस वर्ग की निरंकुशता, अज्ञान, स्त्रियों का हीन पद और उसका अंधविश्वास देखने को मिलता है। सौदागरों के सिवा दूसरे वर्ग के सजीव पात्र भी हैं जैसे किसान, अफसर, जमींदार, क्लर्क, मजदूर आदि। संवाद प्रत्येक वर्ग की जीवित भाषा का प्रतिबिम्ब है। गाने, कहावतें, लोगों की रीति-रिवाज और परम्परा (के चित्रण) से इस बात का पता लगता है कि ओस्त्रोव्स्की ने लोकपरम्परा और साहित्य से कितनी सामग्री ली। उसके क्रियाशून्य वातावरण के अनुरूप ही कथानक का मंदगति से विकास होता है। वह सनसनीदार और भावुकतापूर्ण घटनाओं को दूर ही रखता है। हास्य और व्यंग की शक्ति ने उसका साथ कभी न छोड़ा। उसके समकालीनों ने उसे यथार्थवादी नाटक की नींव रखनेवाला और थियेटर को संजीवनी देनेवाला प्रतिभाशाली व्यक्ति माना। उसके सामाजिक व्यंग और गंभीर मानवता का साहित्य पर स्थायी प्रभाव पड़ा।

इवान सर्ग्येविच तुर्गेन्येव (१८१८–१८८३)

तुर्गेन्येव उच्चवंश (Aristocratic) किन्तु गरीब सैनिक अफसर का पुत्र था। इसके पिता ने एक अधेड़ धनवान स्त्री से विवाह किया और स्त्री की रियासत में सुख का जीवन व्यतीत करने लगा। तुर्गेन्येव की माँ बुद्धिमान, और पढ़ी लिखी किन्तु ज़िद्दी और निरंकुश थी। तुर्गेन्येव की कहानियों के बहुत से पात्र उसी के रंगढंग पर चित्रित किये गए हैं ('प्रथम प्रेम' 'स्तेप का किंग लियर' आदि)। बाल्यावस्था में अपने यहाँ के वातावरण में देखी गई क्रूरता से ही उसके हृदयों में दास-प्रथा के प्रति असीम घृणा पैदा हुई। उसकी निजी शिक्षा बहुत अच्छी और उसके घर का पुस्तकालय बड़ा अच्छा था, जिसमें फ्रेंच की पुस्तकें बहुत थीं। बाद में परिवार मास्को चला गया और १८३३ में तुर्गेन्येव यूनिवर्सिटी में पढ़ने गया। उसके इस समय के प्रिय लेखक शेक्सपियर, बायरन,

पुश्किन, लेरमन्तोफ आदि हैं। उसने कुछ कविताएँ भी लिखीं जो १८३६ में 'समकालीन' में छपीं।

फिर बर्लिन में उसने इतिहास और दर्शन पढ़ा। यहाँ उसकी स्तानक्येविच, ग्रनोव्स्की और बाद में बकूनिन से मित्रता हुई। १८४२ में पीटर्सबर्ग से एम० ए० की डिग्री ली। अब साहित्य में उसकी रुचि बहुत बढ़ गई थी। वह ब्येलिंस्की के सम्पर्क में आया जिसने उसकी बुद्धि और बातचीत की शक्ति की बड़ी प्रशंसा की। १८४३ में 'परशा—एक पद्यबद्ध कहानी' छपी जिससे प्रतिभाशाली कवि के रूप में उसकी प्रतिष्ठा हुई।

इस समय उसकी भेंट विख्यात गायिका 'पलीना विरादो' (Palina Virado) से हुई और इस समय से वह उसके साथ बँध-सा गया। जब यह परिवार विदेश गया तो तुर्गेन्येव भी उसके साथ गया। इस प्रकार उसके जीवन का बड़ा भाग रूस के बाहर बीता। ब्येलिंस्की के साथ जर्मनी की यात्रा के बाद वह 'विरादो' के साथ पेरिस में बस गया। यहाँ उसकी हर्जेन से मित्रता हुई और उसने १८४८ की क्रांति भी देखी।

माँ से झगड़ा होने पर (और फलतः) माँ से पैसे न मिलने पर उसे पैसा कमाने के लिये विवश होना पड़ा। और वह 'समकालीन' और दूसरे पत्रों में काम करने लगा। १८५० में अपनी माँ की मृत्यु पर उसे सारा धन मिला। कुछ समय तक वह अपनी रियासत, मास्को और पीटर्सबर्ग में रहा और उसने कुछ नाटक लिखे। गोगल की मृत्यु पर तुर्गेन्येव का लिखा हुआ संस्मरण (१८५२) सेंसर द्वारा मना कर दिया गया। तुर्गेन्येव ने फिर भी उसे मास्को के एक पत्र में भेज दिया जहाँ कि वह छपा। इस पर वह गिरफ्तार कर लिया गया और निर्वासित करके अपनी रियासत पर भेज दिया गया। निर्वासन का असली कारण 'खिलाड़ी का रेखाचित्र' था जो 'समकालीन' में छपा था। राजधानी में लौटने पर उसके सर्जनात्मक युग का बड़ा व्यस्त समय शुरू हुआ। 'मूमू', 'प्रतिवर्त्तन' आदि कहानियाँ, 'रूदिन' (उपन्यास, १८५६), इसके बाद बहुत-सी पुस्तकें निकलीं जो कि समकालीन साहित्य की महत्वपूर्ण घटना मानी गईं— 'रईसों का घर' (Nest of Gentry, १८५८), 'आरम्भ पर' (On the Eve, १८५९), 'पिता और पुत्र' (१८६२), 'धुंआँ' (१८६७)।

जर्मनी, इंग्लैंड, इटली, आस्ट्रिया, फ्रांस आदि जगहों मे थोड़े दिन रहते हुए वह जीवन भर घूमता रहा। वह साल में एक बार रूस जाता था। अपने साथियों से उसका पत्रव्यवहार बराबर चलता रहा और रूस तथा पश्चिमी योरप की सांस्कृतिक प्रगति और घटनाओं पर वह बड़ा ध्यान रखता था।

समय समय पर उसका तालस्ताय, दोस्तोव्स्की, गोनचारोफ, हर्जेन आदि से

तीव्र मतभेद हुआ। उसने 'समकालीन' से अपना सम्बन्ध तोड़ दिया। प्रगतिशील आलोचकों से भी उसका मतभेद बढ़ता गया। 'पिता और पुत्र' के छपने पर जो वादविवाद छिड़ा उसमें उस समय के राजनीतिक और साहित्यिक संघर्ष की झलक वर्तमान है।

तुर्गेन्येव की सभी प्रधान कृतियों पर जोरों का वादविवाद छिड़ा। वह प्रथम रूसी लेखक था जिसका विदेश में महान् उपन्यासकार के रूप में आदर हुआ। फ्रांस में वह प्रगतिशील यथार्थवादियों—एमिले ज़ोलामोपासां—और विशेषकर फ्लावर्ट (जो कि उसका अन्यतम मित्र था) के संपर्क में आया। प्रवासी रूसियों से भी उसका सम्बन्ध था। वह नए लेखकों को बराबर बढ़ावा देता था। विदेश में रूसी साहित्य को अधिक से अधिक प्रचारित करने में वह सदैव तत्पर रहता था।

१८७९ में उसके रूस लौटने पर उसका बड़ा शानदार स्वागत किया गया। सन् सत्तर के युवक उसकी साहित्यिक और सामाजिक सेवा के महत्त्वों को स्वीकार करते हुए उसकी ओर बड़े प्रेम से बढ़े। इन स्वागतों से अधिकारी बड़े अप्रसन्न हुए और उसे जल्दी से जल्दी पीटर्सबर्ग छोड़ देने का संकेत दिया गया। उसी साल उसे आक्सफोर्ड बुलाया गया और 'डाक्टर आव् ला' की उपाधि मिली।

पुश्किन-स्मारक के उद्‌घाटन के सम्बन्ध में उसकी रूस की अंतिम यात्रा सन् १८८० में हुई। १८८२ से उसका स्वास्थ्य बराबर खराब रहने लगा। उसे कैंसर हो गया था। साल भर बाद उसकी विदेश में मृत्यु हुई। उसका शव पीटर्सबर्ग लाया गया और वहाँ बड़े समारोह के साथ दफनाया गया।

उसकी मृत्यु से विश्व-साहित्य की बड़ी क्षति हुई और इंग्लैंड और फ्रांस के प्रमुख पत्रों ने उसे अपने समय का सबसे बड़ा योरोपीय लेखक कहकर श्रद्धांजलि अर्पित की। उसके दफन के दिन क्रांतिवादी युवकों ने घोषणा की और उसमें कहा कि 'जन्म से रईस (Gentleman), पालन पोषण और स्वभाव से उच्चवंशीय (Aristocrat) तुर्गेन्येव ने कदाचित् अनजान में अपने प्रेमपूर्ण कोमल हृदय से सहानुभूति प्रकट की और रूसी क्रांति की सेवा भी की। युवक तुर्गेन्येव को उसके शब्द-सौंदर्य के लिये, या काव्यपूर्ण सजीव वर्णनों और सच्चे चरित्रचित्रण के अनुकरणीय कौशल के लिये नहीं प्यार करते वरन् इसलिये कि वह समग्र नई पीढ़ियों के आदर्शों का सच्चा और ईमानदार भविष्यवक्ता था। उनके असीम रूसी आदर्शों का कवि था। उनके कष्ट और (आध्यात्मिक) संघर्ष का चित्रकार था..........।'

'खेलाड़ी के रेखाचित्र' में पचीस कहानियाँ संगृहीत हैं। यह साहित्य की महत्वपूर्ण [illegible] है। उसमें गाँव के जमींदारों और किसानों के जीवन का चित्रण है। कहानियाँ असम्बद्ध घटनाओं की माला हैं। सारी पुस्तक में सताए

किसानों के प्रति लेखक की सहानुभूति स्पष्ट है और किसानों के मालिक और गाँव के रईसों का नग्न चित्र है। शिक्षा-विभाग के खुफिया रेकार्ड में इस पुस्तक के विषय में लिखा था कि 'इसके लेखों का अधिक भाग जमींदारों की प्रतिष्ठा घटाने में प्रवृत्ति है और या तो उनका मज़ाक बनाता है और खाक उड़ाता है या उनकी इज्जत घटाता है। जमींदारों के विरुद्ध ऐसे विचारों के प्रचार से निस्संदेह दूसरे वर्ग के पाठकों की महत्ता (Nobility) के प्रति भी इज्जत कम हो जायगी'। इसकी संभावना भी अधिक थी क्योंकि किसानों को जमींदारों की अपेक्षा अधिक बुद्धिमान् और सदाचारी दिखाया गया था। इन किसान पात्रों के सुख-दुख का चित्रण उनके (जीवन की) रहन-सहन की जानकारी के साथ बड़ी सहृदयता से किया गया है।

तुर्गेन्येव की ख्याति उसके उपन्यासों पर है। 'रूदिन' अन्येगिन पेचोरिन के नायक का एक संस्करण समझिये—जो कि सन् तीस और चालीस के ज़माने के युवकों का प्रतीक है। तुर्गेन्येव ने इसमें बकूनिन की कुछ विशेषताओं का भी समावेश किया। 'रूदिन' गरीब जमींदार का पुत्र है। विदेश-यात्रा से उसका दिमाग जर्मन कविता और जर्मन रोमांटिसिज्म और दर्शन से भर गया है। वह (स्वतन्त्रता, आत्मबलिदान आदि विषयों पर) अपनी भाषण-शक्ति से लोगों को मुग्ध कर सकता है। किन्तु उसमें इन आदर्शों को कार्यरूप में परिणत करने की क्षमता नहीं है। और वह सभी चीज़ों में—यहाँ तक कि प्रेम में भी—असफल होता है। जब उसकी प्रेमिका उसे बताती है कि यद्यपि उसकी माँ ने उसे मना किया है फिर भी वह उसे न छोड़ेगी चाहे जो हो जाय। रूदिन उसे माँ की बात मानने और भविष्य में न मिलने के लिये समझाता है और कहता है कि अलग होना किस्मत में है और खुशी उसके भाग्य में नहीं है। वह स्वयं स्वीकार करता है कि वह पहली ही बाधा नहीं पार कर पाता। कुछ स्वाभाविक विशेषताओं के होते हुए भी वह अपने पीछे कुछ नहीं छोड़ सकता। पेरिस में १८४८ (की क्रांति में) के घेरे में मरकर वह अज्ञात शहीद बन जाता है।

तुर्गेन्येव अपने नायक की अव्यावहारिकता और बढ़ी चढ़ी क्रिया-विहीन कल्पना की निन्दा करता है, किन्तु उसके सत्य प्रेम, और आदर्श के लिये व्यक्तिगत प्रेम के बलिदान की तत्परता के गुणों को स्वीकार करता है।

'रईस का घर' रियासतों के प्राचीन शांत जीवन (जो कि अब समाप्त हो रहा था) का अन्यतम ग्रंथ है। इसमें गाँव के रईस के शांत सुकृत (Virtuous) जीवन की पूरी कथा है। उसका पिता जो स्वच्छन्दवादी, 'पाश्चात्यवादी' (Anglophil) है उसे लोगों से अलग रखकर अपनी देखभाल में उसका पालन-पोषण करता है। यद्यपि वह हृष्ट-पुष्ट होकर बढ़ता है फिर भी

उसमें आत्मविश्वास की कमी है। पिता की मृत्यु और असफल विवाह के बाद वह घर लौटता है और उपन्यास की नायिका से प्रेम करने लगता है। लड़की धार्मिक स्वभाव की है और दूसरे को हानि पहुँचाने से सदा डरा करती है। जब कि वे दोनों विवाद करनेवाले हैं पहली पत्नी आ जाती है। लड़की मठ में चली जाती है और नायक अपने को अपनी किस्मत (और बेकार की जिन्दगी) पर छोड़ देता है।

आन्तरिक भावों का मार्मिक विश्लेषण, अत्यन्त भावुक स्थल-वर्णन की कोमलता और विषाद इस पुस्तक को अन्यतम ग्रंथ (Masterpiece) बना देते हैं।

'आरम्भ के समय' पुस्तक बिल्कुल भिन्न है। तुर्गन्येव के पहले दो उपन्यास तो अतीत का चित्रण करते हैं किन्तु इसमें वर्त्तमान अर्थात् सन् 'पचास' के ज़माने की भावनाएँ और प्रवृत्तियों का वर्णन है। इसके पात्र स्वप्न देखनेवाले आदर्शवादी नहीं हैं प्रत्युत नए प्रकार के कर्मठ और व्यवहारकुशल लोग हैं। तुर्गन्येव का कहना है कि मेरे उपन्यास का मुख्य भाव 'चीज़ों को आगे बढ़ाने के लिये चेतन (Conscious) वीर स्वभाव की आवश्यकता' है। इस उपन्यास की सबसे बड़ी विचित्रता यह थी कि इसकी मुख्य पात्र लड़की थी। येलेना बुद्धिमान् और प्रतिभाशाली प्रेमियों से घिरी है फिर भी वह इंसारोफ को चाहती है जो कि बलगेरियन क्रांतिवादी है और अपने देश को तुर्कों की गुलामी से मुक्त करना चाहता है। लड़की के प्रेम और साहचर्य के लिये बलिदान की तीव्र इच्छा, और स्वतन्त्रता और जनहित की सेवा की दृढ़ यद्यपि भ्रमपूर्ण भावना की संतुष्टि केवल इसी व्यक्ति से हो पाती है।

उसके दूसरे प्रेमी—सन् चालीस के प्रतिनिधि—अलग खड़े रहते हैं। उनको अपने बीच (येलेना के उपयुक्त) कोई ऐसा आदमी नहीं दिखलाई पड़ता, और वे पूछते हैं कि हमारी बारी कब आवेगी, हममें ऐसे आदमी कब होंगे। वह (लेखक) उत्तर देता है कि 'अवसर दो—ऐसे आदमी आवेंगे'।

येलेना का चुनाव इस बात का संकेत है कि रूस को कैसे आदमियों की आवश्यकता है। रूस में उपयुक्त 'नायक' न पाकर वह अपना घर और धन छोड़ देती है और इंसारोफ के पीछे विदेश चली जाती है।

'पिता और पुत्र' उसका सबसे अधिक मशहूर उपन्यास है। इसके नायक 'बाज़रोफ' का निर्माण तुर्गन्येव के एक जान-पहचान के गाँव के डाक्टर (जिसका उस पर बड़ा प्रभाव पड़ा) के आधार पर हुआ है। 'बाज़रोफ' 'रूसी इंसारोफ' है और उन थोड़े से आदमियों में है जो कि 'सन् पचास' के अंत में प्रकट होने लगे थे और जिनके नायक चर्निश्येव्स्की, डोब्रोल्यूबोफ और पिसारेव हैं।

तुर्गेन्येव स्वयं कहता है कि मेरी भावना इन लोगों के बारे में स्पष्ट नहीं है। बाज़रोफ़ उसका 'शत्रु' है जिसकी ओर वह बरबस आकृष्ट हुआ। बाज़रोफ़ की कहानी को लेखक ने उच्च वर्ग (Aristocracy) के ऊपर प्रजातन्त्र की विजय बताया है।

बाज़रोफ़ गाँव के एक छोटे डाक्टर का पुत्र है। वह विद्रोही और 'निहलिस्ट' है। (तुर्गेन्येव के उपन्यासों में यह शब्द पहली बार प्रयुक्त हुआ)। उसका पहला उद्देश्य 'जगह की सफाई' है। वह व्यंग में बोलता है, और किसी प्रकार की कोमलता, दुर्बलता या शब्दाडम्बर नहीं चाहता। वह सभी प्रकार के शासन, स्वीकृत सिद्धान्त और रोमांटिसिज्म (या रुमानी रंगीनी) के विरुद्ध है, शिक्षा-दीक्षा से वह डाक्टर है। वैज्ञानिक है और भौतिकवादी है। किन्तु वह ढोंग या ढकोसले के लिये सर्वथा अक्षम है। रईसों (Gentry) के बीच उसका कोई स्थान नहीं, फिर भी वह उन पर विजयी होता है। वह इज्जतदार और शक्तिशाली स्वभाव का व्यक्ति है। कृत्रिमता—समाज की लज्जा-जनक अवस्था—के प्रति उसकी घृणा सच्ची और गहरी है। उसमें, निम्नवर्ग के हृदय में अपने प्रति विश्वास जगाने की अद्भुत क्षमता थी यद्यपि वह उनकी खुशामद नहीं करता था। उसकी सचाई और सादगी लोगों को अपनी ओर आकृष्ट करती थी। उसका अपने भावों और विकारों पर नियंत्रण है और वह व्यक्तिगत स्वार्थ से ऊपर उठ सकता है।

लेखक 'बाज़रोफ़' की सम्पूर्ण जीवन-कथा नहीं कहता और न उसे काम करता हुआ दिखाता है। उसका चित्र अधूरा है। वह गाँव के रईसों के बीच दिखाया जाता है और उसके राजनीतिक विचार पाठकों को स्पष्ट नहीं हैं। बैधानिक लिबरल होने के कारण तुर्गेन्येव को उसके उद्देश्यों में केवल नकारात्मक और अव्यावहारिक आदर्शों की छाप मिली, फिर भी लेखक बाज़रोफ़ के लिये पाठकों की सहानुभूति चाहता है। उसने बाज़रोफ़ की 'जमीन से निकले हुए सुदृढ़, उग्र और जंगली किन्तु इज्जतदार सूरत के रूप में भावना की, जिसका पतन अवश्यम्भावी था क्योंकि वह अभी भविष्य की देहरी पर ही खड़ा था'।

इस उपन्यास का मुख्य विषय प्राचीन और नवीन पीढ़ी के बीच का मतभेद है। बाज़रोफ़ का मुख्य प्रतिद्वन्द्वी लिबरल उच्चवंश (Aristocracy) का प्रतिनिधि है जो पढ़ा-लिखा, सिद्धान्तों का पक्का, दासों पर उग्र, इज्जतदार और अंग्रेजी [illegible] का मध्यम वर्ग के जीवन का समर्थक और प्रशंसक है। दूसरे अन्य (Typical) पात्र भी समय के बदलते हुए विचारों का संकेत देते हैं। 'बाज़रोफ़' के माता पिता सीधे-सादे स्वभाव के हैं और उनकी सारी खुशी अपने लड़के

में केन्द्रित है। उसको और नई पीढ़ी को समझने का प्रयत्न करते हुए भी वे असमर्थ होते हैं।

'पिता और पुत्र' पर जितना वादविवाद और मतभेद हुआ उतना तुर्गनेव के दूसरे उपन्यासों पर नहीं। कुछ आलोचकों ने कहा कि लेखक ने 'निहलिस्ट' को आदर्श रूप में प्रस्तुत किया है और कुछ ने कहा कि केवल बाज़रोफ़ के रूप में उसने नई पीढ़ी का मज़ाक उड़ाया है। केवल पिसारेव ने इस नए नायक का समर्थन किया। और कहा कि केवल तुर्गनेव इस 'नए वर्गशील व्यक्ति' को महत्त्व देने में सफल हो सका है। किन्तु उसने यह भी कहा कि लेखक बाज़रोफ़ को काम करता हुआ नहीं दिखा सका। उसे मरता हुआ दिखाया गया है और उसका सारा ध्यान मृत्यु पर केन्द्रित है। इस मत के अनुसार लेखक ने युवकों की 'अतिवाद' की प्रवृत्ति दिखाई है। किन्तु उनके इस उत्साह में लेखक ने परिष्कृत बुद्धि, और नई शक्ति पाई। इससे रूस का युवक अपना आगे का ठीक मार्ग पा सका। फिर भी युवकों ने 'निहलिस्ट' को क्रांतिवादी या आदर्श मानने से इन्कार कर दिया।

इस उपन्यास का जैसा स्वागत हुआ उससे तुर्गनेव को आश्चर्य भी हुआ और व्यथा भी हुई। साहित्य में उसका आदर्श सचाई के साथ वास्तविकता का (बिना किसी मुलम्मे के) चित्रण रहा है। बहुत से पत्रों और टिप्पणियों में उसने अपनी इस परम प्रिय रचना के समर्थन की चेष्टा की।

तुर्गनेव के उपन्यास रचना और शैली की दृष्टि से नए हैं। वे नए हैं और उनकी गति विशेष ब्यौरे के साथ नहीं दी जाती और न किसी बाधा से रुकती है। उनमें जटिलता नहीं है और न दूसरा उपकथानक रहता है। घटना की गति निश्चित समय के भीतर बँधी रहती है। पात्रों के जीवनचरित की बातें मुख्य कथाओं से लिपटी रहती हैं। और अतीत अस्पष्ट छोड़ दिया जाता है। उपन्यास की रचना ख़ाकों की माला के समान है। जो (स्केच) कथानक की मुख्य कथा-वस्तु से जुड़े रहते हैं और जिनकी अभिव्यक्ति प्रधान पात्र के द्वारा होती है। तुर्गनेव का नायक महत् (Nobility) या सामान्य जनता के किसी सामाजिक वर्ग का (Typical) सर्वोत्तम और सैद्धांतिक (Ideological) प्रतिनिधि होता है और वह अनिवार्य रूप से पराजित होता है। रूसी सामाजिक और राजनीतिक जीवन की परिस्थितियाँ उसे असफल बना देती हैं। इंसारोफ भी—जो कि अपने उद्देश्य को अच्छी तरह जानता है—रास्ते में मर जाता है, और बाज़रोफ़ की असामयिक मृत्यु हो जाती है और वह गाँव के कब्रिस्तान में दफ़नाया जाता है। दूसरा नायक आत्महत्या कर लेता है। यह नायक उन क्रांतिकारी युवकों का प्रतिनिधि है जो 'जनवादी' हैं और जो जनता के

पास जाकर किसानों को ज़ार के विरुद्ध लड़ने का बढ़ावा देते हैं। किन्तु वे किसानों को नहीं समझ पाते हैं और उनसे दूर ही रहते हैं और अपने उद्देश्य में असफल होते हैं। इस जनवादी 'नायक' की मृत्यु उस समय की प्रगतिशील और क्रांतिकारी शक्ति की अपरिपक्वता को बताती है। फिर भी वे सब नायक देशप्रेम से भरे हैं। उनका देश 'बंदीखाना' था और वे नहीं जानते थे कि कैसे मुक्ति प्राप्त की जाय।

तुर्गन्येव के नायक केवल सामाजिक कार्यकलाप में ही असफल नहीं होते प्रत्युत प्रेम में भी। पात्रों की विचार और सिद्धांतों के बारे में आपस की बहस भी उल्लेखनीय है। यह उस युग की सामान्य विशेषता थी।

दृश्य उसकी रचना के महत्वपूर्ण अंग हैं। कभी तो यह उल्लिखित घटना या क्रिया के वातावरण के रूप में रहता है, पृष्ठभूमि पात्रों के भावों और मनोविकारों मे प्रवाहित होती है और कभी इसके विपरीत वह केवल सुन्दर दृश्यों का कुशल चित्रकार ही नहीं है प्रत्युत वह पात्रों के भावों और विचारों पर प्रकृति के प्रबल प्रभाव का उल्लेख प्रायः करता है। तुर्गन्येव के उपन्यासों का प्रगीतात्मक अंश उनके सौंदर्य की विशेषता है।

उपन्यासों के अतिरिक्त तुर्गन्येव ने छोटी कहानियाँ और छोटे उपन्यास भी लिखे। उसके उपन्यासों के विषय तो सामाजिक हैं किन्तु उसकी कहानियों के विषय व्यक्तिगत जीवन की घटनाएं और अनुभूति हैं जिनमें भावना के जटिल आंतरिक संसार की अभिव्यक्ति है। उसकी सर्वोत्तम कहानियों में 'आस्या', 'प्रथम प्रेम', 'पत्रव्यवहार', 'फास्ट' आदि हैं जिनमें दृश्यों के भावुक वर्णनों के साथ दार्शनिक भावना और उदासी की भावना का अतिरेक है। सन् 'साठ' और 'सत्तर' के प्रगतिशील आलोचक इन कहानियों की ओर अधिक आकृष्ट न थे—क्योंकि इनमें रईसों के जीवन का मर्सिया था।

उसकी अंतिम कृति 'गद्य में काव्य' १८८२ में प्रकाशित हुई। इनमें व्यक्तिगत गहरी निराशा, बुढ़ापा, मृत्यु, जीवन की विषमताओं पर विचार, दूर देश और धुँधले अतीत की स्मृतियाँ आदि की अभिव्यक्ति है। किन्तु ये तुर्गन्येव के गद्य के रत्न हैं। इनमें से कुछ का सामाजिक महत्व है और इनमें से एक क्रांतिकारी लड़की का करुण किन्तु सुन्दर चित्र है। इस माला का अंतिम लेख रूसी भाषा की प्रशंसा है।

तुर्गन्येव भाषा का आचार्य और भाषा का कुशल कलाकार है। इसके साथ ही उसकी काव्यत्वपूर्ण साम्य योजना, विशेषण और चित्र अत्यन्त समृद्ध हैं। नाद-सौंदर्य और लय उसके गद्य की विशेषता है। उसके गद्य के अध्ययन से उसकी छिपी किन्तु अनेकरूपात्मक छंदयोजना और ध्वनि-सौंदर्य का पता लगता है। उसके वाक्यविन्यास में जटिलता नहीं है। रंग, ध्वनि, सुगंधि, गति, छाया और

प्रकाश के खेल की अभिव्यंजना बड़ी सूक्ष्मता से की गई है। प्रत्येक पात्र के संवाद में उसके वर्ग के ठेठ और अनुकूल मुहाविरे तथा शैली के दर्शन होते हैं।

तुर्गन्येव का दीर्घ रचनाकाल एक प्रकार से रूसी समाज और जनता की समस्याओं के कई दशकों का कलापूर्ण इतिहास या विवरण है। उसके पात्र साहित्य में पौराणिक (Classic Type) बन गए।

तीव्र वर्ग-संघर्ष के युग में लिबरल तुर्गन्येव ने अपने को दो आगों के बीच पाया और वह स्वयं अपनी स्थिति का निश्चय न कर सका यद्यपि उसकी उदारता, व्यापक भावना, स्वतंत्रता और उसका साहस जीवन के अंत तक बना रहा। वह उस तूफानी और जटिल संक्रांति-काल का सर्वोत्तम प्रतिनिधि था, 'वास्तविकता पर मुलम्मा चढ़ाने का कट्टर शत्रु' था, और उसमें मानवता, देश और कला तथा प्रकृति के बीच पाये जानेवाले सौंदर्य के प्रति सच्चा और अगाध प्रेम था।

निकोलाइ ग्रवीलोविच चर्निश्येव्स्की (१८२८—१८८६)

इस क्रांतिकारी का सन् 'पचास' और 'साठ' के जमाने पर पूरा आधिपत्य था। वह सारतोव के छोटे से शहर के पुरोहित का लड़का था ऐसा छोटा शहर कि जहाँ गाहकों के अभाव के कारण किताबों की दुकान हफ्ते में एक दिन खुलती थी। फिर भी उसके पिता का अपना पुस्तकालय अच्छा था। जिसमें लौकिक विषयों पर बहुत-सी पुस्तकें थीं। बचपन में वह रूसी साहित्य के अन्यतम ग्रंथों से—जिनमें गोगल के ग्रंथ और ब्येलिंस्की के लेख भी थे—परिचित हो गया। उसकी पढ़ाई-लिखाई अपने ही परिश्रम से हुई थी। जवानी में उसने कई विदेशी भाषाएं सीखीं। घर की गरीबी उसे सामान्य जनता के जीवन के निकट और दास-प्रथा की दारुणता के सम्पर्क में लाई।

धार्मिक स्कूल (जहाँ कि उसे पिता ने रक्खा था) को छोड़कर वह पीटर्सबर्ग की यूनिवर्सिटी में अध्ययन करने गया। शीघ्र ही उसे यूनिवर्सिटी शिक्षा की संकीर्णताओं का पता लग गया। उस समय शिक्षा पर जो कठोर नियंत्रण था उससे गम्भीर विद्वत्ता की गुंजायश नहीं थी। कुछ यूनिवर्सिटियों में—जैसे मास्को—दर्शनशास्त्र की पढ़ाई मना थी।

हेगेल का अध्ययन करने के बाद वह भौतिकवादी दार्शनिकों के अध्ययन में लगा। वह 'फायरबाख' के 'ईसाइयत का तत्त्व' नामक पुस्तक से उसकी उदारता और स्पष्टता के कारण बहुत प्रभावित हुआ। फ्रांसीसी 'युरोपियन सोशलिस्ट' की ओर उसकी रुचि बढ़ी। और सोशलिज्म की अनिवार्य विजय पर उसका दृढ़ विश्वास हो गया। चर्निश्येव्स्की ने केवल युरोप के समग्र प्रगतिशील विचारों को ही नहीं समझा प्रत्युत अपनी स्वतंत्र खोजों में वह बहुत आगे बढ़ गया।

१८५० में वह अपने घर लौटा और अपने शहर के स्कूल में पढ़ाने लगा।

यह संस्था बड़ी ही भयानक थी। शिक्षक शराब पीकर दर्जे में आते थे। गन्दी कसमें खाते थे, और छोटे से अपराध पर विद्यार्थियों को कोड़े मारते थे। स्कूल का पुस्तकालय और विज्ञानशाला कभी काम में न आती थी। चर्निश्येव्स्की ने व्यक्तिगत खतरों के होते हुए भी न केवल विद्यार्थियों के विश्वास को प्राप्त कर लिया प्रत्युत उनकी आखों के सामने स्वतंत्रता का दृश्य खींचा और इनके हृदयों में निरंकुशता और दास-प्रथा के प्रति घृणा भर दी।

१८५३ मे वह 'केडेट स्कूल' में शिक्षक हुआ। 'देशभूमि-समाचार' में काम किया और अपना प्रबन्ध (थीसिस) 'कला का वास्तविकता से सौंदर्यवादी सम्बन्ध' समाप्त किया। उग्र भौतिकवादी योजना के मत के प्रतिपादन के कारण अधिकारियों ने दो वर्ष तक उसका पढ़ा जाना रोक रक्खा, और जब वह छपी तो या तो उसके बारे में सन्नाटे का षड्यंत्र रहा या उस पर गालियों की बौछार हुई। जब एक आलोचक ने लिखा कि चर्निश्येव्स्की की थीसिस से उसके निष्कर्षों की बेवकूफी के सिवा और कुछ नहीं है तो तुर्गेन्येव ने उस पत्र को लिखा कि 'चर्निश्येव्स्की की घृणित पुस्तक को गाली देने के लिये धन्यवाद। बहुत दिनों के बाद ऐसी चीज पढ़ी जिसने मुझे उद्विग्न बना दिया। यह खराब पुस्तक से भी खराब है। यह खराब काम है।' किन्तु प्रजातन्त्रवादी सामान्य वर्ग इससे बहुत प्रसन्न हुए।

नेक्रासोफ ने चर्निश्येव्स्की को अपने पत्र के अत्यन्त महत्वपूर्ण विभाग—राजनीति और आलोचना—का काम सौंप दिया, और वस्तुतः वही (चर्निश्येव्स्की) इस पत्र का असली सम्पादक बन गया। इस पत्र में उसके कुछ सर्वोत्तम लेख छपे—'रूसी साहित्य के गोगल युग का स्केच', 'लेसिंग और उसका समय' पुश्किन, ताल्स्ताय, ओस्त्रोव्स्की आदि पर लेख तथा दर्शन, इतिहास और अर्थशास्त्र पर लेख।

चर्निश्येव्स्की लिबरलों के विरुद्ध निरन्तर संघर्ष करता रहा। वह बराबर कहता रहा कि लिबरल और किसानों के रास्ते अलग अलग हैं और किसान इतने कुचले गए हैं कि वे अब विद्रोह करने को तैयार हैं। लिबरलों के लिये उसने कहा कि वे पीले दस्ताने पहने हुए बने ठने शरीफ हैं जिनके हृदय में सामान्य जनता के लिये घृणा भरी है, जिनका दृढ़ विश्वास है कि रूसी जनता से कुछ न होगा। जब हर्ज़ेन यह आशा कर रहा था कि कदाचित् अलेक्जेंडर द्वितीय किसानों को सच्ची स्वतन्त्रता दे दे तो चर्निश्येव्स्की ने उसे चेतावनी दी। अभी तक शासकों से रूसी जनता का कोई भला नहीं हुआ है। 'हमारी परिस्थिति अत्यन्त असह्य और असहनीय है। केवल कुल्हाड़ी हमें बचा सकती है, और कुछ नहीं,

केवल कुल्हाड़ी ही हमें बचायेगी'। लेनिन के कथनानुसार 'चर्निश्येव्स्की की रचनाएँ वर्ग-संघर्ष से अनुप्राणित हैं।'

चर्निश्येव्स्की केवल लेखक ही न था। वह क्रांतिकारियों और उनकी संस्था 'भूमि और स्वतंत्रता' के घनिष्ठ संपर्क में था और उनका संचालन भी करता था। यह सब काम छिपे तौर से होता था। १८६१ में उसने घोषणा निकाली जिसमें रईसों के गुलामों का उनके हितकारियों की ओर से अभिनंदन किया गया और उनसे एकता तथा लड़ाई के लिये तैयार होने को कहा गया।

१८६२ में किसान-विद्रोह सारे देश में होने लगे, और क्रांतिवादी आन्दोलन की लहर विद्यार्थियों में फैल गई। फलतः बहुत से विद्यार्थी कैद हुए और प्रगतिशील प्रोफेसर निकाल दिये गए। प्रगतिशील पत्रों के बंद किये जाने की चर्चा पहले हो चुकी है। चर्निश्येव्स्की की तलाशी ली गई और यद्यपि उसके विरुद्ध कोई सामग्री न मिली फिर भी वह पेत्रोपावोल्स्क के किले में बन्द कर दिया गया।

उसकी गिरफ्तारी पर बड़ा असंतोष फैला। कई महीनों तक उसका विचार न हुआ। साढ़े सात महीने के बाद उसने दस दिन की भूख हड़ताल की और अपनी स्त्री से मिलने की आज्ञा देने के लिये अधिकारियों को विवश किया। रूसी क्रांतिकारियों में यह पहली भूख हड़ताल है जिसका उल्लेख मिलता है। अधिकारियों ने उसके मुकदमे के लिये जाली कागज़ और घूस देकर गवाहियाँ तैयार कीं। ज़ार ने व्यक्तिगत रूप से इस बात पर जोर दिया कि यद्यपि उसके विरुद्ध कोई उचित प्रमाण नहीं मिल सका फिर भी उसे सजा दी जाय। उसे आजीवन (साइबेरिया में) निर्वासन और चौदह वर्ष के (खान में) कड़े परिश्रम का दंड मिला। बाद में कड़े परिश्रम का दंड घटाकर आधा कर दिया गया, यह दंड पीटर्सबर्ग की खुली और आम जगह (Public Square) में पढ़कर सुनाया गया। एक प्रकार की पूरी रस्म अदायगी (Ceremony) की गई। दंड के पढ़े जाने के बाद संतरियों ने बंदी को घुटने के बल बैठने को विवश किया। उसके सिर के ऊपर एक तलवार तोड़ी गई और उसके हाथ बाँध दिये गए। (उसे मुलज़िम बताने वाली) एक तख्ती उसकी छाती पर लटका दी गई। एक लड़की ने बंदी पर फूल फेंके। वह गिरफ्तार कर ली गई। किन्तु उसके इस कार्य से लोगों को बढ़ावा मिला और फिर बन्दी के चरणों पर फूलों की वर्षा होने लगी। चर्निश्येव्स्की फौरन ही जंज़ीरों से मुक्त किया गया और वहाँ से हटा दिया गया। भीड़ से 'अलविदा' की आवाज़ें आती रहीं। दूसरे दिन वह साइबेरिया भेज दिया गया।

सरकारी मनादी के कारण चर्निश्येव्स्की की सज़ा का समाचार रूसी पत्रों में न छप सका। किन्तु हर्जेन के पत्र ने लंदन से इसका विरोध किया। रूस में

वह शहीद बन गया। खानों में सात साल की सज़ा पूरी कर चुकने के बाद भी उसे साइबेरिया में रहने दिया गया। उसे दूर बर्फीले टंड्रा के एक छोटे शहर में—जिसमें बीस पत्थर के मकान और तीस याकूत खीमें थे—भेजा गया। वह सबसे बड़ी इमारत—जेल में—ठहराया गया उसे न पुस्तकें दी गईं और न लिखने पढ़ने का सामान और वह गठिया और खुजली से पीड़ित रहने लगा। अब तक वह (जेल और निर्वासन के बीच) यथासम्भव काम करता रहा और उसने बहुत से साहित्यिक लेख और एक उपन्यास पूरा किया।

रूस में उसके मित्र और समर्थक उसकी मुक्ति या (जेल से) उसके भगाने की चेष्टा करते रहे। 'इशूतिन गोष्ठी' (Ishutin cercle) ने इसकी तैयारियाँ भी कीं किन्तु वह संस्था ही नष्टकर दी गई। १८७० में कार्ल मार्क्स के एक रूसी मित्र द्वारा—जो चर्निश्येव्स्की का प्रशंसक था और उसकी 'राजनीतिक मृत्यु' पर शोक प्रकट करता था—उसके छुड़ाने का फिर असफल प्रयास हुआ। १८७५ में एक क्रांतिकारी पुलिस अफसर के वेष में जेल तक आया किन्तु लोगों को शक हो गया और उसे भागना पड़ा। कई बार अधिकारी भी उसके पास आए कि वह माफी माँग ले। किन्तु इसके लिये वह कभी तैयार न हुआ। एक बार उसने कहा कि 'मुझे ऐसा मालूम होता है कि मैं सिर्फ इसीलिये निर्वासित किया गया कि मेरा और पुलिस चीफ का दिमाग भिन्न अलग ढंग का है, और फिर कोई सिर्फ इसी बात के लिये कैसे माफी माँग सकता है।'

१८८१ में अलेक्जेंडर द्वितीय की एक विद्यार्थी द्वारा बम फेंके जाने से मृत्यु हुई। दमन और भी कठोर हो गया। १८८३ में चर्निश्येव्स्की को याकूतिया छोड़कर अस्त्राखान जाने की आज्ञा मिली। निर्वासन, कड़े परिश्रम और जेल मिलाकर अब तक वह इक्कीस वर्ष बिता चुका था। अस्त्राखान की गर्मी में उसकी स्थिति कुछ अच्छी न रही, और पर्याप्त खाना पाने के लिये उसे अनुवाद का काम लेना पड़ा क्योंकि उसकी अपनी मौलिक रचनाओं का छपना असम्भव था। इस प्रकार के कष्ट में ६ वर्ष और बिताने के बाद उसे अपने जन्मस्थान लौटने की आज्ञा मिली। किन्तु जर्जरित और अस्वस्थ होने के कारण उसी वर्ष उसकी मृत्यु हो गई।

इस करुण किन्तु वीर जीवन ने साथियों और अनुयायियों के हृदय में उसके प्रति सम्मान और प्रेम को बढ़ाया, और सेंसर के होने पर भी उसके साहित्यिक प्रभाव को बढ़ाया। साहित्य और कर्मक्षेत्र दोनों में चर्निश्येव्स्की का रूसी इतिहास में बीच महान् व्यक्तित्व है। उसने नई परम्परा की स्थापना की।

लेनिन लिखता है कि 'चर्निश्येव्स्की युरोपियन सोशलिस्ट था जो किसान पंचायतों के द्वारा सोशलिज्म के अवतरण का स्वप्न देखता था। किन्तु वह

क्रांतिवादी डिमोक्रेट भी था। वह अपने समय की घटनाओं को क्रांतिवादी ढंग से प्रभावित करना जानता था और सेंसर तथा अन्य कठिनाइयों के बीच भी किसान क्रांति के विचार और जनता द्वारा प्राचीन अधिकारियों के उन्मूलन का प्रचार करता रहा।

चर्निश्येव्स्की कभी चुपचाप न बैठा। पेत्रोपावोलोव्स्क के किले में कैद होने पर उसने अपने सर्जनात्मक कार्यक्रम की लम्बी योजना बनाई। इसमें उसका प्रसिद्ध उपन्यास 'क्या किया जाय' भी सम्मिलित है। यह १८६२ में शुरू हुआ और चार महीने में समाप्त हुआ। दोहरे सेंसर द्वारा अनुमोदित होने पर यह १८६३ में 'समकालीन' में छपा। यह इसलिये छप सका क्योंकि पुस्तक के क्रांतिकारी भाव बड़े कौशल से छिपाए गए थे। किन्तु उसकी हस्तलिखित प्रति गुम हो गई और फिर नेक्रासोफ के बड़े प्रयत्न के बाद मिली। छपाने की मनाही की आशंका से नेक्रासोफ ने इसके छपाने में बड़ी शीघ्रता की। और सचमुच इसका दूसरा संस्करण १९०५ तक न निकल सका। फिर भी मुद्रित और हस्तलिखित प्रतियों के रूप में इसका प्रचार चर्निश्येव्स्की के जीवनकाल में ही बहुत हुआ।

इस उपन्यास का कथानक और इसके प्रधान पात्र लेखक के अपने व्यक्तिगत अनुभव और व्यक्तिगत मित्रों के पारिवारिक जीवन से लिये गए हैं। उनमें से एक प्रमुख पात्र जो कि क्रांतिकारियों का आदर्श है अत्यन्त बुद्धिमान्, दृढ़ कर्तव्य भावनावाला, और जनता के काम में अत्यन्त लगन का व्यक्ति है। इसके उपशीर्षक 'नए लोगों की कहानी' से इस बात का संकेत मिलता है कि उसका उद्देश्य 'प्रजातन्त्रवादी सामान्य वर्ग' (जिसमें कि चर्निश्येव्स्की और दोब्रोल्यूबोफ थे) का चित्रण है।

इन 'नए लोगों' में नायिका वीरा पावलोव्ना है जिसका पालन मध्यम वर्ग के परिवार में हुआ है। अधिकांश 'नए लोगों' के समान वह भी गरीबी से परिचित है और बचपन में ही पेट पालने के लिये उसे काम करना पड़ा है। वह स्वतन्त्रता की भावना से ओतप्रोत है और हर प्रकार के अत्याचार से उसे घृणा है। उसके हृदय में पूर्ण स्वतन्त्रता और आत्मसम्मान की तीव्र भावना है। वह अपना जीवन 'अपने मन के अनुसार बिना किसी की आज्ञा की अपेक्षा किये या बिना किसी से कुछ माँगे' संचालित करना चाहती है। उसमें संघटन की बड़ी व्यावहारिक शक्ति और विरोधों या कठिनाइयों के सामने की बड़ी ताकत है। वह अन्य स्त्रियों के अधिकारों के लिये युद्ध करती

और न अपने को दे सकती है। प्रेम में पड़ने पर वही सबसे पहले इसकी घोषणा करती है। प्रधान पुरुष पात्रों में भी 'नए लोग' हैं। तुर्गन्येव के बाज़रोफ से इनकी कुछ समानता है। फिर भी चर्निश्येव्स्की का दृष्टिकोण भिन्न है। ये अधिक शिष्ट और मृदुप्रकृति (Sensitive) हैं और मनोवैज्ञानिक दृष्टि से 'निहिलिस्टों' से अधिक जटिल हैं। ये 'नई' नैतिकता के अगुआ हैं। इस वर्ग के बीच प्रेम और साहचर्य पर विशेष आग्रह है। ये सच्चाई, पारस्परिक विश्वास, सच्चा प्रेम, संकीर्ण ईर्ष्या, द्वेष और संदेह से परे रहते हैं। इन प्रधान पात्रों में से एक वीरा को नई जिन्दगी शुरू करने में मदद देता है। उससे विवाह करने के बाद वह उसके मित्र से प्रेम करने लगती है। आपसी समझौते से उसका पति रास्ते से हट जाता है। इन सबका जीवन (दूसरों के हित के लिये) सामाजिक काम के लिये समर्पित है। किन्तु बलिदान या शहीद के रूप में नहीं प्रत्युत हँसी खुशी के साथ अपनी प्रतिभा और इच्छाओं की पूर्णता या पूर्ति के रूप में। उनका भविष्य में आनेवाले 'स्वर्णयुग' पर दृढ़ विश्वास है।

ये अपने समय के सामान्य 'प्रगतिशील' युवक हैं। दूसरे प्रधान चरित्र 'राहमतोफ' के रूप में 'विशेष पुरुष' या 'उच्च स्वभाव' और क्रांतिकारी नेता के आदर्श स्वरूप का चित्रण है। उसका समग्र जीवन अपने उद्देश्य या लक्ष्य के लिये अर्पित है। यहाँ तक कि उसमें व्यक्तिगत स्वार्थ और प्रेम के लिये भी स्थान नहीं है। अन्य पात्रों के समान वह भी 'बौद्धिक अहंभाव' (Rational Egoism) से संचालित होता है। ऐसे इने गिने प्रधान पात्र 'पृथ्वी के रत्न और शिरोमणि हैं'। भविष्य के क्रांतिकारियों के लिये ये वीरता, आत्मबलिदान और दृढ़ता के आदर्श बन गए। प्लखानोफ के कथनानुसार "प्रत्येक उत्तम रूसी क्रांतिकारी में 'राहमतोफवाद' का बड़ा अंश रहा है"।

भविष्य के समाज की कल्पना वीरा के स्वप्न के रूप में की गई है—जब कि मनुष्य प्रकृति पर विजयी हो जायगा और विज्ञान और मशीन के विकास से काम थकानेवाला न होकर खुशी बन जायगा (जो कि इसे वास्तव में होना चाहिए)। गरीबी, छोटी-छोटी चिन्ताएँ और मनुष्य के ऊपर किये जानेवाले अत्याचारों से मुक्त होकर सब अपनी शारीरिक और मानसिक क्षमता के पूर्ण विकास पर पहुँच जायँगे। चर्निश्येव्स्की ने यह भी देखा कि सोशलिज्म ही स्त्रियों को घर की गुलामी से मुक्त करेगा। उसने यह भी कहा कि समाज को बच्चों की शिक्षा और बूढ़ों की देख-भाल की जिम्मेदारी लेना चाहिए।

उपन्यास के छः मुख्य अध्याय हैं जो छोटे भागों या 'घटनाओं' में विभक्त हैं। इन घटनाओं के अर्थ को समझाने के लिये लेखक एक विशेष अध्याय में कुछ कहता है। कथा के वर्णन में कई बार रुकावट पड़ती है जब लेखक पुस्तक

के एक पात्र या 'गम्भीर पाठक' से बात करता है। लेखक उस पाठक की हँसी उड़ाता है जो कि उसके वादविवाद के असली अर्थ को नहीं समझ पाता और केवल मनोरंजन, मनलगीदार घटना और 'कला' चाहता है। इस उपाय से वह बहुत-सी ऐसी बातों का संकेत देता है जिसे कि वह सेंसर के कारण न कह पाता।

चर्निश्वेव्स्की कहता है कि 'काव्य जीवन के सत्य में है'। इसी के सहारे वह रचना, टीका-टिप्पणी और व्याख्या करता है। यह स्पष्ट ही उपदेशात्मक और विवादात्मक (Polemical) उपन्यास है। इसका उद्देश्य लोगों को बताना है कि वे कैसे रहें और क्या प्राप्त करने के लिये प्रयत्न करें। इसमें सोशलिज्म का खुला प्रचार है। इसीलिये इसके वर्णन और नायक का चित्रण गौण है। अधिकांश कहानी संवाद और वादविवाद में कही जाती है, और बहुत कुछ पाठक की कल्पना के ऊपर छोड़ दिया जाता है। रावर्ट ओवेन को 'बूढ़ा पवित्र आदमी' कहा गया है। उपन्यास के अंतिम अध्याय का—जिसमें क्रांति की विजय के बारे में लिखा गया है—शीर्षक है 'मजावट में परिवर्त्तन'।

वीरा के स्वप्नों में अन्योक्ति का ढंग उपयोग में लाया गया है। पहला स्वप्न आनेवाली क्रांति का है। दूसरा 'यथार्थता के कीचड़' का स्वप्न है। 'स्वच्छ पंक' जनता का प्रतीक है और 'सड़ा कीचड़' परोपजीवी वर्ग का है।

'क्या किया जाय' 'पिता और पुत्र' का जवाब है। इसमें बाजरोफ की खोखली मनोदृष्टि और मृत्यु के विपरीत क्रांतिवादी पीढ़ी में भविष्य की आशा दिखाई गई है। वादविवाद और 'नई नैतिकता' के कारण इसके ऊपर व्यंग और कटु आलोचना के होने पर भी नवयुवकों ने इसे ऐसे पढ़ा 'जैसे कि मुसलमान कुरान पढ़ता है।' लेनिन ने इसे अपने स्कूली दिनों में पढ़ा और यह उसकी परम प्रिय पुस्तक रही जिसे उसने बार बार पढ़ा।

पहला फ्रांसीसी अनुवाद १८७५ में छपा और ऐसा प्रतीत होता है कि इससे जोला प्रभावित हुआ। १८८६-१८८७ में इसके तीन अमेरिकन संस्करण थे।

निकालाइ अलेक्स्येविच नेक्रासोफ (१८२१–१८७८)

इसका जन्म यारोस्लाव्स्क प्रान्त में वाल्गा के निकट के गाँव में हुआ था। इसका पिता जमींदार, जुआरी, शिकारी और बड़ा कठोर था। अपनी शिष्ट माँ से इसे विश्व के महान् कवि और लेखक—जिनमें शेक्सपियर और दाँते भी थे—का परिचय प्राप्त हुआ।

उसके पिता ने उसे पीटर्सबर्ग की 'फौजी अकेडमी' में भेजा किन्तु जब नेक्रासोफ अकेडमी छोड़कर यूनिवर्सिटी में चला गया तो उसने (पिता ने) पैसा

भेजना बन्द कर दिया। इस प्रकार सत्रह वर्ष की आयु में उसने अपने को उस बड़े शहर में घर-बार और दोस्तों से अलग और अकेला पाया। किन्तु वह परिस्थितियों से बराबर युद्ध करता रहा और साहित्यिक जीवन का स्वप्न देखता रहा। उसकी कुछ कविताएँ पत्रों में छपीं। वह पढ़ाने, पुस्तक नकल करने, प्रूफ ठीक करने, अभिनेताओं के लिये कविता बनाने तथा कहानी, लेखादि लिखने का काम करने लगा। पेट भरने के लिये वह अपढ़ किसानों की चिट्ठियाँ लिखता था, और अखबार के पीछे छिपकर वह होटलों में दूसरों की बची और छोड़ी हुई रोटियाँ खाता था।

१८४० में नेक्रासोफ ने अपनी आरम्भिक रचनाओं का संग्रह छपाया। इसे अधिक सफलता न मिली। फिर भी साहित्य-संसार में उसका प्रवेश होने लगा। १८४२ में उसकी व्येलिंस्की से जान-पहचान हुई और शीघ्र ही वे घनिष्ठ मित्र बन गए। नेक्रासोफ की कविता (सन् १८४६) 'सड़क पर' से व्येलिंस्की को उसके कवि होने का विश्वास हो गया। थोड़े समय बाद नेक्रासोफ, व्येलिंस्की और 'पानएव' (Panaev) के साथ 'समकालीन' के सम्पादन में सम्मिलित हो गया। इस पत्र के संचालन में नेक्रासोफ के महत्त्वपूर्ण योग और प्रयत्न की चर्चा पहले हो चुकी है।

इस समय तक उसके प्रगतिशील राजनीतिक विचारों का सबको पता लग गया था और १८४८ से अधिकारी छिपे तौर से उस पर नज़र रखने लगे। उसकी ख्याति बढ़ने लगी। १८५६ में उसके संग्रह को तात्कालिक सफलता मिली। इसका कारण नए पाठक-वर्ग का आविर्भाव था, जो कि सामान्य वर्ग के थे और जिनके विचारों और भावनाओं की अभिव्यक्ति नेक्रासोफ की कविताओं में मिली। सन् 'पचास' के अंत में वह नई पीढ़ी का नेता (कवि) बन गया।

'समकालीन' के नए काम करनेवाले चर्निश्येव्स्की और दोब्रोल्यूबोफ से इसकी बड़ी गहरी मित्रता हो गई। चर्निश्येव्स्की के निर्वासन पर नेक्रासोफ ने उसकी पत्नी और उसके बच्चों की सहायता की। इन दोनों लेखकों के न रहने पर नेक्रासोफ ने इस पत्र को चालू रखने का बड़ा प्रयत्न किया। इसे जीवित रखने की इच्छा से उसने अधिकारियों से लिखा-पढ़ी की जिससे कि नए समर्थकों को उस पर संदेह हो गया। इस कमज़ोरी पर उसे पछतावा हुआ और उसने खुले तौर से उसे स्वीकार कर लिया।

'समकालीन' के बंद होने पर वह दूसरे पत्र 'देशभूमि-समाचार' को चलाने लगा और उसमें उसे शेद्रिन और येलिसेयेव (Yeliseyev) का सहयोग मिला। सन् 'सत्तर' के ज़माने में इस पत्र का वैसा ही प्रमुख स्थान था जैसा कि अपने

समय में 'समकालीन' का। इसे भी जीवित रखने में नेक्रासोफ को घोर प्रयत्न करना पड़ा और सेंसर से बराबर लड़ना पड़ा।

सन् 'सत्तर' के ज़माने में उसकी अपूर्ण कविताएं निकलीं—'दादा', 'दिसेम्ब्रिस्ट', 'रूस में कौन अच्छी तरह रह सकता है' (अपूर्ण)। उसके गीत क्रांतिकारी युवकों में बड़े लोकप्रिय हुए। जीवन के अंतिम दिनों में भी—जब कि वह कैंसर से मर रहा था—वह लिखता रहा। उसके शव के पीछे हज़ारों आदमी थे। उसकी कब्र पर भाषण देनेवालों में प्लखानोफ नामक युवक विद्यार्थी था जो भविष्य में बड़ा दार्शनिक और क्रांतिकारी विख्यात हुआ।

नेक्रासोफ की कविता ने दिसेम्ब्रिस्ट कवि, तथा पुश्किन और लरमन्तोफ की कविता को आगे बढ़ाया। किन्तु उसके समय में दमन और भी बढ़ा चढ़ा था और नेक्रासोफ लरमन्तोफ की तरह अकेला न होकर क्रांतिकारी युवकों का मान्य नेता था।

उसकी 'कविता की देवी' (Muse) दुखी गरीबों की संगिनी है। 'कविता देवी' शीर्षक कविता में वह कवि से (लोगों के) दुख का अनुभव करने को और संसार से कहने को कहता है। 'कवि और नागरिक' शीर्षक कविता में वह कहता है कि 'नागरिक बनो, अपने पड़ोसी की भलाई के लिये जियो, अपनी प्रतिभा को सर्वव्यापी प्रेम में मिला दो', कवि न संघर्ष से अलग रह सकता है और न जनता की किस्मत से अपने को अलग कर सकता है। वह बार बार इस उद्देश्य, जनता की सेवा, और गुलामी तथा गरीबी से उसके उद्धार के उद्देश्य को दुहराता है। ये उसके मुख्य विषय हैं। उसने कहा कि 'उच्च समाज को मेरी अवहेलना करने दो। मैं उसके लिये नहीं लिखता, यदि मेरे मरने के बाद भी रूसी किसान मेरी रचनाओं को पढ़ेगा तो मेरी (लेखक की) आत्मा पूर्ण संतुष्ट हो जायगी'। इसके लिये उसे नई भाषा और काव्य के नए प्रकार या स्वरूप (Forms) की खोज करनी पड़ी।

दूर तक फैले हुए खेत, हरे बन, कड़ा जाड़ा आदि नेक्रासोफ को अनंत प्रेरणा देते हैं, रूसी प्रकृति (या दृश्य) के कुछ वर्णन तो भूले नहीं जा सकते। प्रकृति के सौंदर्य के विरोध में वह गाँवों की गरीबी, स्त्रियों की असहनीय अवस्था और किसान जनता के प्रति किए गए अन्याय का चित्रण करता है।

नेक्रासोफ शहर के जीवन और भीड़, सड़कों, फैक्टरी, गंदे मुहल्ले, और बाज़ारों वाले नए आधुनिक नगरों का भी प्रथम कवि है और इस प्रकार मायाकोव्स्की और ब्रिसोफ जैसे वर्तमान कवियों का अगुआ है। वह शहर के मज़दूरों और गरीबों का कवि है। 'मौसम' नामक कविता में वह नगर के कोलाहल—आरे और हथौड़ों का शोरगुल, किसानों का चीत्कार, सड़क बनानेवाले इंजन,

बच्चों का क्रंदन—का वर्णन करता है। गंदे और कुहरे से ढके शहर में 'प्रत्येक वस्तु रोती और कराहती है। मानो वे अभागों के लिये जंजीरें तैयार कर रही हैं'।

वह शहर की सुंदरता, बर्फ से ढकी सड़कों की सुंदरता, और गैस लैम्प की शोभा देखता है किन्तु इसके साथ वह भिखमंगों और बच्चों को भूख और ठंढक से मरते भी देखता है। और पुरानी इमारतों को भी देखता है जिनका पलस्तर राह चलनेवालों पर गिरता है। वह जीवन और अस्तित्व-रक्षा के लिये होनेवाले क्रूर संघर्ष के नाटक का वर्णन करता है। बच्चे के तावूत को ले जाता हुआ सिपाही, अस्पताल में मरते हुए कारीगर और क्लर्क, मृत बच्चे के लिये कफन खरीदने को जीवित बच्चों और पति के पेट-पालन के लिये सड़क पर खड़ी हुई प्रथम राहगीर को अपना शरीर बेचनेवाली मां से लेकर नगर और बाजार के सबेरे से शुरू होनेवाले जीवन का व्यापक वर्णन कवि करता है।

नेक्रासोफ की नगर और ग्राम-संबंधी दोनों प्रकार की कविताएं काम-काज के दृश्य और हाथ से किये जानेवाले काम की कठिनता बताती हैं। 'रेल' कविता में वह उन अभागों का वर्णन करता है जो जाड़े और गर्मी में कमर झुकाए रेल बनाते हैं, और भूख से लड़ते हुए मिट्टी की झोपड़ियों में रहते हैं और बीमार होकर मर जाते हैं। 'भूख बादशाही' किसी को नहीं छोड़ती। उसकी एक अत्यन्त कोमल कविता 'बच्चों का क्रंदन' है इसमें भूख और अभाव से विवश बच्चे घर छोड़कर मशीनों पर काम करने जाते हैं और छोटी अवस्था में मर जाते हैं। वह यह भी बताता है कि मजदूरों के स्वतंत्र होने पर दुनिया किस प्रकार की होगी। इसके साथ ही वह बैंकर, बड़े किसान, मालिकों आदि 'सट्टे के वीरों' का भी वर्णन करता है।

नेक्रासोफ की कविता का प्रधान नायक किसान ही है। उसकी कविताओं में किसानों की भावनाएं और विचारों की अच्छी सूझ और ग्रामजीवन का अपार ज्ञान निहित है। अभी तक रूसी साहित्य में किसान नायक नहीं प्रकट हुआ था। नेक्रासोफ ने इस प्रकार की नई कविताएं छपाईं। 'त्रोयका' (तीन घोड़ों की गाड़ी) इसी प्रकार की सुंदर रचना है जिसमें एक जवान रूसी किसान-लड़की के करुण भाग्य का वर्णन है, जिसकी शक्ति और जिसका सौंदर्य कठिन परिश्रम के कारण थोड़े ही दिनों में नष्ट हो जायगा, और जिसका साहस-भरा चेहरा थोड़े समय के बाद दुख और डर से मर जायगा। उसकी कुछ सबसे उत्तम और लम्बी कविताएं किसानों के हित से पूर्ण हैं। उसकी बहुत सी कविताओं पर सेंसर ने मनाही लगा दी। किन्तु ऐसी लोकप्रिय और प्रभावपूर्ण कविताएं अधिक समय तक दबी नहीं रह सकती थीं। नेक्रासोफ के जीवनकाल में ही हस्तलिखित प्रतियों द्वारा इन कविताओं का प्रचार हो गया।

नेक्रासोफ की सबसे महत्वपूर्ण रचना 'रूस में कौन अच्छी तरह रह सकता है' (१८६३–१८७६) है। यह सुधार के पूर्व और बाद के जीवन का विश्वकोष है। किसी दूसरी रूसी रचना में जनता के अनेक रूपात्मक चरित्र, स्वभाव, आदत, मनोदशा और आशा का इतना प्रभावपूर्ण और सच्चा चित्र नहीं मिलता है। लेखक की बीमारी और मृत्यु के कारण इस कविता पर उसका काम रुक गया।

इसका विषय लोककथा के अत्यन्त निकट है। ऐसा विषय संसार की सभी लोक-कथाओं में मिलता है। यह सौभाग्य और आनन्द की खोज की कहानी है। कविता का आरम्भ लोक कथा के ढङ्ग पर होता है। 'एक (वर्ष) समय—तुम्हीं गिनो। एक देश में—तुम्हीं समझ लो कि वह कहाँ है।' सात किसान इकट्ठे होते हैं। (और लोक-कथा के समान) बहस करते हैं और फिर झगड़ा करने लगते हैं। फिर एक जादू की चिड़िया प्रकट होती है और उनमें संधि स्थापित करती है, और वे प्रसन्न आदमी की खोज में निकल पड़ते हैं। अपने बच्चों की रक्षा के लिये चिड़िया इनकी कृतज्ञ है और इनको जादू का मेजपोश देती है। लोक-कथा की भावना, और शैली के अत्यन्त निकट, कल्पना के आधार पर कवि वर्णन करता है कि ये कवि क्या न करा पाते हैं। जो अपने को प्रसन्न समझते हैं यह उनकी और उनके भ्रम की कहानी है।

कवि यह बताता है कि 'गुलामों की स्वतंत्रता' से गुलामों का असली हित नहीं हुआ। नशे में चूर भिखारी ही केवल प्रसन्न है। कटु व्यंग के साथ नेक्रासोफ दिखाता है कि अपने को नशे में चूर करके ही अभागे किसान को क्षणभर की विस्मृति मिलती है। किन्तु वह इस कविता में सन् 'सत्तर' के ज़माने में भी कुछ जोड़ता रहा जब कि क्रांतिकारी आन्दोलन बढ़ती पर था और हज़ारों उत्साही युवक जनता के पास उसकी सेवा और क्रांति के लिये जा रहे थे। नेक्रासोफ को उनकी लगन के प्रति बड़ी सहानुभूति थी। नेक्रासोफ का उन पर प्रभाव भी स्पष्ट था। उसके अंतिम वर्षों में गाँव स्कूल की एक अध्यापिका ने लिखा कि कम से कम 'मैंने आनन्द ढूँढ़ लिया—जनता की सेवा में'। बेहद बीमार होने पर भी कवि ने उसे प्रेमपूर्ण उत्तर लिखा कि 'जिस आनन्द के विषय में तुम लिख रही हो वही (आनन्द) मेरी कविता का आगे विषय होना चाहिए था। इसकी समाप्ति (मेरे) भाग्य से नहीं है।' और यह कविता पूरी न हो सकी। किन्तु इसके अंतिम भाग में ग्रीशा दब्रोस्कोलोनोफ के रूप में सच्चे प्रसन्न मनुष्य का परिचय मिला। यह जनता का प्रतिनिधि और जनता के आनन्द का अवतार है।

इसके प्रधान चरित्र किसान हैं जो अपनी खोज में कई प्रकार के गांवों और प्रदेशों में घूमते हैं। जिनके सांकेतिक नाम हैं—जैसे 'अशिक्षा', 'भय', 'लम्बे कष्ट' 'फ़सल की असफलता', 'जमींदार का कर' आदि। दारुण कठिनाइयों और सामान्य

जनता के जीवन-संघर्ष के बीच भी किसानों के कुछ मानवी गुण नष्ट न हुए—जैसें दूसरों के दुख पर सहानुभूति, और अत्याचारों के विरुद्ध लड़ने की तत्परता। कवि बताता है कि जनता का असंतोष किस प्रकार खुले विद्रोह में बदल जाता है।

ये सात किसान किसानों के अलग-अलग वर्गों के प्रतिनिधि हैं। उनमें एक अपनी स्थिति को अच्छी तरह जानता है। 'तुम काम करते हो। काम खत्म होते न होते तो कर्ज देनेवाले सिर पर आ जाते हैं—भगवान, बादशाह और जमींदार'। दूसरा अपने साथी किसान के अधिकारों की रक्षा के लिये दंडित होता है। तीसरा दृढ़ विद्रोही है जो स्वतंत्रता को न छोड़ेगा चाहे जो हो जाय। समाज-बहिष्कृत मुजरिम की कहानी के द्वारा जो कि एक जमींदार को मार कर डाकू बन जाता है। नेक्रासोफ केवल जमींदार की ही नहीं प्रत्युत बादशाह की हत्या का भी संकेत करता है।

नेक्रासोफ बताता है कि किसानों का अंधविश्वास, अज्ञान और नशाखोरी किस प्रकार दास-प्रथा के अंत के साथ लुप्त हो जायँगे। सभी किसान विद्रोही नहीं हैं। बहुत से अपनी अभागी (स्थिति) किस्मत पर संतोष किए बैठे हैं। कभी कभी जमींदारों के गुलाम अपनी कर्कशता में सबसे बड़े अत्याचारी ठहरते हैं। जनता के बीच जासूस और देशद्रोही भी हैं।

कविता के दूसरे भाग में मात्र्योव्ना तिमोफियेव्ना की ठेठ किसान स्त्री की कहानी है जिसे बचपन छोड़कर कभी आनन्द न मिला। शादी करने पर और अपने पति के घर जाने पर उसकी वही दशा होती है जो दूसरी लड़कियों की। उसका बच्चा मर जाता है। उसका काम बड़ा होता जाता है, और वह विधवा हो जाती है। वह यह सब धैर्य के साथ सहती है और उसका दृढ़ विश्वास है कि किसान स्त्रियों के बीच आनन्द को ढूँढ़ना व्यर्थ है। इसी स्पष्टता और व्यंग के साथ नेक्रसोफ कई जमींदारों के जीवन का चित्रण करता है।

नेक्रासोफ के जीवन और उसके घनिष्ठ मित्रों के क्रांतिवादी कार्य को जान लेने के बाद उसकी कविता की व्यथा, आग और तीव्र इच्छा के स्वर सहज ही समझ में आ जाते हैं। 'रात लम्बी है। तूफान को फूटना चाहिए। प्याला लबालब है।' दूसरी कविताएँ ज़माने के नए लोगों को—दोब्रोल्यूबोफ, चर्निश्येव्स्की, और स्वतंत्रता के कार्यकर्त्ता और शहीद—समर्पित हैं। 'रूस में कौन अच्छी तरह रह सकता है' नामक कविता में ग्रीशा 'नये लोगों' में है। इसकी गरीबी और दुख इसे जनता के समीप लाते हैं और उसके जीवन के उद्देश्य को निश्चित और स्थिर कर देते हैं। 'पंद्रह वर्ष की अवस्था में ही उसके निश्चय बन गए थे। वह निःस्वार्थी है, और आदर्शवादी क्रांतिकारी है, किन्तु वह अकेला नहीं है। उसकी तरह के

हजारों आदमी इस 'सम्मान के मार्ग' पर चल पड़े हैं 'किस्मत ने, जनता के प्रतिनिधियों के लिये, साइबेरिया को जानेवाला ख्यातिपूर्ण और सम्मानपूर्ण पथ तैयार किया है'। उसके सामने जो कुछ आता है जनता की जागर्ति के दृश्य और उसकी अंतिम विजय की दृढ़ भावना से सहता जाता है। 'इस कविता के शीर्षक' का जो प्रश्न है उसका वह (आशा) उत्तर है।

नेक्रासोफ का उद्देश्य ऐसी पुस्तक का लिखना था जो लाभप्रद हो, जनता की समझ में आ जाय, और सच हो। यह पुस्तक जनता के लिये है और उसके बारे में है। इसलिये अपनी सामग्री के लिये मौखिक लोक-काव्य और लोक-कथा की ओर आकृष्ट हुआ, इस काव्य में जनता का आध्यात्मिक जीवन उसकी आशाएँ और विश्वास की झलक है उसकी बहुतसी रचनाओं का मूल्य इसी में है।

उसके कागजों में लोक-साहित्य-संबंधी सामग्री और टिप्पणियाँ संगृहीत और सुरक्षित मिलीं और वह लोक-कथाओं, मुहावरों, काव्य और गीत के प्रकाशित संग्रहों से पूर्णतया परिचित था।

लोक साहित्य का यह तत्व इन कथाओं की कल्पनात्मकता में मिलता है, जो कि यथार्थ जीवन के वास्तविक चित्र में बिलकुल घुलमिल गया है। इस कथा के कथन में लोक गीत की पुनरावृत्ति की शैली का प्रयोग करता है। इस कविता का दूसरा भाग तो लोक-साहित्य की सामग्री पर ही बना है। कवि बहुत से लोकप्रिय मुहावरों का भी प्रयोग करता था। इसमें कुछ कृत्रिमता नहीं। कवि जनता की कला और भाषा की भावना के भीतर घुसता है। उसके कुछ गीत जनता की सम्पत्ति बन गए और इस प्रकार उसने लोक-भंडार को समृद्ध बनाया।

सरलता, स्पष्टता, युक्ति-युक्तता उसके पद-विन्यास की विशेषता है और किसानों के लोकप्रिय मुहावरों का सम्पर्क उसकी साम्ययोजना और जोरदार शैली में प्रकट होता है। अपने पात्रों की बोली को उसके उपयुक्त और ठेठ बनाने के लिये उसका प्रयोग होता है। गाँव के पुरोहित भी ठीक इसी प्रकार आध्यात्मिक कहावतों का प्रयोग करके बोलते हैं। कविता विशेषण, नकारात्मक तुलना, अतिशयोक्ति से पूर्ण है, और लोक-काव्य के अत्यन्त निकट आ जाती है। इस कविता का अधिक भाग अतुकान्त छन्द में है, यद्यपि थोड़ा तुकान्त में भी है। यह लोक गीत की शैली के अनुकूल भी है। उसके पहिले के किसी कवि ने सामान्य जनता की आशाओं और विचारों को इतने जोरदार शब्दों में नहीं प्रकट किया था। सन् पचास की नई पीढ़ी ने इसे अपना कवि माना। नेक्रासोफ ने उनके लिये वही काम किया जो कि पुश्किन ने सन् बीस तीस के जमाने में किया।

पुश्किन शास्त्रवाद को छोड़कर जीवन और जीवित भाषा की ओर मुड़ा। वह लोक-साहित्य की ओर मुड़ा और दूसरे लेखकों से भी जनता से कुछ सीखने को कहा। उस समय के जटिल समाज की पूरी झलक उसकी रचनाओं में है। यही बात पुश्किन के शिष्य लरमन्तोफ के बारे में भी है किन्तु उनके बाद के लेखक इस ओर न बढ़े। बहुत से कवियों की न तो सामाजिक जीवन और न जनता की ओर रुचि थी। उन्होंने कविता को जीवन से वियुक्त कर उसे कृत्रिम और कीमती बना दिया। सन् 'चालीस' के जमाने में यद्यपि बहुत से कवियों ने लिखा फिर भी उनकी कविता का ह्रास हो रहा था। नक्रासोफ ने नई सामाजिक परिस्थिति के बीच पुश्किन और लरमन्तोफ की परम्परा को फिर से जीवित किया। उन्हीं की तरह वह प्रेरणा के लिये जनता, जन-भाषा और जन-काव्य की ओर अग्रसर हुआ, और इस प्रकार कविता में नवीनता और गंभीरता लाया।

उसकी रचना-शक्ति का विकास ब्यलिन्स्की के प्रभाव के बीच हुआ और उसकी रचनाओं ने चार्नेश्यव्स्की के सौंदर्यवादी सिद्धान्तों को सिद्ध किया विशेष कर इस सिद्धान्त को कि कविता को अपने समय की सामाजिक और मानवी समस्याओं को सुलझाना चाहिए। भाषा और शैली को अत्यन्त सरल बना कर और इस प्रकार कृत्रिमता और सजावट को हटा कर उसने ऐसे विचार और विषयों का समावेश किया जिसे कविता के उपयुक्त नहीं माना जाता था। नेक्रासोफ की कविता में बहुत से लोकप्रिय शब्दों और वस्तुओं को पहिली बार नागरिकता का अधिकार मिला। यह शिष्ट और ड्राइंग रूम की कविता के बिलकुल उल्टी थी। उसने अपनी रचनाओं में नित्यप्रति के वातावरण का समावेश, कलात्मकता को बिना बचाय किया।

पुश्किन की तरह उसकी कवि वाणी भी रूसी जनता के हृदय की गूंज बनी। उसकी कविता का प्रभाव मायाकाव्स्की, इसाकोव्स्की, त्वारदोव्स्की जैसे आधुनिक कवियों पर है। बीसवीं शती के समालोचक लुनाचारस्की ने लिखा कि समग्र रूसी-साहित्य में कोई ऐसा आदमी नहीं है जिसके सामने हमें इतने प्रेम और श्रद्धा से विनम्र होना चाहिए जितना कि नेक्रासोफ की स्मृति के समक्ष।

———

नव 'नत्तर' और 'अग्मी' का युग

[illegible] 'किसानों' (ग्राम पार्लामेंट) [illegible] के अनुकूल विकास [illegible] है। [illegible] विशेष [illegible] विकास के बाद [illegible] और [illegible] [illegible] 'गांव' के [illegible] हुई [illegible] में [illegible]

[illegible] दिखलाया दिया कि [illegible] के लिये कितना [illegible] हो गया है। [illegible] की [illegible] आन्दोलन भी नहीं [illegible] की [illegible] परिस्थिति है।

[illegible] नहीं हो [illegible] तक कि [illegible] में [illegible] होनेवाले सामाजिक राजनीतिक [illegible] है। [illegible] सामाजिक राजनीतिक जीवन के [illegible] आन्दोलनों की [illegible] आवश्यक है। इन आन्दोलनों [illegible] 'नरोदनी' [illegible] है। यह 'किसान समाजवाद' का [illegible] और [illegible] 'मीर' और 'पंचायत' में [illegible] ने डाली। 'नरोदनिकी' या नरोदवादी, किसान को आधारभूत वर्ग मानता था और समझता था कि वह (किसान) रूस के भविष्य के जीवन को समाजवाद में परिवर्तित कर देगा। [illegible] भविष्य के समाजवादी समाज का बीज किसानों के 'कम्यून' या 'मीर' या पंचायत में दिखाई पड़ता था। उनका विचार था कि यदि गाँव की [illegible] प्रथा और गाँव पंचायत द्वारा अपनी समस्या सुलझाने और या 'पैतृक' (Patriarchal) सम्बन्ध की व्यवस्था सुरक्षित रखी जा सके तो इससे देश का भविष्य भी सुधर जायगा और टुकड़े-टुकड़े करनेवाले पूँजीवादी प्रभाव का संकट भी दूर हो जायगा। वे पूँजीवादी समाज की मंजिल से बचकर गाँव के 'कम्यून' द्वारा समाजवाद के अवतरण का स्वप्न देख रहे थे।

किन्तु उस समय के विचारशीलों को दास-प्रथा से शीघ्र ही मुक्त हुए किसानों के बारे में अधिक नहीं मालूम था। यद्यपि किसान और उनके ग्राम

जीवन की संस्थाएँ लोगों को ज्ञात थीं फिर भी सामान्य जनता की भावना, उनकी अंतरंग आशाएँ और राजनीतिक विचार आदि का अध्ययन नहीं हुआ था। जनता के इस 'रहस्य' का भेद पाने के लिये, इन लोगों ने गाँवों में जाकर किसान के जीवन और उसके आदर्श के बारे में ज्ञान प्राप्त करने की बात सोची। सम्पर्कवादियों के उग्र दल को इस प्रकार किसानों की आँख खोलकर उनमें अधिकारों के लिये क्रांतिकारी संघर्ष और निरंकुशता के विरोध की आवश्यकता का महत्त्व प्रकट कर अपने राजनीतिक ध्येय की पूर्ति की आशा थी।

सन् 'सत्तर' के युग के बीच 'जनता के पास जाने' का सामूहिक प्रयत्न शुरू हुआ। किसानों के पहिनावे में क्रांतिकारी नवयुवक बढ़ई, लुहार आदि के रूप में गाँवों में जाने लगे। फिर उनको पता लगा कि उनके और गाँव के किसानों के बीच कोई सामान्य भाषा (या भाषासाम्य) नहीं है। इस आन्दोलन को अधिक सफलता न मिली। इसकी असफलता का मुख्य कारण यह है कि 'जन-सम्पर्कवादी ने यह गलत सोचा कि प्रधान क्रांतिकारी शक्ति मजदूरों में नहीं बल्कि किसानों में है और यह कि किसान ज़ार और जमींदार के शासन को अकेले उलट सकता है। वह यह नहीं जानता था कि बिना मजदूरों में सम्बन्ध स्थापित किये और उसके नेतृत्व के बिना किसान अकेले कुछ भी न कर पायेगा'। क्रांतिकारी संघर्ष में किसानों के काम को अत्यधिक महत्व देना ही उनकी सबसे बड़ी गलती थी।

'जनता के पास जाने' की इस योजना के असफल होने पर 'भूमि और स्वतन्त्रता' दल में मतभेद हो गया। यद्यपि एक दल पुराने कार्यक्रम में लगा रहा, दूसरे दल ने—जो कि १८७६ के बाद से 'जनता की स्वतन्त्रता' की पार्टी के नाम से विख्यात हुआ—निरंकुशता के उन्मूलन के लिये हिंसात्मक उपायों को अपनाया। इस दल ने अलेक्जेंडर द्वितीय को जो चुनौती दी, उसका रूस के विचारशीलों पर बड़ा प्रभाव पड़ा। इस प्रकार निरंकुशता और क्रांति के बीच जीवन-मरण का संघर्ष शुरू हुआ और सभी इसकी प्रगति और परिणाम को बड़े ध्यान से देखने लगे।

'समकालीन' पत्र के बन्द होने पर 'जन्मभूमि समाचार' क्रांतिवादी जनतन्त्रात्मक आदर्श के लिये वैसा ही दृढ़ संघर्ष करता रहा। [illegible] पत्र ने देश
के पूँजीवादी विकास की विशेषताओं का दिग्दर्शन, मजदूर व[illegible] [illegible] अ
पूँजीवाद के कारण ग्रामसमाज के टूटने आदि का बड़ा [illegible]
कराया। नेक्रासोफ की मृत्यु के बाद 'साल्तिकोफ चेद्रिन' [illegible]
रूसी विचारशीलों में प्रगतिशील भावनाएँ और [illegible]
के लेखकों का अधिकाधिक महत्वपूर्ण भाग लेना इस युग [illegible]

समय लेखकों के ऐसे वर्ग का अविर्भाव होता है जिसके विचार 'जनसम्पर्कवादी' हैं। इनमें उस्पेंस्की, करोनिन, पेत्रोपावोलोव्स्की, ज्लातोव्रात्स्की आदि मुख्य हैं।

इनमें ग्ल्येब उस्पेंस्की सबसे अधिक प्रतिभावान है। उसके सन् 'साठ' में कमकर, कारीगर, सौदागर और मुफस्सिल के अफसरों के बारे में कहानी लिखना शुरू किया। जनसम्पर्कवादी आन्दोलन में वह स्वयं गाँवों में गया और किसान-जीवन का सावधानी से अध्ययन किया। परिणाम-स्वरूप उसने गांव के समाज की अनेकरूपात्मक कहानियां और रेखाचित्र लिखे जो बड़े लोकप्रिय हुए। उसकी दृष्टि पैनी थी और वह अपने विषय का निरीक्षण बाह्यार्थता और इतनी निष्पक्ष यथार्थता से करता था कि कभी कभी उसके निष्कर्ष जनसम्पर्कवादी विचारधारा से मेल न खाते थे। उसने देखा कि पूंजीवाद ग्राम-संस्थाओं और किसानो की पितृसत्ताक (Patriarchal) मनोदृष्टि को नष्ट कर रहा है। साथ ही यह भी जान लिया कि पूंजीवाद रोका नहीं जा सकता। जनसम्पर्कवादी आन्दोलन का करुण अंत इसकी रचनाओं मे स्पष्ट है। इसका उस्पेंस्की पर भी प्रभाव पड़ा। उसके जीवन के अंतिम वर्ष पागल खाने में बीते।

नेक्रासोफ सन् 'सत्तर' का प्रमुख कवि था। उसकी रचना 'रूस में कौन अच्छी तरह रह सकता है' इसी दशक में प्रकाशित हुई।

साल्तिकोफ चेद्रिन उच्चवंशो का खाका उड़ा रहा था। उसकी रचना 'मेसर्स गोलोव्ल्योफ' का अपने समय मे जब कि निरंकुशता अपने अधिकारों की रक्षा के संघर्ष मे निरत थी राजनीतिक महत्व था।

ल्येब तात्स्ताय को रचना 'अन्ना करेनिना' इसी समय की है। यद्यपि उसके विचार जनतंत्रात्मक सामान्य वर्ग से बिल्कुल अलग थे। फिर भी वह अपने ढग से उस समय के सबसे बड़े प्रश्न 'किसान का क्या हाल होगा' पर विचार कर रहा था।

फ्योदोर मिखाइलोविच दोस्तोयेव्स्की (१८२१–१८८१)

सन् 'सत्तर' के जमाने के क्रांतिवादी आन्दोलन के बीच इसका अपना स्थान है। इसका सर्जनात्मक काम सन् 'चालीस' मे शुरू हुआ। उसकी प्रतिभा-शक्ति निजी शैली, गंभीर मानवता, सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विश्लेषण का परिचय 'गरीब' नामक पुस्तक (१८४५–१८४६) से मिलने लगता है। विषय और मानवतावाद की प्रवृत्ति वही है जो गोगल के 'ओवरकोट' मे मिलती है। इसमें एक नवयुवक के आत्मगौरव-विहीन आन्तरिक जीवन का चित्रण है। ब्येलिंस्की ने इसकी प्रतिभा को पहचाना और उसकी ख्याति की भविष्यवाणी की, किन्तु उसने यह भी बताया कि अपनी कहानी 'दोहरा' (Double) मे लेखक ने गलत रास्ता पकड़ा है।

सन् 'चालीस' के युग के अन्त में दोस्तोयेव्स्की 'युरोपियन समाजवाद' की ओर आकृष्ट हुआ। वह पेत्राश्येव्स्की गोष्ठी का सदस्य हुआ और सन् १८४६ में उसे दूसरे सदस्यों के साथ मौत की सजा मिली। फांसी के तख्ते पर वह और उसके साथी खड़े किये गए किन्तु उसी मिनट एक अफसर ने आकर माफी की घोषणा सुनाई। जब वे लोग तख्ते से उतारे गए तो उनमें से एक पागल हो गया था। दोस्तोयेव्स्की ने चार वर्ष की कड़ी कैद साईबेरिया में बिताई और फिर पांच वर्ष सेना की एक बटेलियन के साथ। १८५६ में वह पीटर्सबर्ग लौटा।

इन अनुभवों और प्रगतिशील गोष्ठियों से कटे रहने का प्रभाव लेखक के दर्शन पर पड़ा। वह अत्यन्त जर्जरित और रुग्ण अवस्था में वापस लौटा। उसका झुकाव धार्मिक रहस्यवाद की ओर हो गया। उसने सामाजिक संघर्ष के महत्व को स्वीकार न किया। विभिन्न वर्गों के बीच पारस्परिक सामंजस्य और समझाने के लिये अपील की और धार्मिक नैतिक सुधार या उत्कर्ष की पहली आवश्यकता बताई।

जीवन की विषमताओं को सुलझाने में असमर्थ होने के कारण उसने इस सिद्धांत को मान लिया कि 'जीवन कष्ट या दुःखसहन है', और उसका कहना था कि 'ऐ गर्वीले मनुष्य नम्र बन'। दोस्तोयेव्स्की की इस शिक्षा और ताल्स्ताय के उपदेश पर—कि अपने को पूर्ण बनाओ और बुराई का विरोध न करो—गोर्की का निम्नलिखित कथन है—'इस धैर्य और बुराई के अविरोध की शिक्षा में लज्जा और कटु व्यंग का तत्व है। ऐसा प्रतीत होता है कि संसार के दो प्रतिभाशाली महापुरुष ऐसे देश में रहे जहाँ जनता पर अत्याचार उग्रता की ऐसी चरम सीमा पर पहुँच गया था कि लोग उसकी पाशविकता से (Cynicism) स्तब्ध हो गए थे।

१८५६ में 'स्तेपान त्रिकोको' का गाँव और 'दादा के स्वप्न' छपे। १८६१

क्योंकि उसने ईश्वरीय नियम 'तू किसी की हत्या न करेगा' की अवहेलना की और ईसाइयों की नम्रता और दुःखसहन की पवित्रता का प्रचार करता है।

'यूरोपियन सोशलिज्म' के विचारों ने नकारात्मक चित्रण के साथ गरीबों का जो अत्यन्त सहानुभूतिपूर्ण चित्र मिलता है उससे लेखक के विचारों की विषमता समझ में आ सकती है। उसकी स्थिति सामान्यवर्ग के उस बौद्धिक लेखक के समान है जो बुर्जुआ व्यवस्था का शत्रु है किन्तु जो अपना छुटकारा इस व्यवस्था के विरुद्ध चलनेवाले क्रांतिकारी संघर्ष में न देखकर धार्मिक उदासीनता और नम्रता में समझता है।

इस आधारभूत विचार के मिथ्या और प्रतिक्रियावादी होने पर भी यह उपन्यास कलात्मकता का अन्यतम और अपूर्व उदाहरण है मनोवैज्ञानिक चित्रण की गहराई ने और पूँजीवादी युग की सामाजिक दशा के जोरदार यथार्थवादी अंकन ने इस उपन्यास को विश्वसाहित्य की महान् रचना बना दिया।

१८६७ में दोस्तोयेव्स्की विदेश गया और चार वर्ष तक घूमता रहा। अपने कर्जदारों से बचने के लिये (क्योंकि 'पत्रों' के बन्द होने पर उस पर बड़ा कर्जा हो गया था) वह ऐसा करने को विवश था। इस समय उसने 'बेवकूफ' (१८६८) और 'शैतान' उपन्यास लिखे। इस दूसरे उपन्यास (शैतान) में लेखक खुले रूप में अपने समय के क्रांतिवादी सामाजिक और साहित्यिक व्यक्तियों के चित्र उपस्थित करता है—जैसे पेत्राश्येव्स्की, नेचायेव, तुर्गेन्येव आदि। समकालीनों ने इसे अशिष्ट व्यक्तिगत आक्रमण माना। इस पुस्तक से दोस्तोयेव्स्की की सन् 'सत्तर' की प्रतिक्रियावादी प्रवृत्ति स्पष्ट हो जाती है। जीवन के अंतिम वर्षों में उसने दो और महत्वपूर्ण उपन्यास 'करामजोफ भाई' (१८८०) और 'जवान' (१८७५) लिखे, जिससे लेखक की कलात्मक प्रतिभा की शक्ति और दुर्बलता दोनों स्पष्ट हो जाती हैं।

ल्येस्कोफ (१८३१-१८९५)

इस युग के अन्य लेखकों में ल्येस्कोफ का नाम उल्लेखनीय है। वह गद्य का बड़ा और मौलिक कलाकार है। किन्तु इसने सन् साठ और सत्तर (६० और ७०) में प्रजातंत्रवादियों का विरोध किया। कथन और हास के संबंध में उसकी अत्यन्त विकसित प्रतिभा का दर्शन पुरोहिती समाज के जीवन से संबंधित उपन्यासों में—जैसे 'गिरजाघर' (१८७२)—मिलता है। ल्येस्कोफ सुधार के पहले और बाद के सामान्य जीवन से पूर्णतया परिचित था, और कथा-कहानी आदि का बड़ा उत्साही संग्रहकर्ता था। उसकी मौलिकता लोकप्रचलित भाषा की शैली लोककथा के ढंग के उपयोग में है। उसके रचनात्मक कौशल की गोर्की और ताल्स्ताय ने प्रशंसा की।

सन् 'चालीस' के युग के अन्त में दोस्तोयेव्स्की 'युरोपियन समाजवाद' की ओर आकृष्ट हुआ। वह पेत्राश्येव्स्की गोष्ठी का सदस्य हुआ और सन् १८४९ में उसे दूसरे सदस्यों के साथ मौत की सजा मिली। फांसी के तख्ते पर वह और उसके साथी खड़े किये गए किन्तु उसी मिनट एक अफसर ने आकर माफी की घोषणा सुनाई। जब वे लोग तख्ते से उतारे गए तो उनमें से एक पागल हो गया था। दोस्तोयेव्स्की ने चार वर्ष की कड़ी कैद साइबेरिया में बिताई और फिर पांच वर्ष सेना की एक बटेलियन के साथ। १८५९ में वह पीटर्सबर्ग लौटा।

इन अनुभवों और प्रगतिशील गोष्ठियों से कटे रहने का प्रभाव लेखक के दर्शन पर पड़ा। वह अत्यन्त जर्जरित और रुग्ण अवस्था में वापस लौटा। उसका झुकाव धार्मिक रहस्यवाद की ओर हो गया। उसने सामाजिक संघर्ष के महत्व को स्वीकार न किया। विभिन्न वर्गों के बीच पारस्परिक सामंजस्य और समझाने के लिये अपील की और धार्मिक नैतिक सुधार या उत्कर्ष की पहली आवश्यकता बताई।

जीवन की विषमताओं को सुलझाने में असमर्थ होने के कारण उसने इस सिद्धांत को मान लिया कि 'जीवन कष्ट या दुःखसहन है', और उसका कहना था कि 'ऐ गर्वीले मनुष्य नम्र बन'। दोस्तोयेव्स्की की इस शिक्षा और ताल्स्ताय के उपदेश पर—कि अपने को पूर्ण बनाओ और बुराई का विरोध न करो—गोर्की का निम्नलिखित कथन है—'इस धैर्य और बुराई के अविरोध की शिक्षा में लज्जा और कटु व्यंग का तत्व है। ऐसा प्रतीत होता है कि संसार के दो प्रतिभाशाली महापुरुष ऐसे देश में रहे जहाँ जनता पर अत्याचार उग्रता की ऐसी चरम सीमा पर पहुँच गया था कि लोग उसकी पाशविकता से (Cynicism) स्तब्ध हो गए थे।

१८५९ में 'स्तेपान त्रिकोको' का गाँव और 'दादा के स्वप्न' छपे। १८६१ में उसने अपने भाई के साथ अपने पत्र 'समय' और 'युग' चलाये। उसकी महत्वपूर्ण पुस्तकें 'मरे घर के समाचार' और 'जुर्म और सजा' १८६६ में छपे।

लेखक के निर्वासन के बाद के विचार इस अन्तिम पुस्तक में बड़ी कलात्मकता के साथ प्रकट किए गए हैं। इसका नायक 'रास कोल्निकोफ' है जो पूँजीवादी नगर में जीवन की कटु विषमता को देखता है। सन् 'साठ' के क्रान्तिकारी मार्ग को न ग्रहण कर वह 'व्यक्ति के अधिकार' के सिद्धान्त द्वारा मनुष्य के सुख की समस्या को हल करना चाहता है। उसका विचार है कि सबल व्यक्ति के लिये सब कुछ क्षम्य है। सबल सब कुछ कर सकता है और वह कर्जा देनेवाली एक स्त्री की हत्या करता है। अपने गुनाह के बोझ से दबकर वह अपने मन से अपने को अधिकारियों को सौंप देता है, और सपरिश्रम कारावास स्वीकार करता है। तत्पश्चात 'रास कोल्निकोफ' की विद्रोही वैयक्तिकता की निन्दा करता है

क्योंकि उसने ईसाईयत नियम 'तू किसी की हत्या न करेगा' की अवहेलना की और ईसाइयों की नम्रता और कष्टसहन की पवित्रता का प्रचार करता है।

'यूटोपियन सोशलिज़्म' के विचारों से [illegible] के साथ गरीबों का जो अत्यन्त सहानुभूतिपूर्ण चित्र मिलता है उससे लेखक के विचारों की निर्बलता समझ में आ सकती है। उसकी स्थिति रास्कोलनिकोव के उस [illegible] के समान है जो [illegible] किन्तु [illegible] [illegible] में न [illegible] धार्मिक उदासीनता और [illegible] में समाप्त होता है।

इस कलात्मक विचार के निम्न और प्रतिक्रियावादी होने पर भी यह उपन्यास कलात्मकता का उत्तम और उत्कृष्ट उदाहरण है। मनोवैज्ञानिक विश्लेषण की गहराई ने और पूँजीवादी युग की सामाजिक दशा के जोरदार यथार्थवादी चित्रण ने इस उपन्यास को विश्वसाहित्य की महान् रचना बना दिया।

१८६७ में दोस्तोयेव्स्की विदेश भाग और चार वर्ष तक घूमता रहा। अपने कर्ज़दारों से बचने के लिये (क्योंकि 'पत्रों' के बन्द होने पर उन पर इतना कर्ज़ हो गया था) वह ऐसा करने को विवश था। इस समय उसने 'बेवकूफ़' (१८६८) और 'शैतान' उपन्यास लिखे। इस दूसरे उपन्यास (शैतान) में लेखक ने व्यंग्य रूप में अपने समय के क्रान्तिकारी सामाजिक और साहित्यिक व्यक्तियों के चित्र उपस्थित करता है—जैसे पेत्राशेव्स्की, नेचायेव, तुर्गेनेव आदि। समालोचकों ने इसे अशिष्ट व्यक्तिगत आक्रमण माना। इस पुस्तक में दोस्तोयेव्स्की की सन् 'सत्तर' की प्रतिक्रियावादी प्रवृत्ति स्पष्ट हो जाती है। जीवन के अंतिम वर्षों में उसने दो और महत्त्वपूर्ण उपन्यास 'करामज़ोव भाई' (१८८०) और 'जवान' (१८७५) लिखे, जिनमें लेखक की कलात्मक प्रतिभा की शक्ति और दुर्बलता दोनों स्पष्ट हो जाती हैं।

ल्येस्कोफ़ (१८३१-१८९५)

इस युग के अन्य लेखकों में ल्येस्कोफ़ का नाम उल्लेखनीय है। यह गद्य का बड़ा और मौलिक कलाकार है। किन्तु इसने सन् साठ और सत्तर (६० और ७०) में प्रजातंत्रवादियों का विरोध किया। कथन और हास के संबंध में उसकी अत्यन्त विकसित प्रतिमा का दर्शन पुरोहिती समाज के जीवन से संबंधित उपन्यासों में—जैसे 'गिरजाघर' (१८७२)—मिलता है। ल्येस्कोफ़ सुधार के पहले और बाद के सामान्य जीवन से पूर्णतया परिचित था, और कथा-कहानी आदि का बड़ा उत्साही संग्रहकर्ता था। उसकी मौलिकता लोकप्रचलित भाषा की शैली लोककथा के ढंग के उपयोग में है। उसके रचनात्मक कौशल की गोर्की और तालस्ताय ने प्रशंसा की।

मेलनिकोव प्येचेर्स्की (१८१६-१८८३)

इस लेखक ने दो लोकप्रिय उपन्यास 'जंगल में' (१८७० से ७५) और 'पहाड़ों पर' (१८७५ से १८८१) लिखे। यद्यपि राजनीति में वह अपरिवर्तन-वाद था फिर भी उसने मध्यम वर्ग के जीवन का अपूर्व परिचय दिया है।

मार्च १८८१ में अलेक्जेंडर द्वितीय की उस पर जनता की स्वतंत्रता पार्टी के सदस्य ग्रिनोवेत्स्की द्वारा बम फेंके जाने से हत्या हुई। यह आतंकवादी आन्दोलन का सबसे बड़ा कार्य हुआ। किन्तु इसके बाद उसकी दुर्बलता भी स्पष्ट हो गई। जनता का समर्थन न प्राप्त होने के कारण यह आन्दोलन शीघ्र ही कुचल दिया गया। व्यक्तियों की हत्या के द्वारा निरंकुश शासन नहीं उलटा जा सकता। अलेक्जेंडर की हत्या के बाद शासन और भी कठोर हो गया। रूसी विचारकों और लेखकों को राष्ट्रीयता के समर्थन के कारण भारी कीमत चुकानी पड़ी। कुछ क्रांतिकारी फाँसी पर लटका दिये गये। कुछ स्लुइशबर्ग की अन्धी कोठरियों में जिन्दा ही डाल दिये गये और कुछ साइबेरिया की खानों में गये। लोकप्रिय आदर्शों के नायकों की परम्परा इस समय लुप्त हो जाती है। जनता की स्वतन्त्रता की पार्टी को कुचलने के बाद प्रतिक्रियावादी और आगे बढ़े। प्रतिक्रियावादियों द्वारा प्रेरित यहूदियों के प्रोग्राम (हत्या) की लहर चल पड़ी। यहूदियों के विरुद्ध प्रचार खुलेआम रूस में उस समय के बड़े-बड़े व्यक्तियों द्वारा किया जाने लगा।

• इस क्रूरता के शासन का लेखकों पर प्रभाव पड़ा। पूर्वदशक के सामाजिक उत्साह का स्थान उदासीनता, निराशा और आध्यात्मिक निष्क्रियता ने ले लिया। यह समय वैयक्तिकता (Domesticity) और बुर्जुआ स्वप्न और निश्चिन्तता का समय था। इससे 'छोटे कार्यों के सिद्धान्त' की लोकप्रियता, ताल्स्तायवाद की ओर झुकाव, और शुद्ध कला की अभिरुचि का कारण स्पष्ट हो जाता है।

'छोटे कार्यों का सिद्धान्त' सैद्धान्तिक प्रतिगमन और उद्देश्यहीनता के समय में आया। और मूलतः यह सन् 'साठ' और 'सत्तर' की (६० और ७०) क्रांतिवादी परम्परा का परित्याग था यद्यपि यह सामाजिक हित के वेष में छिपा था। इस वाद का यह कहना था कि यह समय क्रांति के लिये उपयुक्त नहीं है और इसके लिये धीरे-धीरे तैयारियाँ करना चाहिए। 'सप्ताह' पत्र जो कि इस वाद का मुख्य प्रचारक था सोचता था कि सही रास्ता केवल यही है कि विचारक और लेखक छोटे-छोटे सांस्कृतिक कामों को लेकर जनता को जगायें और उनके चारों ओर के वातावरण को सुधारें। यह बहुत लोगों को अच्छा लगा क्योंकि इस प्रकार वे अपनी आत्मा को भी बचा सकते थे और दुविधा से छूट सकते थे। वास्तव

है कि [illegible] राजनीतिक दशा का परिवर्तन था और क्रांतिकारी संघर्ष के स्थान पर [illegible] संस्कृति का प्रचार था।

नैतिक पूर्णत्व (Moral perfection) के सिद्धान्त में—जिस पर तॉल्सताय ने [illegible] और [illegible]—दोनों के समन्वय से [illegible] बल को प्राप्त किया। तॉल्सताय के अव्यवहारिक सिद्धान्त और बुराई के प्रतिरोध के उपदेश को [illegible] के लिये [illegible] ग्रहीत किये हुए, [illegible] और [illegible] लेखकों में [illegible] मिली।

[illegible] 'अस्सी' के अन्त के [illegible] युग [illegible] की अभिव्यक्ति भी हुई। पतनशील मनोवृत्ति की [illegible] थी। [illegible] का पुनरागमन [illegible] की नागरिकता की [illegible] के स्थान पर [illegible] और [illegible] में [illegible] और सुन्दर उपमाओं की [illegible] था।

सन् ८० की [illegible] की झलक कुछ समय के पत्रों में मिली। [illegible] का पत्र '[illegible] समाचार' १८८४ में बन्द कर दिया गया। दूसरे प्रगतिशील पत्र भी इसी प्रकार बन्द किये गये। [illegible] पत्रों का प्रकाशन, '[illegible]' और [illegible] का 'यूरोपियन हेराल्ड' [illegible] अनुदारवादी हो गए। '[illegible]' और '[illegible]' जैसे [illegible] और [illegible] आलोचनात्मक पत्रों के स्थान पर अब कुछ [illegible] की [illegible] मैगज़ीन निकलने लगीं। इस युग के ठेठ प्रतिनिधि नादसन और गार्शिन हैं।

नादसन (१८६२—१८८७)

यह 'अस्सी' का सबसे लोकप्रिय कवि था। इसने थोड़ा ही लिखा और इसकी मृत्यु युवावस्था में ही हो गई। फिर भी इसने उस समय की निराशा और विषाद की भावना और अनुभूति का सच्चा चित्र उपस्थित किया है।

इसकी प्रारम्भिक कविताओं में 'जनसंपर्कवादियों' के विचारों की गूँज मिलती है। यह 'छोटे भाई' अर्थात् किसान के बारे में लिखता है कि वे धीरज और परिश्रम के अवतार हैं जो कि देश के लिये अपना खून बहाते हैं। उसका विश्वास है कि वह समय अवश्य आयेगा जब कि न्याय का सूर्य जगेगा। कटु वास्तविकता ने इन भावनाओं को शीघ्र ही मिटा दिया। प्रतिक्रिया के तीव्र होने पर कवि ने लिखा कि 'हर अगले कदम पर सब कुछ अधिक अंधकारपूर्ण और भयानक है। हर कदम पर आशाएँ कम और मित्र भी थोड़े होते जाते हैं।'

यह कहता है कि 'मुक्ति का द्वार ढूँढ़ते हुए' केवल वही नहीं गिरा। बल्कि उसके साथी और के लोग इसी संघर्ष में डूब गए और युद्धक्षेत्र से भागे हुए शत्रु बन गये। उसे अपनी पीढ़ी से निराशा ही थी क्योंकि उसने (पीढ़ी) 'अपने देवताओं' और अपनी ढाल शत्रु के सम्मुख इतनी जल्दी फेंक दी। इस पीढ़ी में विश्वास का अभाव और हृदय की दुर्बलता थी। वह व्यथा से कहता है

कि 'हमारे हृदय पालना में ही वृद्ध और दुर्बल हो जाते हैं। विश्वास के अभाव से दबे हुए और शोक से घुने (खाए) हुए हम उत्कट इच्छा की भी क्षमता नहीं रखते। और घृणा भी हमारे अन्दर मुँह छिपा रही है। हमारी पीढ़ी नहीं जानती कि जवानी क्या है। क्रूर प्रतिक्रिया के बीच, ऐसी ही परिस्थिति में पचास वर्ष पूर्व लिखित, लरमन्तोफ की 'शैतान' कविता की गूँज इन रचनाओं में भी है। कभी-कभी नादसन अपने और दूसरों में हिम्मत भरना चाहता है। संसार में 'प्रेम' के पुनरावर्त्तन में विश्वास करता हुआ वह यह कहता है कि 'मेरे मित्र चमकीला प्रभात कोरा सपना नहीं है, निस्सार आशा नहीं है। देखो चारों ओर पाप (Evil) का आतंक है। रात बेहद काली है। किन्तु इन आश्वासनों में भी न्याय की विजय के दृढ़ विश्वास की अपेक्षा निराशा अधिक है।

गहरी निराशा के बीच नादसन पूछता है कि जीवन का उद्देश्य क्या है और कोई जीवित ही क्यों रहे। उसका अपनी कविता से भी विश्वास उठ गया क्योंकि वह सोती हुई पीढ़ी को संघर्ष के लिये नहीं जगा सकी। उद्देश्यहीनता की दारुणता, और यह विचार कि उसके कार्य का कोई मूल्य नहीं, इन भावनाओं ने उसकी कविता को घोर निराशा से भर दिया। 'सोचने और दुःख सहने से क्या लाभ। इतनी देर में यह मेरी समझ में क्यों आया कि इस सृष्टि के संघर्ष और अराजकता का केवल एक ही उद्देश्य है। 'निर्वाण की शान्ति' असत् या अभाव की शान्ति। वह अपने को चिन्ता और सन्देह का पुत्र कहता है। नादसन की कविता का मुख्य गुण उसकी सच्चाई और संगीतात्मकता है। उस समय के बहुत से लोगों की अपनी अनुभूतियों की अभिव्यक्ति उसकी कविता में मिली।

गार्शिन (१८५५—१८८८)

इसकी मनोदृष्टि नादसन के समान ही है। इसने भी थोड़ा ही लिखा है। इसकी रचनाओं में 'चार दिन' (१८७७-१८८०) और 'लाल फूल' (१८८३) उल्लेखनीय हैं—इसका मुख्य विषय विचारशील लेखकों का—जिनका अपने आदर्शों में विश्वास उठ गया है—मनोवैज्ञानिक अध्ययन है। 'चार दिन' कहानी में युद्ध-क्षेत्र में पड़े हुए ज़ख्मी सैनिक की कथाओं का चित्रण कर युद्ध का विरोध किया गया है।

'अटालिया प्रिंसेप' शीशे के घर में उगनेवाले ताड़ वृक्ष का शास्त्रीय नाम है। अपने को मुक्त करने की चेष्टा में वह शीशे की छत को फोड़कर ऊपर निकल जाता है। बाहर के शीत की कटु वास्तविकता का सम्पर्क इस कोमल ताड़ को नष्ट कर देता है। गिरते हुए यह अपने तल में उगते हुए दूसरे पौधों का भी उन्मूलन कर देता है। कहानी वास्तविकता में प्रसूत निराशा का प्रतीक है और ताड़ समकालीन विचारकों का प्रतिनिधि है।

यद्यपि सन् 'अस्सी' का ज़माना प्रतिक्रिया का युग था फिर भी लेनिन के कथनानुसार इसी समय जनसत्तावादियों के स्वप्न नष्ट हुए। आर्थिक खोजों तथा सामाजिक विचारों में प्रौढ़ता आई, और मार्क्सवादी विचार ने तीव्रता से बढ़कर संसार की सामाजिक जनतंत्रात्मक दृष्टि से देखने के आधार को तैयार किया। १८८३ में 'मज़दूर उद्धार' का संगठन हुआ जिससे कि रूसी जनतंत्रात्मकता की नींव पड़ी। इसके बाद 'रूसी सामाजिक जनतंत्रात्मक संघटन' का आविर्भाव हुआ। प्लेखानोव की पुस्तक 'हमारे मतभेद' (१८८४) में जन-सत्तावादियों की आलोचना और सामाजिक जनतंत्र का प्रोग्राम था। ये घटनाएँ और फैक्टरियों में बढ़ता हुआ असंतोष समाज की विषमताओं का साक्षी है जो कि आनेवाले दशक में और भी बढ़ गया। लेनिन के मतानुसार रूसी स्वतंत्रता-आन्दोलन का तीसरा सामान्यवादी (Proletarian) युग शुरू हुआ।

जब कि सन् 'अस्सी' के लेखक निराशा में डूबे थे, ताल्स्तायवाद और

'छोटे कार्यों' की ओर झुक रहे थे, और नए आदर्शों की असफल खोज में थे। इतिहास की अपनी गति रूस की शक्ल बदल रही थी। फैक्टरियों की संख्या बढ़ी और सारे देश में रेल का जाल फैल गया जिससे कि विदेश से व्यापारिक सम्बन्ध दृढ़ हुए। शहरों के बढ़ने से मज़दूरों की संख्या और भी बढ़ी। रूसी जीवन का केन्द्र गाँव से हटकर नगर में हो गया और एक नया वर्ग—मज़दूर—क्षेत्र में आया। मज़दूरों की समस्या अपने समय का मुख्य प्रश्न बन गया।

सन् 'नब्बे' के युग में औद्योगिक केन्द्रों में हड़ताल की लहर चली जिसमें पीटर्सबर्ग के कपड़ों के तीस हजार मज़दूरों की सन् १८९६ की हड़ताल मुख्य है। इसका प्रभाव विदेश पर भी पड़ा। १८९१-९२ के अकाल और १८९२ में हैजा के प्रकोप के कारण कुछ जिलों में बलवे हुए। विचारकों और लेखकों का बड़ा भाग इन वर्षों की दुर्दशा को देखकर काँप उठा और न चाहते हुए भी उनको इन घटनाओं में पड़ना पड़ा। हज़ारों और लाखों की संख्या में ये अकालपीड़ित क्षेत्रों में सहायता के लिये गए।

इन घटनाओं से सामाजिक जागर्त्ति बढ़ी। इसके साथ ही मार्क्सवादी वर्ग भी बढ़ा और मार्क्सवाद में लोगों की रुचि बढ़ी। इसे प्लेखानोव की पुस्तक 'इतिहास के मठीय (Monistic) दृष्टिकोण की समस्या' और लेनिन की दो पुस्तकों 'कौन जनता के मित्र हैं' और 'रूस में पूँजीवाद का विकास' से विशेष सहायता मिली। मार्क्सवादी और जनसम्पर्कवादी विचारों के संघर्ष ने विचारकों को मार्क्स और एंजेल्स के अध्ययन की अभिरुचि दी, और इस प्रकार सामाजिक मनोदृष्टि में शीघ्रता से विप्लव उपस्थित किया। इन सबने मिलकर विचारकों के मानसिक अनिश्चय की अवस्था को समाप्त कर दिया।

इस युग का बौद्धिक जीवन केवल मार्क्सवादी और जनसम्पर्कवादियों के झगड़ों तक सीमित नहीं है। इस समय की राजनीतिक विचारधारा की तीन प्रवृत्तियाँ हैं—(१) मध्यम वर्ग का नरम दल, (२) बुर्जुआ प्रजातंत्रात्मक विचार, (३) मज़दूर वर्ग की क्रांतिकारी प्रवृत्ति। इन प्रवृत्तियों और इन वर्गों की साहित्यिक प्रगति के बीच पूरी झलक मिलती है।

'नया शब्द', 'जीवन' आदि मार्क्सवादी कानूनी पत्र हैं जिनमें स्त्रुवे, बर्दायेव आदि कानून-विज्ञ मार्क्सवादियों के विचार प्रकट हुए। 'रूसी सम्पत्ति' ने—जिसके सम्पादक मिहाइलोव्स्की और कोरोल्येंको थे—जनसम्पर्कवादियों का पक्ष लिया और मार्क्सवाद का विरोध किया। 'सप्ताह' सम्पर्कवादियों के 'छोटे काम' और 'रूसी विचार' के सिद्धान्तों का पक्ष लेनेवाला लिबरल सम्पर्कवादी पत्र था। 'यूरोपियन हेराल्ड' (१८८६ में स्थापित) लिबरल अधिकारी-वर्ग के विचारों का प्रतिनिधित्व करता था। 'उत्तरी दूत' (Northern Herald)

की स्थापना 'प्रतिक्रियावादी' वर्ग द्वारा सन 'नब्बे' के ज़माने में हुई। सोलोग्लब, बलमान्त, ज़िप्पियस आदि विख्यात लेखक इसी वर्ग में थे। इन लोगों ने क्रान्तिवादी संघर्ष में कोई भाग न लिया और व्यक्ति की अपनी भावना को अपना आदर्श बनाया। इन लोगों ने 'शुद्ध कला' के सिद्धांतों का प्रचार किया, यद्यपि इन सिद्धांतों को सन् १९०० तक प्रौढ़ता न प्राप्त हुई। पत्रों में चलनेवाले वादविवाद से लेखकों के क्रांतिवादियों से लेकर व्यक्तिवादी मध्यम वर्ग तक के विभिन्न वर्गों का और फलतः सामाजिक मनोदृष्टि में होनेवाले विप्लव और परिवर्त्तन का पता चलता है।

यद्यपि ताल्स्ताय और चेखव का काम सन् 'नब्बे' के बीच चलता रहा फिर भी इस समय के दो एक लेखक उल्लेखनीय हैं।

ए० एस० सिराफिमोविच (जन्म १८६३) ने सन् 'अस्सी' में लिखना शुरू किया। उसकी निरीक्षण और आलोचनात्मक शक्ति इस समय तक काफी विकसित हो चुकी थी। (नब्बे के ज़माने में) उसकी रचनाओं में पूंजीवाद के शोषण का भोग्य होनेवाले मज़दूरों—खान में काम करनेवाले, रेल के मज़दूर, किसान, मछुआ आदि—का चित्रण है। उसके नायक अभी उद्धार और मुक्ति का मार्ग नहीं ढूँढ़ पाते। लेखक का उद्देश्य अभी तक केवल इन 'छोटे आदमियों' की कठिनाइयों का चित्रण है। इस चित्रण ने उसे प्रगतिशील यथार्थवादियों की कोटि में रख दिया।

कुप्रिन का भी विकास बाद में हुआ किन्तु उसकी इस समय प्रकाशित होनेवाली रचनाओं में उसकी कहानी 'मलोच' है। यह फैक्टरी में काम करनेवाले मज़दूरों का चित्रण करनेवाली प्रथम कहानियों में से एक है।

किन्तु 'नब्बे' का सबसे महत्वपूर्ण साहित्यिक घटना मैक्सिम गोर्की के रचनात्मक कार्य का आरम्भ है। आरम्भिक कहानियाँ क्रांतिवादी रोमांटिसिज्म की शैली में थीं। विषय, शैली, मानसिक दृष्टिकोण, वातावरण सभी दृष्टियों से ये कहानियाँ 'नब्बे' के साहित्य में इतनी असामान्य थीं कि लोगों का ध्यान इस युवक लेखक की ओर अपने आप खिंच गया। इन रचनाओं में भी आनेवाले तूफान और विप्लव का आभास मिल रहा है। उन्नीसवीं शती के अंत में वह क्रांतिकारी लेखकों और मज़दूरों का सबसे बड़ा व्याख्याता हुआ।

मिहाइल येवग्राफोविच साल्तिकोफ चेद्रिन (१८२६–१८८६)

यह उन्नीसवीं शती के उत्तरार्ध के महान् लेखकों में से एक है। इसका उल्लेख कई प्रसंगों में किया जा चुका है। उसका बचपन बड़ा ही दुखमय बीता। माता-पिता आपस में लड़ते थे और उसकी शिक्षा घर की धात्री पर छोड़ दी गई

थी। बचपन में उसने चारों ओर घर-बाहर और अपने परिवार में भी दास-प्रथा की दारुणता और जमींदारों की निरंकुशता देखी। बाद में उसने लिखा कि 'भय, शारीरिक कष्ट, और निरंकुशता की कोई भी बात मेरी नज़र से नहीं बची जिसने बाद में मुझे पीड़ा न पहुँचाई हो'।

स्कूल में उसने अपनी प्रतिभा का परिचय दिया। वह 'कोर्ट अकेडमी' में भेजा गया जहाँ कि कभी पुश्किन ने अध्ययन किया था। किन्तु वह अब स्वतंत्र विचार का केन्द्र न होकर मन्त्री उपजाने या बनाने का उद्यान रह गया था। मौलिकता और विकास को रोकनेवाले वातावरण के बीच भी उसका और साथियों का बौद्धिक और आन्तरिक जीवन बड़ा सक्रिय रहा, और शिक्षकों में पेत्राश्येव्स्की तथा उसकी गोष्ठी के सदस्यों की तरह के कुछ शिक्षक भी थे।

१८४४ में स्कूल छोड़ने पर वह पेत्राश्येव्स्की गोष्ठी के सम्पर्क में आया। उसकी एक दो कहानियाँ छपीं। यद्यपि 'विषमता' इनमें से एक है, इनमें मौलिकता और प्रौढ़ता न थी, फिर भी इनकी कथावस्तु, सामाजिक असमानता थी। इसका और अधिक विकास 'जटिल घटना' में हुआ जो कि दलित और सताए हुओं के प्रति सहानुभूति से पूर्ण है। यह १८४८ में 'जन्मभूमि-समाचार' में (योरुप की फरवरी क्रांति के बाद) छपी और सेंसर का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया। सेंसर ने इसे ज़ब्त या बंद कर दिया। वह गिरफ्तार कर लिया गया और निर्वासित करके व्यात्का भेजा गया। इस निर्वासन के कारण वह पेत्राश्येव्स्की गोष्ठी पर किए गए १८४९ के दमन से बच गया। इसके बहुत से सदस्यों को प्राणदंड की सजा दी गई थी।

उसने व्यात्का में अधिकारियों के षड्यन्त्र और अफसरों के वातावरण के बीच निष्क्रियता के आठ वर्ष बिताए। किन्तु उससे उसे अधिकारियों की आदत और जीवन के तथा सामान्य वर्ग की भाषा के अध्ययन का सुअवसर प्राप्त हुआ। इसने उसकी भविष्य की रचनाओं की दिशा निर्धारित कर दी। अब उसे जन-सेवा और जनहित के संघर्ष में जीवन का ध्येय और वास्तविक अर्थ दिखाई पड़ा।

१८५६ में वह पीटर्सबर्ग वापस लौटा और शीघ्र ही 'रूसी हेराल्ड' में 'प्रांतीय रेखाचित्र' छपाने लगा। इन चित्रों में उसने अधिकारी वर्ग की चालाकी और अत्याचार, उनके बर्बरतापूर्ण और खोखले जीवन और सताई हुई जनता की दशा का निरपेक्ष और सत्यतापूर्ण उद्घाटन किया। यद्यपि सेंसर ने इनका एक तिहाई बंद कर दिया, फिर भी इन रेखाचित्रों का प्रभाव अत्यन्त गंभीर था। गोगल के समय से किसी ने इतनी कठोरता और सत्यता से रूसी अधिकारियों के बारे में नहीं कहा था।

सुधारों को कार्यान्वित करने में व्यक्तिगत सहयोग देने के लिये उसने रियाज़न

के उप-गवर्नर का पद स्वीकार कर लिया। किन्तु वह यहाँ के अधिकारी वातावरण से ऐसा ऊबा कि उसने अपने मित्र को लिखा कि 'यहाँ का जीवन ऐसा घृणित है कि इसकी कल्पना नहीं की जा सकती। १८६२ में उसने इस पद से इस्तीफा दे दिया और एक पत्र चलाने की योजना की। किन्तु सेंसर ने इसकी आज्ञा न दी। उसी वर्ष चर्निश्नेव्स्की गिरफ्तार हो गया और 'समकालीन' आठ महीने के लिये बंद कर दिया गया। इस पत्र के फिर निकलने पर चेद्रिन इसमें कहानी, स्केच, समीक्षा आदि लिखने लगा और अपनी व्यंगात्मक प्रतिभा का लिबरल और अनुदार प्रेस के विरुद्ध प्रयोग किया।

तीन साल तक दूसरे पत्रों में लिखने के बाद उसने नेक्रासोफ के साथ 'जन्मभूमि' समाचार का संचालन अपने हाथ में लिया (१८६८ से ८४)। इस युग में उनकी महत्वपूर्ण कृतियाँ 'नगर का इतिहास', 'भलाई के शब्द', 'मेसर्स गोलोवल्योफ', 'ताशकंद का शरीफ' आदि छपीं। सोलह वर्ष तक उसने इस पत्र की जो सेवा की, इसके द्वारा नवयुवक लेखकों को जो प्रोत्साहन दिया और इसके सहारे अनुदार प्रेस और सेंसर के विरुद्ध जो निरन्तर युद्ध किया उससे उसकी बड़ी प्रशंसा हुई। इस पत्र के सेंसर द्वारा बन्द किये जाने से उसे बड़ा धक्का पहुँचा। उसने लिखा कि 'उन लोगों ने मेरा सब कुछ छीन लिया। क्या कोई चीज इससे बढ़कर क्रूर, लज्जाजनक और अपमानजनक हो सकती है। चेद्रिन की आवाज बन्द करने के भी प्रयत्न हुए। दूसरे पत्रों को भी उसकी रचना न छापने का आदेश दिया गया। यद्यपि कोई भी उसकी रचनाओं को नहीं स्वीकार करता था फिर भी वह लिखता रहा।

'नगर का इतिहास' में चेद्रिन ने तत्कालीन राज्यव्यवस्था के प्रति अपना क्रोध प्रकट करने के लिये इतिहास का सहारा लिया। उसने देखा कि न तो शासन बदला और न समाज, और लिबरल द्वारा तथाकथित 'सुधार का युग' भी 'कभी न मिटनेवाले भय का अखण्ड इतिहास है। गवर्नर अब भी जनता को कोड़े से पीटते हैं और निवासी काँपते हैं।' इसमें सरकार के ऊपर तीव्र व्यंग है। पुस्तक सच्ची घटनाओं से भरी है। इसका कथन और वर्णन कलात्मकता की उच्चकोटि पर पहुँच गया है।

इसके पात्रों के कार्यकलाप हमें अजीब लगेंगे, फिर भी इतिहास उस समय के व्यक्तियों के और भी अजीब-गरीब कारनामों का उल्लेख करता है। जब कभी वह किसी को नीचा दिखाना चाहता था तो एक प्रान्तीय गवर्नर अपनी गाड़ी छोटे अधिकारियों द्वारा नगर के बीच खिंचवाता था। ऐसा समकालीन पत्र में छपा था। वर्त्तमान और अतीत के व्यक्तियों के ऐसे कार्यों के उल्लेख से पुस्तक भरी है। चेद्रिन के समकालीनों के लिये मंत्री के चित्रण में—जो

कि रहस्यवादी बनता है और फिर उदासी के मारे मर जाता है—अलेक्जेंडर प्रथम का खाका पहचानना अत्यन्त सरल था।

उसका जन-प्रेम उसे जनता की नम्रता, निष्क्रियता और परोपजीवी अधिकारी पशुओं के बोझ को चुपचाप ढोने की सहनशीलता की कड़ी निन्दा और भर्त्सना करने से कभी न रोक सका। तुर्गेन्येव ने कहा कि इन स्केचों या रेखा-चित्र को पढ़कर यद्यपि 'जनता हँसती थी फिर भी उसे उस कोड़े का अनुभव भी होता था जिसका कि उसके (बुराइयों) ऊपर आघात होता था।'

यह पुस्तक कलाकार और 'पार्टी सदस्य'—चेद्रिन अपने को यही कहता था—का परिणाम है जिसमें सरकारी इतिहासकारों का मज़ाक और उसकी लोकप्रिय भाषा की समृद्धि स्पष्ट है। यद्यपि वह स्विफ्ट और वाल्टेयर जैसे प्रसिद्ध व्यंगकारों की रचनाओं से परिचित था फिर भी उसकी जड़ें अपने देश में थीं। वह पुश्किन और गोगल का उत्तराधिकारी था किन्तु क्रांतिवादी जनतंत्रवादी के रूप में उसकी दास-प्रथा पर टिकी शासन की निन्दा कहीं बढ़ी-चढ़ी थी। गोर्की का कहना है कि उसके बिना 'उन्नीसवीं शती के उत्तरार्ध को समझना सम्भव नहीं, और उसका व्यंग गोगल की अपेक्षा अधिक सच, गम्भीर और शक्तिशाली था।'

'नगर का इतिहास' के बाद की कहानियों में वह अभिजातवर्ग (Nobles), गाँव के जमींदार, शहर के मध्यम वर्ग, अफसरों और सभी खून चूसनेवालों पर व्यंग करता रहा। उसने शहर, गाँव और सामान्य जनता की गरीबी देखी जिनके लिए 'आधे कोपेक' (अर्थात् पैसा) की समस्या मन को उद्विग्न बनानेवाली है। पूँजीवाद की बढ़ती को स्पष्ट रूप से देखकर उसने चालाक सौदागरों का अत्यन्त यथार्थवादी चित्र प्रस्तुत किया जिनमें न आत्मा है और आत्म-सम्मान है। 'ओब्लोमोव' के उदार गम्भीर मध्यमवर्ग के स्थान पर चेद्रिन 'देरा-मोव' और 'राबुवायेव' जैसे लालची सौदागरों का सच्चा चित्र प्रस्तुत करता है।

'मेसर्स गोलोव्योव' का उद्देश्य उच्चवर्ग के समाज के आधार परिवार, जायदाद और स्टेट का दिग्दर्शन है। गाँव की ज़मींदारी सन् साठ और सत्तर में बहुत से लेखकों के आकर्षण का केन्द्र रही। उच्चवर्ग से आनेवाले लेखकों ने जान या अनजान में गाँववालों के जीवन पर आदर्शात्मक रंग चढ़ाया। तुर्गेन्येव ने भी गाँव की नई परिस्थिति के अनुकूल बनने की असमर्थता का चित्रण और उनकी टूटी हुई संस्कृति का दिग्दर्शन सचमुच शोक के साथ किया है। चेद्रिन ने इसी वातावरण का चित्रण बिलकुल दूसरे ढंग से किया है। चेद्रिन की रचनाओं में उच्चवर्ग के लोग दम्भी, आलसी और खोखले दिखाए गए हैं। उसकी दृष्टि में सम्पत्तिवाले लोग सामाजिक कुष्ठ के कारण हैं और वह उनकी संस्कृति का नंगापन दिखा रहा है। 'मेसर्स गोलोव्योव' उपन्यास में वह ऐसे ही

परिवार का सुधार के पहले और बाद के जीवन का किसान की दृष्टि से अंकन करता है। यह दास-प्रथा पर टिकी प्राचीन व्यवस्था का नैतिक अधःपतन, और उसके द्वारा पूर्ण विकसित और समाज के लिये लाभदायक व्यक्ति के जन्म की असम्भावना दिखाता है और बताता है कि इस व्यवस्था का नाश किसी प्रकार रुक नहीं सकता।

गोलोव्योव परिवार के अन्य दुर्बल व्यक्तियों के विपरीत अरीना पेत्रोव्ना परिवार की अराजकता के बीच शक्तिशाली और अधिकारपूर्ण दिखाई पड़ती है। वह घर में और दासों पर अत्यन्त निरंकुश है और उसका सारा जीवन भी खोखला है। दोनों एक दूसरे को गालियाँ दिया करते हैं। बच्चे उसके लिये बोझ हैं और उनके प्रति उसके हृदय में कोई प्रेम नहीं है। बड़े लड़के स्तेपान से उसे घृणा थी। छोटे के प्रति उदासीनता और मझले पोरफिरका से वह डरती है। चार हज़ार दासों की स्वामिनी होते हुए भी वह कंजूस है। भंडार में वस्तुएँ पड़ी सड़ा करती हैं। बूढ़ी चाची को खाने के समय रोज़ जली कटी सुनना पड़ता है। वह अपने लड़के को भी इतना ही देती है कि वह भूख से मर न जाय। स्तेपान के लिये घर कब्र है। माँ के लिये वह कहता है कि वह मुझे खा जायगी।

उसकी ज़बान बड़ी कर्कश और शिष्टता से हीन है। दास-प्रथा की समाप्ति की खबर सुनकर वह कहती है कि 'मैं इन गन्दे कुत्तों के बिना क्या करूँगी।' इस अशिष्टता के साथ उसमें ढोंग और ढकोसला भी है। अपनी लड़की के अनाथ बच्चों को वह लोकलाज के डर से अपने पास रखती है। वह कहती है कि 'ईश्वर कृपालु है। ये बच्चे थोड़ा सा खायँगे। बुढ़ापे में ये मेरे सहारे हैं।' किन्तु अपने लड़के को वह लिखती है कि 'तुम्हारी बहन उसी प्रकार उच्छृंखलता से मरी जैसी कि वह जीवित रहती थी, दो पिल्ले मेरे गले बाँध गई।'

दास-प्रथा के अन्त ने उसके 'पारिवारिक किले' को ढहा दिया। अब उसे जीवन के अन्तिम दिन अपने छोटे लड़के के यहाँ बिताने पड़ते हैं। दूसरे के घर में ज़बरदस्ती पड़े रहने के कारण किसी समय की सम्पत्तिशालिनी निरंकुश अरीना को अब जीवन का भार ढोना पड़ रहा है और उसकी तेज ज़बान, प्रार्थना और खुशामद में लगी रहती है।

उसका लड़का स्तेपान परिवार का विदूषक है। बड़ा होने पर भी वह साहसहीन और परावलम्बी है। यूनिवर्सिटी की शिक्षा प्राप्त करने पर भी वह जीवन में कुछ नहीं कर पाता। वह घर छोड़ देता है और सारा रुपया जुआ में खोकर माँ के दासों से पैसा माँगता है। उसमें न इच्छा है और न विचार।

वह जीवित शव है। उसकी शिक्षा का न तो उसके विचारों पर [illegible] है और न उसकी वाणी पर। उसके दैनिक जीवन का [illegible] है। उसका शकुन आदि में विश्वास है। उसकी शैली [illegible] और [illegible] (Vulger) है।

उसका भाई पावेल भी कुछ कर नहीं सकता। [illegible] न विरोध कर सकता है और न विद्रोह। '[illegible] वह [illegible] था लेकिन उसने किसी का भला न किया। शायद वह [illegible] था लेकिन उसने सारे जीवन [illegible] का कोई काम न किया।' [illegible] मन [illegible] में लीन हो जाता है। एक [illegible] कि पोर्फिरी [illegible] और वह [illegible] युदुश्का (अर्थात् पोर्फिरी) के प्रति घृणा, [illegible] की [illegible], उसके [illegible] के जीवन का अन्त शीघ्र ही उपस्थित कर देते हैं।

युदुश्का के समान प्रभावशाली पात्र साहित्य में कम मिलेंगे। धोखा और चालाकी उसकी नस नस में है। यह केवल पारिवारिक वातावरण से ही नहीं किन्तु सिविल सर्विस की तीस साल की नौकरी के कारण भी है। वह अपनी क्रूर योजनाओं को खूब सोच-विचार कर तैयार करता है फिर बिना तरस खाये उनको पूरा करता है। अच्छे इरादों की आड़ में वह अपनी माँ को अपने जाल में फँसाता है और स्तेपान की मृत्यु का कारण बनता है। उसका सारा रुपया लेकर वह माँ को अपने घर से निकाल देता है। वह अपनी अनाथ भतीजियों को भी ठगकर माँ के साथ बाहर कर देता है और मरणासन्न भाई पावेल को तब तक परेशान करता है जब तक कि वह अच्छी तरह नहीं जान लेता कि वह अपना रुपया किसी दूसरे के नाम नहीं लिख सका।

कुचक्री और झूठ बोलनेवाला युदुश्का सारा जीवन रुपया जोड़ने में लगा देता है। उसमें न दया है और न कोमलता, और न उसके लिये परिवार के बंधन हैं। वह अपने एक लड़के की आत्म-हत्या का कारण बनता है, दूसरे को जेल भिजवाता है और तीसरे जारज (Illegitinate) पुत्र को वह बदनामी के डर से शिशुगृह में भेजता है।

वह बाहरी संसार से अपना नाता तोड़ डालता है और शून्य भावों के नशे में डूबा रहता है और अपने चारों ओर के आदमियों को सताता रहता है और परेशान किया करता है। यह अत्याचार, वंचना और धर्म और भक्ति के पर्दे में छिपी है। वह जानता है कि नए कानून उसके अनुकूल हैं। दूसरों पर जुर्माना करते हुए यह कहता है कि 'मैं डाका नहीं डालता, मैं कानून के अनुकूल चलता हूँ। मैंने अपनी चरी में घोड़े को चरते पकड़ा। वकील भी यही कहेगा कि दूसरे के

चरागाह में घोड़े का चरना मना है। इससे जुर्माना दे दो। मैं कानून के अनुकूल चलता हूँ।

यह चरित्र लालच, कुटिल, लम्बी चौड़ी बातें, ढोंग और ढकोसले का सजीव चित्र है। किसानों का कहना है कि 'यह बातों के द्वारा तुमको लूट सकता है।' माँ को बाहर निकालते हुए यह कहता है कि परिवार के बन्धन को न भूल जाना। व्यंगकार कहता है कि 'ये कोरे शब्द न थे किन्तु जख्म था जिससे कि मवाद बराबर बहता था।'

इतना चतुर होते हुए भी यह अपने भाग्य से और इस प्रश्न से कि उसने जीवन भर ऐसी लूट क्यों की, यह नहीं बच पाता। अन्धकारमयी निराशा की वास्तविकता उसे जकड़ लेती है और धीरे-धीरे चीजें उसके वश से बाहर होने लगती हैं।

इस चरित्र के द्वारा चेद्रिन मानवी अधःपतन की चरम सीमा और पराकाष्ठा का दिग्दर्शन कराता है और धोखा, झूठ, शोषण, ढोंग, लालच आदि उन बुराइयों को प्रकट करता है जिनसे कि उसे घृणा है और जिनके विरुद्ध वह जीवन भर युद्ध करता रहा। साहित्य-संसार में युदुश्का का चरित्र झूठ, ढोंग, द्रोह, शोषण आदि का प्रतीक बन गया। जनता से द्रोह करनेवालों और उसका खून चूसनेवालों को लेनिन ने युदुश्का कहा।

'मेसर्स गोलोव्योव' पारिवारिक इतिहास (या वृत्तांत) का उपन्यास है। यह प्रकार नया नहीं है। फिर भी चेद्रिन की नवीनता और मौलिकता कथावस्तु के प्रति नवीन दृष्टिकोण में है और उस पारिवारिक सिद्धांत के नग्न और व्यंग चित्र में है जो कि उस समय के समाज का अत्यन्त पवित्र अंग और आधार माना जाता था।

'गोलोव्योव परिवार' का यह अधःपतन कोई व्यक्तिगत अकेली घटना नहीं है। लेखक ने इसे व्यापकता के बीच घटित होते हुए समय के व्यापार (Process) का प्रतीक माना। इसके पात्रों के व्यक्तित्व का अत्यन्त विकसित रूप देखते हुए भी ये उस समय के जीवित लोगों के प्रतीक मात्र हैं।

यह मनोवैज्ञानिक उपन्यास भी है। इसकी रोचकता घटनाओं के आश्रित न रहकर पात्रों के चरित्र और उनकी आंतरिक जीवन में है। युदुश्का मुख्य पात्र है और इसके प्रत्येक शब्द और कार्य उसके जीवन के भिन्न अंग जान पड़ते हैं। युदुश्का का इसके सिवा और दूसरा रूप हो ही नहीं सकता।

परिवार टूटने और अधःपतन की कथावस्तु के अनुकूल ही प्रकृतिचित्रण पर भी अन्धकार, गम्भीरता और निराशा का रंग चढ़ाया गया है। यह अंकन गोलोव्योव जमींदारी के चित्र का पूरक है और चेद्रिन के पात्रों के चारों ओर छाई उदासी, व्यर्थता और भाग्य क भावना को और भी उत्कट बनाता है।

उदाहरण के लिये हेमन्त का वर्णन व्यर्थता और निराशा की भावना को तीव्र करने के लिये हुआ है। 'पानी बरस रहा था। सड़कें अन्धकारमय हो गईं और उन पर चलना असम्भव हो गया, जाने का रास्ता न पाकर वह खिड़की पर बैठा हुआ किसानों की झोपड़ियों को कीचड़ में डूबता हुआ देख रहा था। दूर हेमंत के कुहरे के बीच लोग आ जा रहे थे। प्रत्येक वस्तु गम्भीर और जैसे रोने-वाली हो और निराशा को व्यक्त कर रही थी। चिरंतन रोता हुआ आकाश मानों दम घोंट रहा हो। बादल, बादल—दिन भर बादल। इन्हीं बादलों के साथ उसके मन में उठता है—कब्र, कब्र, कब्र।

कथावस्तु के विकास के साथ प्रकृति के दृश्य भी गंभीर और दारुण होते जाते हैं। चेद्रिन प्रकृति का चित्रण आनन्द या प्रकृति की प्रशंसा के लिये नहीं करता वरन् अपने पात्रों के कलात्मक प्रभाव को बढ़ाने के लिये करता है। प्रकृति के दृश्य पात्रों की विशेषता बढ़ाते हैं।

इसी प्रकार पात्रों के स्वभाव और आदत का सजीव चित्र देने के लिये चेद्रिन पात्रों के कमरे और उसके अन्दर की चीजों का वर्णन करता है। युदुश्का का कमरा मूर्त्तियों से भरा है। स्तेपान के उत्तरोत्तर नीचे गिरने पर उसके कमरे का वर्णन इस प्रकार है। कमरा अन्धकारपूर्ण और गन्दा है। छत का पलस्तर गिर रहा है और दीवालों के कागज नुचे हुए लटके हैं। तम्बाकू की राख से खिड़की की सिल काली पड़ गई है। तकिया फर्श पर पड़ी है और बिस्तर की चादर मैल से भूरी हो गई है। इस प्रकार के पशुओं के से जीवन की भावना, विचार और धनलोलुपता में संस्कृति का कोई स्थान नहीं है। उपन्यासों में (इसी से) चित्र या पुस्तकों आदि का नाम भी नहीं है जिनका कि तुर्गेन्येव या ताल्स्ताय के नायकों के जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। वह पात्रों के शारीरिक रूप आदि का वर्णन न कर उनकी मनोवैज्ञानिक विशेपताओं पर अधिक ध्यान देता है। स्पष्टता (Exactness) और संक्षिप्तता उसकी शैली की विशेपता है। तीन पीढ़ियों की कहानी का यह उपन्यास एक प्रकार से छोटा है। लेखक की दूसरी विशेपता यह है कि वह अपने निजी विचार छोटे पात्रों और कभी-कभी बुरे पात्रों के द्वारा भी व्यक्त करता है। उपन्यास में कचहरी, उसके उद्देश्य, उसकी भ्रष्टता और कानून का अधिकार-वालों की रक्षा के लिये उपयोग पर व्यंग है।

इन प्रमुख रचनाओं के अतिरिक्त चेद्रिन ने तीस छोटी कहानियाँ लिखीं। इनमें से अधिकांश कहानियाँ सन् 'अस्सी' में लिखी गई।

सन् 'अस्सी' में सेंसर ने कठोर हो गया। जब सेंसर ने 'मातृभूमि-समाचार' (अप्रैल १८८४ में) बन्द कर दिया तो चेद्रिन का जीवनयापन अत्यन्त कठिन हो गया। उसकी किसी चीज का छपना असम्भव हो गया। पत्र से वंचित होने

पर उसने जनता तक पहुँचने का अन्य उपाय निकाला। वह अन्योक्ति और संकेतों में सजीव और लोकप्रचलित उपमानों में कथा-कहानियाँ लिखने लगा। जिसमें वह पुलिस, अन्यायी पत्रकार, लिबरल, जनता के बीच रहनेवाले कायर, चर्च के ढोंगियों पर व्यंग लिखता रहा।

जब उसने इन कहानियों का तीन कोपेक मूल्य रखकर सेंसर से छपाने की आज्ञा माँगी तो सेंसर ने सामान्य जनता के लिये इतने कम मूल्य रखने के निर्णय को अजीब से कुछ अधिक माना। सेंसर ने कहा कि 'ये कहानियाँ नहीं किन्तु हमारे समाज और राजनीतिक व्यवस्था के विरुद्ध कटु व्यंग हैं।' इनके छपने की आज्ञा न दी गई।

इन कहानियों में वही समस्याएँ और वही सुझाव क्रान्तिकारी जनतंत्रात्मक रूप में रखे गए जो कि उसकी बड़ी रचनाओं में हैं। बहुत-सी कहानियाँ जार की निरंकुशता और सताई जनता की दशा का चित्रण करती हैं। 'सेनापति भालू' में शासकों का चित्र है जो कि खून बहाने के सिवा कोई दूसरा उपाय नहीं जानते। 'जंगली जमींदार' में किसानों के आधार पर जीवित रहने की सम्भावना के नष्ट हो जाने पर एक जमींदार एकान्त में रहने लगता है और जंगली हो जाता है। वह जानवरों की तरह चलने लगता है। और अपनी भाषा भी भूल जाता है। 'लिबरल' कहानी में लेखक मध्यम वर्ग की कायरता का वर्णन करता है। मध्यम वर्ग के ये लोग बात तो स्वतंत्रता की करते हैं किन्तु यथार्थ में शासकों की गुलामी करते हैं।

ईसप द्वारा विकसित इस ढंग को उसने सेंसर के कठोर जमाने में जनता तक पहुँचने के लिये आगे बढ़ाया। उसका यह 'नया उपाय' सामान्य जनता में अपना संदेश फैलाने में खूब सफल हुआ।

इस प्रकार वह अपना क्रांतिकारी कार्य प्रतिक्रिया के सबसे अंधकारमय युग के बीच भी अपनी कहानियों के द्वारा करता रहा। चेद्रिन का व्यंग जातीय है। ग्रिबयेदोफ और गोगल के समान उसने शासक-वर्ग की संकीर्णता और नीचता की पोल खोली है। तुर्गेन्येव ने कहा कि 'अन्य समकालीनों की अपेक्षा चेद्रिन अपने देश को कहीं अच्छी तरह जानता है।' इसी कारण उसकी सर्जनात्मक कृतियों का दुनिया और मानवता के लिये महत्व है और यह संयोग मात्र नहीं है कि कार्लमार्क्स, स्तालिन और लेनिन उसे बड़े सम्मान की दृष्टि से देखते थे।

चेद्रिन ने प्राचीन निरंकुश रूस के चित्रण में शोषक वर्ग के आवरण को फाड़ डाला और वर्गपूर्ण समाज की पाशविकता की पोल खोली जो कि वैध लूट और मनुष्य द्वारा मनुष्य पर लादी गई गुलामी के आधार पर टिका है। जैसे

स्विफ्ट ने पूँजीवाद के जन्म पर व्यंग किया उसी प्रकार शेद्रिन ने उसके [illegible] रूप को दिखाया।

विश्व साहित्य के बड़े व्यंगकारों में उसका स्थान है। तुर्गनेव ने लिखा कि 'साल्तिकोव में स्विफ्ट का अंश है। उसमें वही गम्भीरता, और निकट हास्य का अंश, वही वास्तविकता है और कल्पना की अतिशय उड़ान के बीच भी स्पष्टता है। उसके पात्र अत्यन्त सजीव हैं और उसके व्यंगों की व्यापकता और गंभीरता उसके अपने युग तक सीमित नहीं है।'

ल्येव निकोलायेविच ताल्स्ताय (१८२८–१९१०)

मास्को से २०० किलोमीटर दक्खिन में एक छोटी-सी जमींदारी थी जिसकी ख्याति संसार के चारो कोने में फैल गई। यहाँ पर संसार के बड़े प्रतिभाशाली पुरुष ताल्स्ताय का जन्म हुआ। इस जमींदारी का नाम 'यास्नया पोल्याना' था। ताल्स्ताय का पिता एक प्राचीन वंश का था और उसने नेपोलियन के युद्ध में कर्नल के रूप में भाग लिया था। उसने अमीर राजकुमारी मेरिया निकोलायेव्ना वलकोस्की से शादी की थी। 'यास्नया पोल्याना' उसी की शादी में मिला दाय भाग या स्त्री-धन था।

ताल्स्ताय परिवार का जीवन शांतिमय और परम्परानुगत था। ताल्स्ताय की तीन वर्ष की अवस्था में जब इसकी माँ मर गई तो उसका और उसके तीन भाइयों का पालन पोषण एक अच्छे स्वभाव की पढ़ी-लिखी स्त्री ने किया जो इनकी संबंधी थी। उसकी शिक्षा में चारो ओर के सुंदर वातावरण और दासों से भरी जमींदारी का भी सहयोग था जिससे वह प्रकृति और किसान दोनों के सम्पर्क में आया।

१८३७ में परिवार मास्को गया और वहाँ उसके पिता की सहसा मृत्यु हो गई। तेरह वर्ष की अवस्था में ताल्स्ताय कज़ान गया और पूर्वीय भाषाएँ पढ़ने के लिये वहाँ यूनिवर्सिटी में भर्ती हो गया। किन्तु इसमें उसका मन न लगा और कानून के विभाग में चला गया। वह मन की उस मंजिल से भी गुजरा जिसमें उसका आदर्श अभिजात (Aristocrat) और सुसभ्य (Gentleman) बनना था। किन्तु यह मानसिक स्थिति जल्दी ही समाप्त हो गई और उसका गम्भीर अध्ययन शुरू हुआ। इसमें उसने रूसो की सारी रचनाएँ पढ़ीं। उसने (Montesquieu की) 'कानून की भावना' पर काम शुरू किया और कैथरीन द्वितीय के 'दण्डविधान' पर लिखने की योजना बनाई। किन्तु सामाजिक जीवन और अपने अध्ययन से असन्तुष्ट होकर उसने केंद्र सब छोड़

दिया और अपनी जमींदारी में रहने चला गया। उसने जायदाद का बँटवारा 'यास्नया पोल्याना' को और तीन सौ तीस दासों को अपने पास रखा और अपने किसानों की दशा सुधारने में लग गया। वह वर्गों की विषमता को न समझ पाया और यह न जान सका कि किसानों का उद्धार दास-प्रथा से मुक्ति में है। उसके भलाई के साथ काम करने पर भी किसानों ने उसे संदेह की दृष्टि से देखा। बाद में उसने अपने अनुभवों का 'जमींदार की सुबह' में वर्णन किया। इसी बीच सुधार के प्रयत्नों से असन्तुष्ट होकर उसने अपनी शिक्षा की योजना बनाई। एक बार (१८४९) वह फिर कानून की परीक्षा देने के लिये पीटर्सबर्ग गया किन्तु परीक्षा को बीच में ही छोड़ दिया। वह कभी गाँव में रहता था कभी मास्को और अपने भविष्य के बारे में कुछ भी स्थिर न कर सका। जीवन में कोई उद्देश्य या आदर्श उसे न मिल सका और वह भोग और नैतिक उत्थान के अतिवाद में झूलता रहा। अन्त में वह सेना में भर्ती हो गया और तोपखाने का अफसर होकर १८५१ में काकेशस गया और वीरता के लिये उसका सम्मान किया गया।

यहाँ पर ताल्स्ताय ने लिखना शुरू किया। उसने अपनी आत्मकथा 'बचपन' (१८५१ में) समाप्त की और बहुत-सी कहानियाँ लिखीं। १८५४ में वह क्रीमिया भेजा गया जहाँ वह सेवास्तोपोल के घेरे में उपस्थित था। सेवास्तोपोल के रक्षकों के साहस ने उसे तीन नई कहानियों की सामग्री दी। तुर्गेनेव इन कहानियों से बड़ा प्रभावित हुआ। उसने लिखा कि 'यह शराब अभी नई है किन्तु जब यह तैयार होगी तो देवताओं के उपयुक्त होगी।' १८५६ में सेना से इस्तीफा देकर वह पीटर्सबर्ग आया जहाँ वह 'समकालीन' के प्रगतिशील वर्ग के नवीन वातावरण में आया। नैतिक समस्या को राजनीति से अधिक महत्व देने-वाले अपने जीवन-दर्शन के कारण वह सन् 'साठ' के सामान्य वर्ग के लेखकों से दूर ही रहा। चर्निश्येव्स्की को सम्मान की दृष्टि से देखते हुए भी वह 'समकालीन' की गोष्ठी के विरुद्ध हो गया।

सन 'पचास' में वह जीवन की क्रूर वास्तविकताओं को स्पष्ट देखने लगा। उसकी आत्मा व्याकुल हो उठी और वह जमींदार और दास के सम्बन्ध की समस्या पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने लगा। उसने निश्चित किया कि अभिजात वर्ग (Privileged Class) की आत्मा की रक्षा और जनता के निकट आने का एक ही उपाय है और वह है शिक्षा के द्वारा जनता की सेवा। उसने इस शिक्षा को अपने जीवन का उद्देश्य बना लिया। १८५९ में वह 'यास्नया पोल्याना' में स्कूल का शिक्षक बन गया। शिक्षण की व्यावहारिक समस्याओं के समझने के

लिये वह शिक्षा के प्रसिद्ध विशेषज्ञों की पद्धतियों का अध्ययन करने को विदेश गया, किन्तु इससे वह सन्तुष्ट न हुआ और उसने अपनी नई पद्धति निकालने का निश्चय किया।

उसने 'स्वतन्त्र शिक्षा' के विचार को अपना आधार बनाया जिसमें विद्यार्थी की रुचि को स्वाभाविक ढंग से जाग्रत् करने (न कि उन पर किताबों का बोझ लादने) का ध्येय मुख्य था। उसका ढंग था स्वतन्त्र वाद-विवाद। इसकी ओर बहुत से शिक्षक आकृष्ट हुए। क्रांतिवादी आन्दोलन से अलग रहने के कारण इन लोगों ने शिक्षा का उद्देश्य 'स्वतन्त्र व्यक्ति' माना। अपने शिक्षा-सम्बन्धी सिद्धांतों के प्रचार के लिये वह 'यास्नया पोल्याना' पत्रिका निकालने लगा।

१८६१ में वह मालिक और किसानों के बीच का झगड़ा तय करने के लिये निर्णायक बनाया गया। किसानों का समर्थन करने के कारण अधिकारियों को उस पर संदेह होने लगा। पुलिस ने उसकी अनुपस्थिति में उसके घर की तलाशी ली। इस अपमान से क्षुभित होकर ताल्स्ताय ने रूस को सदा के लिये छोड़ देने का विचार भी किया। १८६२ में उसने सोफिया अन्द्रेयेव्ना बर्स से शादी की। गार्हस्थ्य आनन्द ने उसके आध्यात्मिक संघर्ष को शान्त कर दिया और वह अपनी जमींदारी को उन्नत बनाने में लग गया। इसी समय उसने एक बड़ा उपन्यास लिखने का विचार किया और स्कूल की देख-भाल दूसरे शिक्षकों को सौंप दी।

छः साल में उसने चार भाग के इस बृहत् उपन्यास 'युद्ध और शांति' को पूरा किया। तालस्ताय में कठिन परिश्रम की अद्भुत शक्ति थी। वह अपनी रचनाओं के ऊपर बड़ी मेहनत करता था। वह बड़ी-बड़ी रचनाओं को भी बीस बीस बार दुहरा कर नए रूप में लिखता था। उसने एक भूमिका को १०५ बार लिखा। इसी प्रकार वह बड़ा (तेज) पढ़नेवाला था। उसका बीस भाषाओं में बीस हजार ग्रन्थों का पुस्तकालय था। उसकी रुचि विज्ञान, दर्शन, इतिहास साहित्य आदि सभी की ओर थी। यह कहा जाता है कि उसने अपने जीवन काल में चौदह भाषाएँ सीखीं।

'युद्ध और शांति' पूरी करने के बाद वह अपने स्कूल के काम में फिर से लग गया, और चार पाठ्यपुस्तकें लिखीं।

१८६१ के सुधार के बाद ऐसा प्रतीत होता था कि सामाजिक उथल-पुथल की बाढ़ में सब कुछ बह जायगा। सन् 'सत्तर' में लिखे गए उपन्यास 'अना करेनिना' में हम देखते हैं कि वह अपने चारों ओर के वातावरण का बड़े ध्यान से निरीक्षण कर रहा है। इसके प्रारम्भिक अध्यायों में हम समाज को फिर से सुस्थिर होते देखते हैं। 'कबूल' (Coufession, १८७९-१८८१) में वह

प्रारम्भ और जीवन का प्रचार किया ।

इस अवस्था में उसने पुनर्जन्म (१८९९), चर्च और राज्य का निरूपण किया । इस प्रकार यद्यपि उसने मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण पर टिके हुए पूँजीवाद की निन्दा और शोषण का सच्चा चित्र उपस्थित किया, फिर भी वह ठीक निष्कर्ष पर न पहुँचा । उसका विचार था कि समाज के अन्याय सामाजिक क्रान्ति द्वारा नहीं, किन्तु जनता के नैतिक पुनर्जीवन द्वारा दूर हो सकते हैं । उसने जीवन के प्रति अपने दृष्टिकोण को 'हमें क्या करना चाहिए' पुस्तिका में प्रकट किया । टाल्स्टाय नैतिक दार्शनिक बन गया । जनता के प्रति प्रेम, और बुराई का हिंसा द्वारा प्रतिरोध के सिद्धान्त को उसने अपने विचारों का आधार बनाया । टाल्स्टायवाद का यह सिद्धान्त कई पुस्तकों में प्रकट हुआ जैसे 'मेरे विश्वासों का आधार', 'कला क्या है' ।

उन्नीसवीं सदी के अन्त में 'यास्नाया पोल्याना' एक विशेष प्रकार का सांस्कृतिक केन्द्र बन गया, जहाँ दूर दूर के विद्यार्थी और युवालोग उससे मिलने आते थे । सन् 'अस्सी' के प्रतिक्रियावादी युग में उसके अनुयायियों की संख्या बहुत बढ़ गई । गोर्की ने इन अनुयायियों का बड़ा सजीव वर्णन किया है ।

सन् 'अस्सी' और 'नब्बे' में बच्चों की शिक्षा के लिये टाल्स्टाय मास्को में रहा । यहाँ भी बहुत लोग उससे मिलने आते थे और यहाँ भी वह गाँव का सादा जीवन व्यतीत करता था । वृद्धावस्था में भी उसका स्वास्थ्य बड़ा अच्छा रहा । पचहत्तर वर्ष की आयु में उसने साइकिल चलानी शुरू की और बयासी वर्ष की

अवस्था में भी वह घोड़े की सवारी करता था। कड़ी बीमारी के बाद १६०१ में वह क्रीमिया गया। वहाँ वह गोर्की और च्येखव से कई बार मिला। उसको इन दोनों से बड़ा प्रेम था और वह इनका बड़ा आदर करता था।

विचारों के इस उथल-पुथल के बाद उसे अपनी अमूल्य साहित्यिक कृतियों में कोई सार तत्त्व न मिला। उसे इनमें केवल वासनाओं का उद्दीपन ही दिखाई पड़ा। वह कला के एक नए प्रकार और प्रयोग की ओर आकृष्ट हुआ और सामान्य जनता के लिये छोटी नैतिक कहानियाँ लिखने लगा। उसकी बड़ी रचनाएँ भी नैतिक उद्देश्य से पूर्ण हैं। जैसे 'इवान इलिच की मृत्यु' (१८८६) 'अंधकार की शक्ति (१८८६), 'मालिक और मज़दूर' (१८६५) आदि। जनता के लिए सस्ता और हितकारी साहित्य तैयार करने के लिये उसने प्रकाशन भी खोला। एक कोपेक मूल्य की इन पुस्तकों का बड़ा प्रचार हुआ।

ताल्स्ताय के सर्जनात्मक कार्य के परित्याग के निर्णय का उसके प्रशंसक और मित्रों ने बड़ा विरोध किया। तुर्गेन्येव ने अपनी मृत्यु-शय्या से ताल्स्ताय से साहित्य में काम करने की अपील की। जीवन तथा नए विचारों को कलात्मक रूप में प्रकट करने की इच्छा ने उसे सर्जनात्मक कार्य में फिर से प्रवृत्त किया। इन शक्तियों के प्रभाव से सन् 'नब्बे' में कला के प्रति उसके विचार फिर बदले, और पिछले दशक में विकसित विचारों की अभिव्यक्ति की उसे इसमें सम्भावना दिखाई पड़ी। वह अपने उपन्यास 'पुनर्जीवन' और 'हाजी मुराद' तथा 'नाच के बाद' आदि कहानियों की रचना में लगा।

फिर भी जीवन के अन्तिम वर्षों में वह विषमताओं से न बच सका। 'बुराई के अविरोध' और उसके गवर्नमेंट के विरोधी विचारों का वैषम्य स्पष्ट ही है। गोर्की कहता है कि ताल्स्ताय की कलात्मक कृतियाँ उसके धार्मिक दर्शन का निराकरण करती हैं।

इतिहास नई समस्याएँ पेश करता रहा जिसे कि ताल्स्ताय अपनी पितृसत्ताक (Patriarchal) मनोदृष्टि के सहारे न सुलझा सका। उसे इसका स्वयं अनुभव हुआ और उसे बड़ी मानसिक व्यथा हुई। १८६६ में उसने अपनी डायरी में लिखा कि 'मैं प्रार्थना करता हूँ। मैं व्यथा से चिल्ला रहा हूं, मैं रास्ता भूल गया हूं। मैं फंस गया हूं। मैं असमर्थ हूं किन्तु मैं अपने से और अपने जीवन से घृणा करता हूँ।' कई अवसरों पर उसके क्रुद्ध शब्दों से शासन काँप उठा। (जैसे 'मैं चुप नहीं रह सकता', 'फिर सोचो', 'अपने समय की गुलामी' आदि)। एक प्रतिक्रियावादी पत्र के सम्पादक ने लिखा कि 'हमारे दो सम्राट् हैं—निकोलस द्वितीय, और निकोलस ताल्स्ताय। निकोलस ताल्स्ताय का कुछ नहीं कर सकता और उसका सिंहासन नहीं हिला सकता। किन्तु ताल्स्ताय निश्चय ही निकोलस के

सिंहासन और उसके वंश को हिला सकता है।' अधिकारी उसकी लोक-व्यापी ख्याति के कारण उसके विरुद्ध कुछ करने का निश्चय न कर सके। फिर भी चर्च से उसका बहिष्कार हुआ। और उस समय से प्रतिवर्ष सब चर्चों में उसके विरुद्ध फतवा पढ़े जाने को था।

अपने आदर्श की विफलता की भावना का अब उसे उत्तरोत्तर अनुभव होने लगा। १८६७ में वह लिखता है—'गरीबी के बीच धन और अपने जीवन की विलासिता की विषमता से मैं तड़प रहा हूं। मैं इस असमानता को कम नहीं कर सकता। इसी में मेरे जीवन की करुण कथा निहित है।'

परिवार और धनी समाज को छोड़ने का विचार उसमें प्रबल हो उठा। वह गरीब की तरह घूमने या दक्खिन या बलगेरिया में किसान की तरह रहने की सोचने लगा। अक्टूबर १६१० में अपने डाक्टर मकोविल्स्की के साथ वह चुपचाप रात में 'यास्नया पोल्याना' छोड़कर चल दिया। ट्रेन में उसे सर्दी लग गई और वह सख्त बीमार हो गया। वह नजदीक के अस्तापवो के स्टेशन मास्टर के घर ले जाया गया जहाँ उसकी इच्छानुसार उसका शव 'यास्नया पोल्याना' दफ़नाया गया।

ताल्स्ताय की विधवा ने पार्क और कब्र को राष्ट्रीय स्मारक के रूप में (१६११) सरकार को देना चाहा, किन्तु सरकार ने न स्वीकार किया। १६२१ में सोवियत सरकार ने 'यास्नया पोल्याना' को राष्ट्रीय सम्पत्ति बना दिया और उसे 'अकेडेमी आफ साइंस' को सौंप दिया। एक म्यूजियम ताल्स्ताय के घर में और दूसरा स्कूल में बनाया गया। १६४१ में जर्मनों ने 'यास्नया पोल्याना' को बैरक बना दिया और ताल्स्ताय की कब्र के चारों ओर अपने सैनिकों का कब्रिस्तान बना दिया। यद्यपि अकेडेमी ने बहुमूल्य वस्तुओं को पहले ही हटा दिया था फिर भी जर्मन फासिस्टों ने जो कुछ बचा था उसे लूट लिया। और जब वे अंत में भगाये गए तो उन्होंने सब इमारतों में आग लगा दी। स्कूल और उसका १८०० पुस्तकों का संग्रहालय और दूसरी इमारतें नष्ट हो गईं। मई १६४२ में म्यूज़ियम फिर से खोला गया।

आत्मचरित्र की 'त्रयी' ('बचपन', 'लड़कपन' और 'जवानी' १८५२-५६) में एक लड़के (जिसका नाम निकोलेन्का इरतेन्येव है) के मानसिक विकास का (इन तीन अवस्थाओं के बीच) चित्र है जिसका कि जीवन के प्रति गंभीर और नैतिक दृष्टिकोण हो जाता है। बाल-मनोविज्ञान का यह अध्ययन नैतिक आत्म-पूर्णता या विकास के वस्तु-विषय की ओर उन्मुख हो जाता है। इसमें गांव के पितृसत्ताक (Patriarchal) जीवन के प्रति सहानुभूति है, किसान तथा जमींदार के पारस्परिक सहयोग को आदर्श रूप में प्रस्तुत किया गया है। ताल्स्ताय

अभिजात वर्ग की मान-सम्मान पुरानी झूठी भावनाओं और शिष्टाचार की निन्दा से और आगे नहीं बढ़ता। कलात्मकता की दृष्टि से इन तीनों कहानियों में प्रतिभा का संकेत बराबर मिलता है।

'सेवास्तोपोल' कहानियों में इन गुणों का और विकास हुआ। सैनिक और नाविक, इस युद्ध के करुण नाटक के छोटे पात्र, अफसर, युद्धक्षेत्र के दृश्य, इसमें भाग लेनेवालों की मानसिक दशा, सेवास्तोपोल के रक्षकों की देशभक्ति आदि इन सबका बड़ी सचाई और शक्ति के साथ वर्णन हुआ है। इस पुस्तक की सबसे बड़ी विशेषता युद्ध के दृश्यों का—रक्त, कष्ट और मृत्यु जो युद्ध की यथार्थता है—यथार्थवादी चित्रण और वर्णन है। यह लेखक की महत्वपूर्ण रचना 'युद्ध और शांति' की भूमिका है।

'युद्ध और शांति (१८६४-१८६९) किसान-प्रश्न को लेकर तीव्र वर्ग-संघर्ष के समय में इस वृहत उपन्यास की रचना हुई। हम देख चुके हैं कि १८६१ के सुधार से किसान और जमींदार के संबंध की समस्या नहीं सुलझी और यह गंभीर प्रश्न बना रहा। राजनीतिक और सामाजिक समस्या का चित्रण करनेवाले साहित्य की ओर लोगों की रुचि बढ़ी। इस समय जनता में इतिहास के प्रति रुचि जाग्रत हो रही थी। ऐसे वातावरण में तत्कालीन समस्या पर प्रकाश डालने के उद्देश्य से तालस्ताय ने इस ऐतिहासिक उपन्यास की रचना की योजना बनाई।

१८६३ में उसने एक दिसेम्ब्रिस्ट के बारे में कहानी शुरू की जो १८५६ में साइबेरिया से लौटा। उसने इसे पूरा न किया। किन्तु अपने नायक की कहानी १८२५ से शुरू की। इसे फिर छोड़ दिया और १८१२ से नए सिरे से शुरू किया। इसे एक बार फिर छोड़ा और १८०५ से १८०६ के रूस के शर्म और असफलता के जमाने में गया। उसमें फिर बहुत से पात्र सन् १८०५, १८०७, १८१२, १८२५ और १८५६ के बीच चलते हैं। १८०५-१८१४ की घटनाओं पर अधिक ठहरते हुए उसने इस समय के सम्बन्ध में बड़ी सामग्री एकत्रित की। उसने उस समय के पत्र, डायरी, व्यक्तिगत संस्मरण आदि का विशेष रूप से अध्ययन किया जिससे कि सामाजिक वातावरण, गार्हस्थ्य जीवन, पृष्ठ-भूमि, और १८१२ के युद्ध का सम्पूर्ण विवरण ज्ञात हो गया। ऐतिहासिक घटनाओं के महत्व को दर्शाने के लिये उसकी कथावस्तु और पात्र जटिल होते गए। उसने ऐतिहासिक व्यक्तियों—अलेक्जेण्डर प्रथम, नेपोलियन, कुतुज़ोव, स्पेरान्स्की—का समावेश भी किया है और उसका एक नायक रूसी जनता का प्रतिनिधि है। केवल अभिजात वर्ग के परिवार के जीवन का चित्र प्रस्तुत करने के स्थान पर उसकी भावना ने उदार और व्यापक होकर रूस के किसान-जमींदार

वर्गों के बड़े हिस्से का भी समावेश किया। इसका परिणाम यह हुआ कि (दार्शनिक सामग्री के आधिक्य के साथ) महाकाव्य ढंग के एक नए प्रकार के उपन्यास का आविर्भाव हुआ।

इसमें वर्णन युद्ध के दृश्य और जेनरल से लेकर साधारण सिपाही तक के मनोविज्ञान का चित्र प्रस्तुत करते हैं। युद्ध-समय के वातावरण का ठीक-ठीक दृश्य सामने रखने के लिये भरसक यत्न किया गया है। दो युद्धों का वर्णन—१८०५-१८०७ विदेश में और १८१२ रूस में—इसमें हुआ है। यह केवल युद्धों और विविध प्रकार के स्वार्थी और कायर से लेकर चुपचाप आत्मोत्सर्ग करनेवाले अफसरों का ही वर्णन नहीं करता प्रत्युत सेना के सभी विभागों (पैदल, तोपखाना आदि), साधारण सैनिक तथा मृत्यु और कायरता तथा साहस का वर्णन करता है।

१८१२ के युद्ध को यह जनता का राष्ट्रीय युद्ध मानता है जिसमें कि विविध वर्ग देश की रक्षा के लिये एक हो गए। इसी भावना से यह बोरोदिनो के युद्ध को केवल सैनिक विजय न मानकर नैतिक विजय कहता है। आक्रमणकारियों के ऊपर अन्तिम विजय में यह सामान्य जनता और साधारण सैनिकों को वास्तविक नायक के रूप में दिखाता है। इसी प्रकार प्रसिद्ध जेनरल कुतुजोव के चित्रण में सामान्य जनता के साथ संबंध दिखाता है। क्योंकि जनमत के दबाव और आवश्यकता के कारण वह जार के विदेशी प्रिय पात्र को हटाकर सेना का अधिपति बनाया गया।

ताल्स्ताय का यह विचार था कि व्यक्ति नहीं किन्तु जनता इतिहास की रचना करती है। इन विचारों को यह कुतुज्जोव द्वारा व्यक्त करता है और वह यह भी प्रकट करता है कि भाग्य पूर्वनिश्चित है और टाला नहीं जा सकता। इस नियतिवाद के होने पर भी कलाकार तल्स्ताय ने घटनाओं और व्यक्तियों का इतिहास-सम्मत चित्र प्रस्तुत किया।

इस उपन्यास में ५५९ पात्र हैं किंतु अधिक ध्यान किसानों के चित्रण की ओर दिया गया है। यद्यपि ये चित्र सदा ऐतिहासिक घटनाओं के अनुरूप नहीं हैं। यद्यपि ताल्स्ताय के समय में किसानों की समस्या विकट हो गई थी और किसानों के झगड़े बढ़ गये थे फिर भी इस उपन्यास में वर्ग-संघर्ष कहीं नहीं दिखाई पड़ता। इसमें न बुरे मालिक हैं और न दुखी नौकर। किसानों का विद्रोह आकस्मिक घटना बताई गई है जो कि स्थानीय किसानों की विचित्रता से संभव हुई, क्योंकि ये किसान बहुत दिनों से बिना मालिक के थे। यह किसान-विद्रोह भी शांत है। ताल्स्ताय ने कहा कि मैं स्वयं जानता हूँ कि मैंने अतीत के चित्र में क्या छोड़ दिया है—'दास के प्रथा की दारुणता' और 'समय की नृशंसता'। उसका कहना था कि अतीत के प्रति यह विचार सच नहीं है।

किसान के परिश्रम को ताल्स्ताय जनता को शुद्ध करनेवाला मानता है। उसे किसानों के बीच एक विशेष संसार दिखाई पड़ा जिसका संपर्क अभिजात वर्ग को भी स्वास्थ्य प्रदान करेगा। वह किसान को वर्गदृष्टि से न देखकर नैतिक और मनोवैज्ञानिक दृष्टि से देखता है। प्लातन करतायेव इस वर्ग का आदर्श पात्र है जिसमें पितृसत्ताक (Patriarchal) किसान की निष्क्रियता, समर्पण आदि सभी गुण दिखाये गये हैं। किसान जनता के प्रति इस प्रतिक्रियावादी दृष्टिकोण ने पात्र को थोड़ा मिथ्या और व्यक्तित्वविहीन बना दिया।

रूसी भावना और विचारों के प्रतिनिधि कुतुत्सोव के विपरीत नेपोलियन का जो चित्र दिया गया वह अरुचिकर है। नेपोलियन असम्भव और आत्मविश्वास से पूर्ण दिखाया गया है वह अपनी सफलता से फूलकर अपने को इतिहास की गतिविधि का संचालक मानता है। ताल्स्ताय उसके अतिशय गर्व और उसके चारों ओर के रहनेवाले खुशामदियों के प्रभाव को दिखाता है। पश्चिम के पूंजीवाद से उन्नत वैयक्तिकता और बौद्धिकता उसकी प्रधान विशेषताएं हैं।

नेपोलियन के प्रति उसकी ऐसी भावना, उसके इतिहास-संबंधी अपने विचारों से प्रसूत है। इसके साथ ही वह मनुष्य की स्वतन्त्रता को नहीं स्वीकार करता। वह लिखता है कि 'जातियों की गतिविधि न तो शासन से नियन्त्रित होती है और न बौद्धिक क्रियाओं से, और न इन दोनों के योग से, किंतु समस्त जनता की क्रिया से जो कि उन घटनाओं में भाग लेती है जनता का (मक्खियों की तरह झुण्ड का संयुक्त) जीवन जो कि भाग्य या ईश्वर के आधीन है इतिहास को संचालित करता है, न कि बड़े आदमी। यदि सब मनुष्य स्वतन्त्र हों तो इतिहास उलझी हुई घटनाओं की लड़ी प्रतीत होगा। इसलिये स्वतन्त्रता—जो कि वास्तव में नहीं है—का त्याग आवश्यक है और आवश्यक है उस पराधीनता का स्वीकार जिसका कि हम अनुभव नहीं करते।' कुतुत्सोव और करतायेव के विचार और मनस्थिति ताल्स्ताय के इस सिद्धांत के प्रतीक हैं। इनको वह नेपोलियन के विचारों के विरोध में रखता है। करतायेव जीवन की नियतिवादी भावना रखता है। वह भाग्य के हाथ में अपने को सौंप देता है। व्यक्ति के समान नहीं प्रत्युत मक्खियों के झुंड के समान जनता का सामान्य या सम्मिलित जीवन उसका जीवन है, और इसी को वह आदर्श रूप में चित्रित करता है। इसी प्रकार कुतुत्सोव की शक्ति, जनता की भावना, इच्छा और विचारों के अभिव्यंजन में निहित है।

इतिहास के निर्माण में जनता के पद को ऊंचा उठाने में ताल्स्ताय ठीक था किंतु भाग्यवाद, और इतिहास में व्यक्ति का निराकरण ठीक न था। लेनिन लिखता है कि 'निराशावाद, विरोध या समर्पण, आध्यात्मिक बातचीत—यह

विचारधारा उस युग में अनिवार्य रूप से प्रकट होती है जब कि प्राचीन व्यवस्था में उलट-पलट होता है, और इस व्यवस्था में पली, और माँ के दूध के साथ इसके सिद्धांतों का पान करनेवाली, तथा इसकी परम्परा और विश्वासों पर निर्भर जनता यह नहीं देख पाती और नहीं देख सकती कि कौन सी नई व्यवस्था बनाई जा रही है, कौन सी सामाजिक शक्तियाँ इसे किस प्रकार बनाएँगी, और कौन सी सामाजिक शक्तियाँ टूटती हुई व्यवस्था के असंख्य कष्टों से (जो कि इसकी भग्न दशा की विशेषता है) मुक्ति दिलाएँगी। 'साठ' का जमाना ऐसा ही था जब कि बुर्जुआ पूँजीवाद विजयी होकर दास-प्रथा पर टिकी सामंतशाही (Feudalism) को स्थानच्युत कर रहा था। पूंजीवादी संस्कृति की अनिवार्यता के भय ने ताल्स्ताय को पितृसत्ताक कृषकवर्ग (Patriarchal Peasantry) में बिठा दिया और वह इसको (अर्थात् किसानों की गृहपति की संस्कृति को) उच्चतर सत्य का वाहक समझने लगा।

अभिजातवर्ग (Aristocracy) की दुनिया का व्यापक चित्रण किया गया है। जिसमें सभी प्रकार के लोग हैं। एक ओर शासन के उच्च पदाधिकारी (Bureaucracy) और दर्बार के लोग हैं, दूसरी ओर मास्को के नष्टप्राय उच्च परिवार और फिर इसी वर्ग के विरोधी लोग जैसे बल्कोंस्की, और बेजुहोव। प्रथम दल से ताल्स्ताय अरुचिकर प्रतीकों का चित्रण करता है जैसे प्रिंस वसीली कुरागिन जो अवसरवादी है और धनी बेजुहोव का उत्तराधिकारी बनना चाहता है, और इसी मतलब से मृत्यु-शय्या पर पड़े बेजुहोव से मिलने जाता है जब वह ऐसे सफल नहीं होता तो अपनी लड़की की शादी उत्तराधिकारी युवक पियरे बेजुहोव से करने का कुचक्र रचता है, और अपने अयोग्य लड़के का विवाह राजकुमारी बल्कोंस्की से करना चाहता है। सारा परिवार क्रूर नोच खसोट और अत्यन्त संकीर्ण बुद्धिवाला प्रतीत होता है। इसकी हर चीज ताल्स्ताय के लिये अरुचिकर मिथ्याडंबर से पूर्ण है। इन लोगों में कुछ भी स्वाभाविक, सरल या उचित नहीं है। इसी प्रकार वह उन शासकों का भी वर्णन करता है जो जनता से दूर हैं और उससे घृणा करते हैं। इसी तरह वह शासन के जन-विरोधी स्वरूप को भी दिखाता है जिसके अधिकांश पदाधिकारी अवसरवादी हैं। अलेक्जेंडर प्रथम का दाहिना हाथ अरकचेयेव इसी प्रकार का व्यक्ति है वह ज़ार के प्रति अपनी राजभक्ति, जनता के ऊपर किये गए क्रूर कर्मों से प्रकट करता है।

किन्तु वह गांव के अभिजातवर्ग का चित्रण बिल्कुल दूसरे रूप में करता है। यद्यपि इल्या अन्द्रेयेविच रस्तोफ जमींदारी संचालन में अयोग्यता के कारण परिवार को नष्ट कर रहा है फिर भी ताल्स्ताय उस परिवार की अच्छाइयों पर जोर

देता है—सादगी, आतिथ्य, सत्कार, नौकरों और किसानों से सद्व्यवहार, पारिवारिक प्रेम, स्वार्थ का प्रभाव। निकोलाइ, मेरिया वल्कोंस्की से शादी करता है और गाँव में बस जाता है। सभी दास उसे चाहते हैं। वह प्राचीन ढंग पर अपनी जमींदारी का संचालन करता है और नवीनताओं से दूर रहता है और इस प्रकार जमींदारी से फायदा उठाता है। ताल्स्ताय के मतानुसार उसकी सफलता किसान-अनुभवों के उपयोग और किसानों के प्रति अच्छे व्यवहार में है।

ताल्स्ताय वल्कोंस्की परिवार का चित्रण सहानुभूति के साथ करता है। गृहपति सच्चरित्र, संस्कृत और गर्वीला है जो कि किसी के सामने न झुकेगा और दर्बार के अवसरवादियों का विरोधी है। उसका लड़का अन्द्रे होशियार और दृढ़ संकल्प वाला है और जीवन के असली मतलब को समझना चाहता है। इस परिवार में ताल्स्ताय को आधारभूत रूसी जातीय विशेषताएँ दिखाई पड़ती हैं जिनको वह (बुर्जुआ सिद्धांतों के प्रतिनिधि) नगर के अभिजातवर्ग (Nobility) के विरोध में प्रस्तुत करता है।

इस उपन्यास के मुख्य पात्रों की सूरत-शक्ल, रहन-सहन, ढंग, मन की स्थिति, आंतरिक जीवन और उनका पूरा जीवनचरित हम जान जाते हैं। राजकुमार अन्द्रे सुन्दर संस्कृत किन्तु गंभीर है। उसमें दृढ़ता और रचनात्मक शक्ति है और समाज और राष्ट्र के मामले में सक्रिय होने की आवश्यकता का अनुभव करता है। प्रशंसा और अधिकार से उसे प्रेम है किंतु वह आत्मा की आवाज़ दबाने को किसी प्रकार तैयार नहीं है। यह जटिल और गम्भीर पात्र फ्रांस की क्रांति से उद्भूत सामाजिक जागर्ति के युग में रहा। यह उस वातावरण में रहा जिसने कि बाद में 'दिसेम्ब्रिस्ट' को जन्म दिया। वह कार्य में जीवन की सार्थकता को चरितार्थ करना चाहता था। युद्ध उसकी महत्वाकांक्षा को जाग्रत् करता है। किन्तु वह युद्ध-सीमा से दूर (Staff Job) पर नहीं रहना चाहता। वह युद्धक्षेत्र में जाकर अपने साहस का परिचय देता है। आस्टर लित्स में जख्मी होने पर उसमें मानसिक परिवर्तन होता है और उसे महत्वाकांक्षा की तुच्छता पर विश्वास हो जाता है। युद्ध के अनुभवों से उसमें निराशा का जन्म होता है। इस निराशा के बीच भी वह दासों में सुधार करता है और उनको आंशिक स्वतन्त्रता देता है। उसमें जनता की ओर विशेष झुकाव है और वह अभिजातवर्ग से दूर होता जाता है। बरोदिनों (के युद्ध) में वह आहत होकर बाद में मर जाता है।

पियरे बेजुहोव का चरित्र इसके विपरीत है। वह व्यवहारकुशल नहीं है और स्वप्नों में लीन है। वह ऐसे जीवन की खोज में है जिसका कि उसके भावों से सामंजस्य हो और नैतिक दृष्टि से उसे संतुष्ट कर मानसिक शांति दे सके। उसे जनता से अपने अलगाव का अनुभव होता है। इसीमें उसकी अस्तव्यस्तता का

प्राप्ति होती है। इस प्रकार तालस्ताय स्त्री के कार्यक्षेत्र को परिवार तक सीमित कर रूस की समस्या को हल करता है।

तालस्ताय के इतिहासविषयक विचार, तथा क्रांतिवादियों के विरोध की चर्चा पहले हो चुकी है। क्या इन्हें कलात्मक त्रुटियाँ माना जाय। नहीं, इनके कारण अधिक गम्भीर हैं और तालस्ताय के जीवनदर्शन में निहित हैं और वह जीवनदर्शन स्वयं उस समय की विषमताओं को प्रतिबिम्बित कर रहा है। 'युद्ध और शान्ति' अत्यन्त कलापूर्ण उपन्यास है जिसमें महाकाव्य की-सी व्यापकता और जनता के आन्तरिक जीवन का सूक्ष्म निरीक्षण है। किन्तु तालस्ताय उस संक्रातिकाल में रहा जब कि रूस सामंतशाही (Feudal Serf) को छोड़ कर पूँजीवाद की ओर जा रहा था। वर्गशोषण और आधिपत्य के विरुद्ध आवाज़ उठाने पर भी ज़मींदार और अभिजातवर्ग के तालस्ताय को पितृसत्ताक कृषकवर्ग (Patriarchal Peasantry) की ओर जाने में समस्या का हल दिखाई पड़ा। परिणामस्वरूप उसके सिद्धांतों की विषमता, और अपने वातावरण से उसका संघर्ष उसकी कृति में प्रतिबिम्बित हुआ। अंत में इस अद्वितीय उपन्यास की रचना में यथार्थवादी तालस्ताय धार्मिक तालस्ताय के ऊपर विजयी हुआ।

यह उपन्यास महाकाव्य के ढंग पर लिखा गया है। कथन की गति धीमी है। लोगों के सम्बन्ध बहुत सी घटनाओं के बीच से विकसित होते हैं। रूस तथा पश्चिम के उस युग के जीवन के प्रत्येक क्षेत्र तथा गार्हस्थ्य और सामाजिक पृष्ठभूमि के असंख्य दृश्य इस उपन्यास में मिलते हैं, यद्यपि मुख्य कथा का संबंध रस्तोव, बल्कोंस्की, और बेज़ुहोव के तीन उच्चवंश के परिवारों से है। इस वातावरण और पृष्ठभूमि से 'दिसेम्ब्रिस्ट' से पहले का समय सजीव हो उठता है। व्यक्ति और समाज के भाग्य का अटूट संबंध भी स्पष्ट रूप से सामने आ जाता है।

इन पात्रों के चित्रण में आधारभूत प्रक्रिया 'वैपरीत्य' की है। नेपोलियन के विरोध में कुतुसोव और करतायेव, जो एक दूसरे से (विचार आदि में) बिल्कुल भिन्न हैं। पीटर्सबर्ग के विपरीत गाँव, शासन के अभिजातवर्ग के विपक्ष में गाँव में बसनेवाला अभिजातवर्ग। सामाजिक जीवन के उथल-पुथल, परिवर्तन और टूटने के चित्रण पर विशेष ध्यान दिया गया है। ऐसे व्यापक परिवर्तनों के बीच मनुष्य में होनेवाले आंतरिक परिवर्त्तन के अभिव्यंजन की तालस्ताय में अद्भुत क्षमता है। हम देखते हैं कि सम्यक् विकास को दबानेवाले शासन के कारण आन्द्रे और पियरे बेज़ुहोव जैसे पुरुष किस प्रकार मानसिक निराशा के बीच से जाते हैं, और बराबर मुक्ति का उपाय और जीवन का उद्देश्य खोजते रहते हैं।

इनमें से कुछ पात्रों की रचना उन व्यक्तियों के आधार पर हुई है जिनको कि लेखक जानता था। इल्या अन्द्रेयेव रोस्तोव का आधार लेखक का बाबा है। निकोलाइ रोस्तोव का आधार उसका पिता और राजकुमारी मरिया उसकी माँ के ढंग पर है। दूसरे छोटे पात्रों का पता ऐतिहासिक ग्रंथों से लगता है। किंतु इन सभी पात्रों का परिमार्जन और संस्कार बड़ी कुशल कल्पना के साथ हुआ है।

मनुष्य की चेष्टाओं आदि के वर्णन में ताल्स्ताय अद्वितीय है। इससे पात्र की सूरत और रंग-ढंग के वर्णन से ही पात्र के चरित्र का संकेत मिल जाता है। इसी प्रकार की शैली की विविधता में संवाद अत्यन्त समृद्ध है। पात्रों की कथोपकथन की अपनी उपयुक्त शैली है जो परिस्थिति और मानसिक प्रतिक्रिया के अनुरूप बदला करती है। कुतुज़ोव अपनी सेना को सामान्य किसान या सैनिक की सीधी भाषा में भाषण देता है और सम्राट् और दरबार से उस समय की उपयुक्त शैली में बात करता है। उच्चवर्ग के बीच प्रचलित फ्रेंच के समकक्ष वह जनता की सरल रूसी भाषा को रखता है। इसके साथ कथोपकथन की वास्तविकता, और पात्रों की भावना को, चेहरे की भावभंगी, चेष्टा, क्रिया आदि के वर्णन से और भी उत्कर्ष प्राप्त होता है। वह जटिल पात्रों के बाह्य और अभ्यन्तर को अच्छी तरह दिखाने का बराबर प्रयत्न करता है।

प्रकृति के प्रति ताल्स्ताय की भावना कभी रहस्यात्मक न रही। प्राकृतिक दृश्यों की पृष्ठभूमि,—जिसका कि वह अत्यन्त कौशलपूर्ण वर्णन करता है—उसके लिये वातावरण मात्र है जिसमें कि उसके पात्र चलते-फिरते हैं, और जिसके प्रभाव का वह अनुभव करता है। उपन्यास में प्रकृति के वर्णनों का कई ढंग से प्रयोग हुआ है जैसे पात्र के चरित्र की कोई नवीनता बताने के अवसर के रूप में या किसी नाटकीय प्रभाव के बढ़ाने के रूप में।

भाषा के आचार्य रूप में ताल्स्ताय ने साहित्यिक भाषा को पुश्किन और गोगल की परम्परा में विकास की चरमसीमा पर पहुँचा दिया। उसमें साहित्यिक और वैज्ञानिक भाषा के गुणों के साथ बोल-चाल और रोज़मर्रा की भाषा और ज़माने के 'विशेष शब्द' और 'रचना-विन्यास' का ज्ञान भी है। किन्तु अपने दार्शनिक विचारों को प्रकट करने के लिये उसने सीधी और सरल शैली का विकास किया। भाषा के सम्बन्ध में वह एक लेख में लिखता है कि 'हम प्रायः ठीक नहीं बोलते लेकिन जनता व्याकरण का अच्छा प्रयोग करती है।' इस उपन्यास में वह सूक्ष्म, जटिल, रोमांटिक साहित्य की भड़कीली शब्दावली का मज़ाक बनाता है।

'अना करेनिना' की रचना (१८७३-१८७७) उस समय हुई जब कि जीवन का उद्देश्य, अभिजातवर्ग और जनता का भाग्य, नगर और गांव,

परिवार और विवाह के सम्बन्ध आदि की समस्याएँ उसके मन को परेशान कर रही थीं और पितृसत्ताक कृषकवर्ग (Patriarchal peasantry) का सिद्धांत तब तक उसके मन में ठीक-ठीक नहीं उठा था। उसने इसकी रचना में पाँच वर्ष लगाए और इसे बारह बार लिखा।

उच्चवर्ग की एक विवाहित स्त्री अपने प्रेमी के प्रेम में पड़कर सब कुछ छोड़ देती है। उपन्यास को इसी कथावस्तु के आधार पर लेखक नागरिक समाज की मिथ्या और कृत्रिम संस्कृति को गांव की गृहपति संस्कृति (Patriarchal estate life) के विरोध में रखता है। 'युद्ध और शांति' के समान ही इसमें विचारों और पात्रों के वैपरीत्य के ढंग का प्रयोग किया गया है। किन्तु इसकी रचना अधिक सुसंघटित और पूर्ण है। अभी इन्हीं दो संस्कृतियों के मूल्यांकन का विचार सभी घटनाओं और पात्रों में एकान्विति लाता है। इस प्रकार हम उपन्यास की नायिका अन्ना को आत्महत्या करते और उसके प्रेमी व्रांस्की को नैतिक परिणति (Catastrophe) से अभिभूत होते हुए देखते हैं। इसके विपरीत लेविन और किटी को अपनी जमींदारी में आनन्द से रहते पाते हैं।

सन् 'सत्तर' के ज़माने में अभिजातवर्ग के वर्णन में ताल्स्ताय का दृष्टिकोण यद्यपि आलोचनात्मक हो गया था फिर भी उसमें इस वर्ग के प्रति वह घृणा न थी जो कि बाद में उसमें विकसित हुई। वास्तव में उसका इस वर्ग के वातावरण से अब भी कुछ लगाव है। अपनी भूमिका के एक संस्करण में उसने लिखा कि 'मुझे छोटे अफसर और धार्मिक विद्यार्थियों के जीवन से कोई रुचि नहीं है लेकिन अभिजातवर्ग का जीवन वास्तव में दिलचस्प और मनोरंजक है।' फिर भी उसकी यथार्थवादी शक्ति ने उस वर्ग का सच्चा चित्र और व्यंग भी प्रस्तुत किया। अन्ना के रूप में ताल्स्ताय ने रूसी साहित्य में अत्यन्त करुण और मोहक स्त्री-पात्र का सृजन किया है और उस समस्या को उठाया है कि उच्च समाज की परम्परा और सीमा का उल्लंघन करने पर उस वर्ग की स्त्री का क्या होता है।

ताल्स्ताय नैतिक सुधारक के रूप में परिवार और समाज के बीच स्त्री के स्थान की समस्या और देश में अभिजातवर्ग के कर्त्तव्य की समस्या को उठाता है। परिवार (जो कि समाज की एकाई है) और स्त्री-पुरुष का सम्बन्ध, ताल्स्ताय के लिये बड़ा महत्वपूर्ण प्रश्न था और स्वस्थ समाज के निर्माण के लिये इसका सुलझाव आवश्यक था। वह अन्ना की निन्दा इसलिये नहीं करता कि उसने उच्चवर्ग के ढोंगी समाज को चुनौती दी वरन् इसलिये कि उसने अपनी व्यक्तिगत भावना के लिये परिवार को नष्ट कर दिया। दो अन्य स्त्री-पात्र ताल्स्ताय के स्त्रीत्व और मातृत्व के आदर्श को प्रकट करते हैं। स्त्री को सामाजिक और राजनीतिक जीवन से अलग रहना चाहिए। बच्चों का जनन और पालन उसकी

सबसे बड़ी सामाजिक सेवा है। जो स्त्री जीवन के इस नियम को तोड़ती है उसका शारीरिक और नैतिक पतन होता है। लेविन के रूप में केवल आदर्श जमींदार और सुधारक ही नहीं मिलता प्रत्युत उसमें लेखक का आत्मचरित्र भी है। लेखक के समान ही लेविन को भी बड़ी कष्टपूर्ण खोज के बाद जीवन का ध्येय प्राप्त हो सका और यह ध्येय किसी सामाजिक राजनीतिक सिद्धान्त पर न टिक कर व्यक्ति के नैतिक उत्कर्ष पर 'आत्मा के लिए जीवन' और ईसाई प्रेम पर आधारित मानव-सम्बन्ध पर अवलम्बित था। तात्साय के विचारानुसार ऐसे जमींदारों के (किसानों के साथ) सहयोग पर भविष्य निर्भर है। लेविन का भाग्य लेखक के इस विचार को प्रकट करता है कि वर्तमान राजनीतिक और आर्थिक व्यवस्था को बिना तोड़े ही आदर्श और अच्छा जीवन सम्भव हो सकता है। (किन्तु) इस समय के उसके लिखे पत्रों में स्वयं उसे इन समस्याओं के लिये बताये हुए अपने आदर्शात्मक नुसखों की उपयुक्तता पर सन्देह प्रकट हो रहा है।

'पुनर्जन्म' तात्साय के अन्तिम सर्जनात्मक युग की कृति है जब कि (सन् 'नब्बे' में) वह अपने वर्ग से अलग हो गया था और स्टेट, चर्च और जनता की गरीबी और गुलामी पर टिकी हुई सामाजिक तथा आर्थिक व्यवस्था की कड़ी आलोचना कर रहा था। इस उपन्यास में वह शासन और न्याय के वर्ग रूप को स्पष्ट दिखाता है। उसका नायक नेख्ल्यूदोव इस निष्कर्ष पर पहुँच जाता है कि न्यायालय द्वारा दण्डितों में आधे बेगुनाह हैं और असली अपराधी शासकवर्ग है और 'असली चोर वह लड़का नहीं है जो कि भूख के मारे सामान चुराता है बल्कि मालिक (Manifacturer) है जो कि उसकी मेहनत को गायब कर जाता है। सरकार जो कि टैक्स के द्वारा उसे लूटती है और जमींदार जो कि उसे बहुत पहले लूट चुका है और उसे जमीन से भगा दिया।' अत्याचार के शस्त्ररूप में चर्च भी शासन के साथ जुड़ा हुआ है और इसके प्रतिनिधि 'रोटी और शराब' को 'ईश्वर के शरीर और रक्त' में परिवर्तित करने के 'रहस्य' से जनता को ठगते हैं और जनता से धन का लोभ न करने को कहते हैं, जब कि स्वयं धन का भोग करते हैं। यह सब बड़ी सजीवता और वास्तविकता से दिखाया गया है किन्तु तात्साय किसी दूसरे प्रकार की शासन-व्यवस्था (State) भी स्वीकार नहीं करता है। सिद्धांत रूप में उसे कोई सरकार या शासन मान्य नहीं है।

वह किसानों की गरीबी दिखाता है और यह बताता है कि १८६१ के सुधारों से उनका कोई लाभ नहीं हुआ। इसीलिए उसे उन क्रांतिवादियों की ओर भी ध्यान देना पड़ा जो कि जनता की दशा सुधारना चाहते हैं। वह क्रांतिवादियों के दो वर्गों का समावेश करता है। इनमें से एक वर्ग के प्रति उसकी सहानुभूति है।

इसमें वे क्रांतिवादी चित्रित किए गए हैं जो कि अपने ध्येय में तन मन से लगे हैं किन्तु वे युद्ध से लेकर पशुहत्या तक सभी प्रकार की हिंसा के विरुद्ध हैं। दूसरे (हिंसात्मक) क्रांतिकारियों के प्रति उसकी सहानुभूति नहीं है और उनको वह 'असीम उत्साह से भरा हुआ नैतिक गुणों से हीन और खोखली महत्वाकांक्षा से भरा' कहता है।

इन दुर्बलताओं के होते हुए भी शासन की आलोचना अत्यन्त प्रभावशाली सिद्ध हुई क्योंकि इसमें असंख्य किसानों की (शासन) विरोधी आवाज भी सम्मिलित थी जो अपने अनुभवों और शासकों के प्रति बढ़ती हुई घृणा द्वारा क्रांति के लिये तैयार हो रहे थे जो (क्रांति) कि थोड़े समय बाद दास-प्रथा के अवशिष्ट चिह्नों को मिटा देनेवाली थी।

तात्स्ताय की साहित्यिक देन बहुत बड़ी है। इसमें ऐतिहासिक मनोवैज्ञानिक उपन्यास 'युद्ध और शांति' है जो कि रूसी राष्ट्रीय 'इलियड' कहा गया है। सामाजिक गार्हस्थ्य उपन्यास 'अन्ना करेनिना' है। सामाजिक उपन्यास 'पुनर्जन्म' है, जीवनचरित की त्रयी; नाटक ('अन्धकार की शक्ति' 'जागर्ति के फल') लोक-कथा के ढंग पर कहानियाँ हैं और कला, शिक्षा, धर्म आदि पर उसके लिखे गए लेख आदि भी सम्मिलित हैं। हम देख चुके हैं कि लेखक ने किस प्रकार ऐतिहासिक उपन्यास को महाकाव्य के रूप में विकसित कर दिया जो कि गम्भीर दार्शनिक वाद-विवाद और मनोविज्ञान के अध्ययन और चित्रण का भी माध्यम बना। साधारण भाषा में नैतिक उद्देश्य से लिखी गई उसकी कहानियाँ भी अपूर्व हैं। प्रतिदिन की यथार्थता, मनोवैज्ञानिक यथार्थवाद, दृश्यों के चित्रण, सरल किन्तु प्रभावपूर्ण शैली और भाषा के सम्बन्ध में उसकी कलात्मकता और कौशल विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। रचना की प्रक्रिया, युक्तियां और प्रयोग की अनेक मौलिक विशिष्टताएं तात्स्ताय की कृतियों में मिलेंगी।

विचारों के परिवर्त्तन से उसके सौंदर्य-सम्बन्धी सिद्धान्त और शैली में भी परिवर्त्तन हुआ। यद्यपि सन् 'साठ' की रचनाओं में भी सामान्य जनता की लोकोक्तियां दिखाई देती हैं फिर भी 'अस्सी' में शैली जनता के निकट आ जाती है और सरलता, संक्षिप्तता, और लोक-प्रचलित शब्दों का व्यवहार उसका उद्देश्य बन जाता है। एक पत्र में वह लिखता है कि 'जनता जिस भाषा में बोलती है और जिसमें सब कुछ अभिव्यंजित करने की ध्वनियाँ हैं—जिनको केवल कवि ही कह सकता है—मुझे बड़ी मीठी लगती है। यह भाषा—और यह सबसे बड़ी बात है—कवियों की नियामक है। ऐसी भाषा में जो इतनी सरल और पूर्णतया समझ में आनेवाली है बगैर लिखना ही असम्भव है।' 'युद्ध और शांति' में यथार्थवादिता और सत्यप्रेम के कारण वह उस रूढ़ पदावली का प्रयोग बचाता

है जिससे कि वस्तुओं को मिथ्या बड़प्पन मिलता है। फिर भी उसने अपनी नाहिन्यिक शैली का सर्वथा त्याग नहीं किया।

ताल्स्ताय के साठ वर्ष के दीर्घ रचनाकाल ने रूसी जीवन के बहुत से परिवर्त्तन और उलट-फेर को देखा और उसका प्रसिद्ध अक्टूबर क्रांति से सात वर्ष पहले अन्त होता है। इन घटनाओं और आनेवाली क्रांति का ताल्स्ताय की कृतियों पर जो प्रभाव पड़ा उसका लेनिन ने अपने लेख ('रूसी क्रांति का दर्पण—ताल्स्ताय' १९०८) में विश्लेषण किया है। 'ताल्स्ताय उन विचारों और प्रवृत्तियों की अभिव्यंजना में महान् है जो करोड़ों रूसी किसानों के हृदय में बुर्जुआ क्रांति के आरम्भ के समय के निकट वर्त्तमान थीं।' वह कहता है कि प्राचीन भूमि व्यवस्था का नाश और 'पुलिस शासन' के स्थान पर स्वतन्त्र समाज और छोटे किसानों की सम्मिलित सम्पत्ति के निर्माण की इच्छा, किसानों की क्रांति की ओर प्रत्येक ऐतिहासिक कदम के साथ है। निस्संदेह ताल्स्ताय की रचनाओं के मूल सिद्धान्त 'ईसाई अराजकता' की अपेक्षा किसानों की इस इच्छा के अधिक अनुरूप और अनुकूल हैं'। ताल्स्ताय के आलोचनात्मक यथार्थवाद के महत्त्व पर जोर देता हुआ लेनिन यह भी बताता है कि 'इस महान विरोधी, कलई खोलनेवाले और बड़े आलोचक की अपनी रचनाओं में रूसी उथल-पुथल तथा विषमता के कारणों और उनसे मुक्ति पाने के उपायों के सम्बन्ध में जो समझ का अभाव (Lack of understanding) मिलता है वह पितृसत्ताक कृषकवर्ग (Patriarchal Peasantry) की ही विशिष्टता है, न कि योरोपीय शिक्षा से समन्वित लेखक की।

ताल्स्ताय ने 'समीक्षात्मक यथार्थवाद' को आगे बढ़ाकर उसे असामान्य उत्कृष्टता प्रदान की और ऐतिहासिक उपन्यास के एक नए प्रकार को जन्म दिया। इसी पुस्तक से उसकी विश्व में ख्याति फैली। १८६६ से १९३५ के बीच उसके ग्रन्थों के ३६६ फ्रेंच अनुवाद हुए।

ताल्स्ताय की कृतियों का विश्व पर जो प्रभाव पड़ा है उसका बड़ी सावधानी के साथ अध्ययन करने की आवश्यकता है। उसका प्रभाव बहुमुखी था। उसके व्यापक और प्रचलित विचारों के विरोधी भी हुए और समर्थक भी, किन्तु उसकी रचनाओं में जो महत्वपूर्ण प्रश्न रखे गए उन्होंने लोगों को उन पर विचार करने को बाध्य किया।

अंतन पावलोविच च्येखव (१८६०–१९०४)

च्येखव का जीवन उस सामान्यवर्ग के व्यक्ति का चरित है जो (उन्नीसवीं शती के अन्त में) जीवन की कठोर पाठशाला में पढ़ चुका है और जो नानबाई

की नौकरी से ऊपर उठकर कला की उच्चतम सीढ़ी तक पहुँचा। अजोव समुद्र के छोटे से बन्दरगाह टगनराग में उसका सन् १८६० में जन्म हुआ। उसके पूर्वज गुलाम किसान थे। सन् १८४१ में उसके बाबा ने साढ़े तीन हजार रूबेल देकर अपने स्वामी चर्तकोव से अपनी और अपने तीन लड़कों की स्वतन्त्रता प्राप्त की। च्येखव का पिता पहले तो एक दुकान में नौकर हुआ और बाद में छोटा व्यापारी बन गया।

इस प्रकार च्येखव के आरम्भिक वर्षों का वातावरण सौदागर के घर का-सा था। उसके पिता की नानबाई की दुकान थी और वहाँ चाय, काफी, साबुन आदि भी बिकता था। च्येखव का काफी समय दुकान की मदद और हिसाब जोड़ने में बीता।

उसका पिता धार्मिक स्वभाव का और चर्च-संगीत का प्रेमी था और वह च्येखव को भी अपने साथ बराबर चर्च ले जाता था। धार्मिक पर्वों पर च्येखव और उसके भाई चर्च में गाना गाते थे और घंटा बजाते थे। इस प्रकार के जीवन ने उसकी बाल्यावस्था में कोई रोचकता न रहने दी। च्येखव बाद में कहा करता था कि 'बचपन में मेरा बचपन ही न हुआ।'

वह उसी नगर की (ग्रीक) पाठशाला में पढ़ने भेजा गया। उसके बचपन की सबसे बड़ी खुशी नगर का थियेटर था। कदाचित इसी के प्रभाव ने उसके मन में साहित्यिक अभिरुचि को जगाया। पिता के व्यापार के नष्ट होने पर सारा परिवार मास्को चला गया और च्येखव अपनी स्कूल की पढ़ाई पूरी करने के लिये वहीं छोड़ दिया गया। वह तीन वर्ष वहाँ पर अकेले अपने जीवन-यापन का प्रबन्ध करता रहा और दूसरे विद्यार्थियों का पाठ सुनकर अपनी पढ़ाई चलाता रहा। जीवन-रक्षा के इस संघर्ष ने उसे बड़े कठोर अनुभव सिखाए और उसमें परिस्थिति और पुरुषों की परख, आत्मस्वातन्त्र्य तथा अश्लीलता (Vulgarity), आडंबरपूर्ण व्यर्थ प्रांतीय जीवन की समीक्षा की प्रेरणा दी। इस संकीर्णता के विरुद्ध सतत युद्ध उसका जीवन-उद्देश्य बन गया। बहुत वर्ष पीछे एक मित्र को लिखे गए पत्र से उसके आरम्भिक जीवन की थोड़ी झलक मिलती है। 'एक जवान के बारे में कहानी लिखो कि एक गुलाम का पुत्र दुकान का नौकर, चर्च में गानेवाला (Chroister), स्कूली लड़का, जिसे कि जन्म से पुरोहित का हाथ चूमना, अभिजातवर्ग के प्रति शिष्ट होना, दूसरों के विचारों के सामने सिर झुकाना सिखाया गया है, जो रोटी के टुकड़ों के लिये धन्यवाद कहता है, प्रायः पीटा जाता है, नंगे पैर स्कूल जाता है, जो बराबर लड़ता है और जानवरों को सताता है, जो अमीर रिश्तेदारों के साथ खाना खाना चाहता है और जो बिना किसी जरूरत और केवल अपनी तुच्छता की भावना के कारण

ही ईश्वर और लोगों के प्रति ढोंगी है। वह किस प्रकार धीरे-धीरे बूँद-बूँद करके अपने अन्दर की गुलामी की प्रवृत्ति को निकाल फेंकता है और (इस प्रकार) एक दिन अपनी नसों में गुलाम के खून की जगह मर्दानगी की दौड़ का अनुभव करता है।'

१८७९ में उसने स्कूल की शिक्षा समाप्त की और मास्को गया। दूसरे वर्ष डाक्टरी के विभाग में दाखिल हुआ। इसी वर्ष पहली बार उसकी कृतियाँ छपीं और वह प्रकाश में आया। काम की खोज में उसने बहुत से हास्यरस के पत्रों में हँसी से भरी कहानियाँ, स्केच आदि 'अन्तन चेहोन्ता' उपनाम से लिखे। इस समय की कुछ चीज़ें बाद में 'मेलपोमने की कहानियाँ' नामक संग्रह में सम्मिलित की गईं जो लेखक के यूनिवर्सिटी छोड़ने के साल में निकला।

थोड़े समय तक वह मास्को के निकट डाक्टरी करता रहा और यद्यपि उसे इससे प्रेम था फिर भी उसे साहित्य से अधिकाधिक रुचि होने लगी। शीघ्र ही साहित्य को उसने अपना सारा जीवन अर्पित कर दिया।

१८८६ में उसकी कहानियों का दूसरा संग्रह छपा। उसकी ख्याति बढ़ने लगी और उसका जीवन-दर्शन व्यापक और गम्भीर होने लगा। उसका प्रमुख भाव संकीर्णता, नीचता तथा अश्लीलता (Vulgarity), आडम्बरपूर्ण व्यर्थता के विरुद्ध युद्ध और भी गम्भीर हुआ। उसे अपने तीसरे संग्रह (१८८७) से बड़ा यश मिला। अकेडमी से उसे पुश्किन पुरस्कार मिला। १८८८ में उसके पहले नाटक 'इवानोव' का मास्को में अभिनय हुआ और उसकी कहानी 'स्तेप' 'उत्तरी हेराल्ड' में छपी। इसका सर्वत्र स्वागत हुआ और गार्शिन ने कहा कि प्रथम कोटि के नये लेखक का आविर्भाव हुआ है।

च्येखव का जीवन-दर्शन अब प्रौढ़ हो रहा था। वह क्रांतिवादी नहीं था। बहुत समय तक उसका यह विचार रहा कि लेखक सामाजिक संघर्ष से अलग खड़ा रह सकता है। उसने लिखा कि 'मानव-शरीर, मस्तिष्क, बुद्धि, प्रतिभा, पूर्ण स्वतन्त्रता, बलप्रयोग और झूठ से स्वतन्त्रता मेरे लिये पवित्रतम है।' किन्तु सन् 'अस्सी' के जमाने के निरंकुश शासन के बीच की कटु वास्तविकताओं और गिरती हुई सामाजिक भावना के कारण वह निराशा के भावों से बच न सका। च्येखव ने देखा कि इस दमन के युग में रूसी बौद्धिक जीवन के कितने ही अच्छे प्रतिनिधियों का मुँह बन्द कर दिया गया और समय के अत्याचार ने उन्हें नष्ट कर दिया। ग्ल्येब उस्पेंस्की पागल हो गया, गार्शिन ने आत्महत्या कर ली और च्येखव के मित्र लेवितन (Levitan) ने आत्महत्या का प्रयत्न किया। च्येखव की कृतियों और मनोदृष्टि में उथल-पुथल उपस्थित हुआ। मनमौजी हँसनेवाले

'अन्तन चेहोन्ता' के स्थान पर सन् 'अस्सी' के अन्त में गम्भीर सामाजिक और मनोवैज्ञानिक भावनावाली छोटी कहानियों का आचार्य अन्तन च्येखव आया।

इन समस्याओं के सुलझाव की खोज में वह कभी ताल्स्ताय की शिक्षा की ओर आकृष्ट हुआ और कभी अनुदार पत्र 'नया समय' के सम्पादक सुवोरिन के निकट आया। (बाद में उसने सुवोरिन से संबंध तोड़ दिया) किन्तु इनसे उसे कोई शांति न मिली। वह सामाजिक कार्यों में उद्धार का मार्ग ढूंढ़ने लगा।

पूर्वी रूस में निर्वासित औपनिवेशकों की दशा का अध्ययन करने के लिये उसने १८९० में सरवालिन की कष्टपूर्ण यात्रा की। इस सामग्री का उपयोग 'सरवालिन द्वीप' नामक पुस्तक में हुआ। १८९२ में उसने अकाल-पीड़ितों की सहायता की और मास्को के निकट के (मेलिहोवो) गाँव में हैजा का स्टेशन खोला। यहां पर उसने (फेफड़े की तकलीफ की वजह से) शहर से दूर रहने के लिये जायदाद खरीदी। उसके जीवन का यह समय अत्यधिक रचनात्मक व्यस्तता का था। इस समय उसने 'अज्ञात व्यक्ति की कहानी', 'साहित्य का शिक्षक' और 'समुद्री पक्षी' (See Gull) (नाटक) तथा 'चचा वान्या' (नाटक) लिखा।

१८९७ में उसके मुंह से खून गिरने लगा। मास्को के स्वास्थ्यगृह में दो साल रहने के बाद वह दक्खिनी फ्रांस में दवा के लिये गया। वहां से लौटने पर उसने अच्छी जलवायु की दृष्टि से याल्ता में रहने के लिये बंगला बनवाया। यहां उसकी ताल्स्ताय और गोर्की से भेंट हुई। ताल्स्ताय उसे बहुत मानता था और उसे 'गद्य का पुश्किन' कहा करता था। यहां वह क्यूप्रिन, बूनिन आदि दूसरे नामी लेखकों से भी मिला।

उसके नाटक 'समुद्री पक्षी' और 'चचा वान्या' का इस समय मास्को आर्ट थियेटर में बड़ा सफल अभिनय हुआ और नाटककार तथा अभिनेताओं के बीच बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हुआ। सन् १९०० में पूरी नाटक-कम्पनी नाटककार को उसके नाटकों का अभिनय दिखाने के लिये याल्ता आई। सन् १९०१ में प्रसिद्ध अभिनेत्री क्नीपर से उसका विवाह हो गया। सन् १९०० में वह अकेडमी का सम्मानित सदस्य (Honorary member) चुना गया किन्तु १९०२ में गोर्की को अकेडमी की सदस्यता से हटाने के विरोध में च्येखव ने कोरल्यैंको के साथ इस सदस्यता का त्याग कर दिया। यह कार्य ही बीसवीं शती के आरम्भ में उसकी बढ़ती हुई प्रगतिशीलता का प्रमाण है। १९०३ में याल्ता में उसने अपनी अन्तिम कृति 'चेरी का झुरमुट' लिखी। फिर वह वसंत में अपनी दवा के लिये बाहर गया जहां कुछ महीने बाद जर्मनी में उसकी मृत्यु हुई। उसका शव मास्को के एक मठ के कब्रिस्तान में दफनाया गया।

चेखव की रचनात्मक कृतियों का विकास दो ढंगों पर हुआ। छोटी कहानी और सजीव नाटक अपने चौबीस वर्ष के रचनात्मक जीवन में उसने विश्व-साहित्य को अपनी कृतियों के रत्नों से भर दिया जिनका समस्त संसार ने स्वागत किया। उसे यह उच्च स्थान सहसा ही नहीं प्राप्त हुआ। उसे विकास के कष्टपूर्ण मार्ग से चलना पड़ा जिसके बीच उसके विचार बराबर बदलते गए और वह नये कलात्मक रूपों की खोज में लगा रहा।

हास्यरस के पत्रों में प्रकाशित उसकी आरम्भिक कृतियाँ रूसी जीवन के हास्यात्मक अंग की छोटे चुटकुलों और कहानियों द्वारा विवृति करती हैं जिनकी अभिव्यक्ति में गम्भीरता तो नहीं है किन्तु लोकरुचि की परितुष्टि है।

सामग्री की खोज में चेखव थियेटर, मेला और लोगों के मनोरंजन-स्थल में प्रायः जाया करता था। इस प्रकार उसने अपनी निरीक्षण-शक्ति को और भी विकसित किया। १८८५ तक लिखी गई कहानियों की विविधता और परिमाण आश्चर्यजनक है। ये १२९ कहानियां जीवन के सभी अङ्गों और समाज के सभी विभागों का चित्रण करती हैं। हल्की और मनोरंजक कृतियों के अतिरिक्त उसने गंभीर कथावस्तुओं को भी चुना, जैसे 'अफसर की मृत्यु', 'मोटा और दुबला', 'अपकारग्रस्त', 'प्रिशिबेयव', 'गिरगिटान' आदि। अन्तिम कहानी के प्रिशिबेयव का—जो जासूस और मूर्ख शासक है—कानून और व्यवहार के प्रति अपना दृष्टिकोण है। सारे गांव पर उसका आतंक है और वह लोगों को गाने, सड़क पर एकत्रित होने और शाम को आग के चारों ओर बैठने से मना करता है। सन् 'अस्सी' के प्रतिक्रियावादी जमाने के पुलिस के निरंकुश शासन का वह खासा अवतार है। 'अफसर की मृत्यु' में थियेटर की गैलरी में बैठा हुआ एक छोटा अधिकारी नीचे बैठे हुए जेनरल के गंजे सिर पर छींक देता है। ठीक तरह से माफी न मांग सकने के कारण और इस अपमान के परिणाम के भय से वह डर के मारे मर जाता है। इस छोटे से चुटकुले के द्वारा च्येखव भयभीत आदमी की दासता की प्रवृत्ति की आलोचना करता है।

धीरे धीरे वह अधिक गंभीर और सामाजिक कथावस्तुओं के निकट आया। सन् 'अस्सी' के अन्त में विचारों और सार्वजनिक जीवन में परिवर्तन और उथल-पुथल (Crisis) होने से उसका लिखना कम हो गया। जहां १८८५ में उसने १२९ कहानियाँ लिखीं वहां १८८६ में ११२, १८८७ में ६६ और १८८८ केवल १२ कहानियाँ लिखीं। च्येखव ने एक पत्र में लिखा कि 'कलात्मक साहित्य केवल इसीलिये कलात्मक कहा जाता है क्योंकि वह जीवन का वैसा ही चित्रण करता है, जैसा कि वह वास्तव में है। इसकी कसौटी सचाई—प्रतिबंधहीन और ईमानदारी से पूर्ण सचाई—है।'

गोगल और चेद्रिन की आलोचनात्मक यथार्थवाद की परम्परा को जारी रखते हुए च्येखव जीवन को कुरूप बनानेवाली जीवन की सड़ी गली तुच्छताओं के विरुद्ध बराबर युद्ध करता रहा। उसकी कथावस्तु गंभीरतर और पात्र जटिल होते गए। वह क्रियाशून्य (Dull) और चालाक रूसी अधिकारी के संकीर्ण जीवन, उसके अज्ञान, बर्बरता और क्रूरता का उद्‌घाटन करता है। वह अपने समय की भ्रष्टता, रिश्वतखोरी, सामाजिक उदासीनता और नौकरशाही (Bureaucracy) के बारे में लिखता है।

वह 'भय' नामक कहानी में लिखता है कि 'मैं सामान्यतया जीवन की तुच्छताओं से भयभीत हूं जिनसे हममें से कोई अपने को नहीं छिपा सकता।' ह्रास के युग की उस विशेषता और जीवन की तुच्छताओं की इस शक्ति का च्येखव ने कुशलता से वर्णन किया है। एक एक कर जमाने के सभी मर्जों का नीचता और संकीर्णता के सभी अंगों का उसने निदान किया। पढ़ने में उसके पृष्ठ डाक्टर के रोग-इतिहास (Case-history) के समान लगते हैं। गोर्की ने लिखा कि 'लोगों में सुप्त अर्धमृत जीवन के प्रति घृणा जगाकर तुम अपनी छोटी कहानियों के द्वारा बड़ा भारी काम कर रहे हो।'

च्येखव का कोई पूर्ण जीवन-दर्शन नहीं था। एक समय उसका ताल्स्तायवाद की ओर झुकाव था। 'गरीब', 'कज्जाक' आदि कहानियाँ उसके ऐसे विचारों को प्रतिबिम्बित करता हैं। सुवोरिन को लिखे गये एक पत्र में वह बताता है कि उसके विचारों की यह मंजिल छ या सात साल तक रही। किंतु सन् 'नब्बे' के जमाने में वह इसके प्रभाव से अलग ही न हुआ प्रत्युत उसने उसकी निंदा भी की। इसका निदर्शन 'वार्ड नम्बर ६' कहानी का नायक है। यह डाक्टर है जो ताल्स्ताय के 'आत्मविकास', 'बुराई के अविरोध' आदि विचारों में विश्वास रखता है और सामाजिक बुराइयों के प्रति निष्क्रिय है। फलतः उसके संचालित अस्पताल में रोगी और भी बीमार पड़ते हैं, पीटे जाते हैं, और भूखे मर जाते हैं। वार्ड नम्बर ६ के दिमागी रोगियों का सबसे बुरा हाल है। इनमें से एक रोगी 'अविरोध' के सिद्धांत की कटु आलोचना करता है और कहता है कि यह दर्शन नहीं किन्तु आलस्य है। डाक्टर भी अपने अनुभव से इस निष्कर्ष पर पहुंच जाता है कि बाह्य स्वतंत्रता के बिना आन्तरिक स्वतन्त्रता असंभव है। जब वह स्वयं वार्ड नम्बर छ का रोगी होता है और नौकरों द्वारा पीटा जाता है तो वह 'अविरोध' के सिद्धांत की गल्ती का अनुभव करता है। निराश होकर वह सीखचों को हिलाना चाहता है किन्तु वे टस से मस भी नहीं होते।

इस कहानी से बड़ी सनसनी फैली। इसने लोगों को बंदीगृह के समान प्रतिक्रियावादी रूसी शासन का ध्यान दिलाया। लेनिन की बहन ने लिखा है कि

इस नई कहानी को पढ़कर लेनिन ने कहा कि 'पिछली रात इस कहानी को समाप्त करने के बाद मुझे बड़ा बुरा लगा। मैं अपने कमरे में न रह सका और बाहर चला गया। मुझे ऐसा मालूम होता था कि मैं ही वार्ड नम्बर छ में कैद हूँ।'

च्येखव ने ताल्स्तायवाद पर बाद में लिखा कि 'शाकाहार और नैतिक पवित्रता की अपेक्षा बिजली और भाप में मानवता के प्रति अधिक प्रेम है।' वह ताल्स्तायवादियों पर व्यंग किया करता था और कहता था कि रोटी और खीरा खाकर ये लोग समझते हैं कि हम पूर्णता को पहुँच गए हैं।

१८९८ ताल्स्तायवाद के दूसरे अंग की समीक्षा 'गूजबेरी की झाड़ी' नामक कहानी में हुई है। एक छोटे सरकारी क्लर्क की सबसे बड़ी इच्छा जायदाद खरीदने की है जहाँ पर वह गूजबेरी पैदा कर सके। उसका यह स्वप्न पूरा होता है। किन्तु जायदाद का स्वामी बनने पर उसका चरित्र और स्वभाव ही बदल जाता है। वह अन्य जमींदारों की तरह किसानों को शारीरिक दंड देने की आवश्यकता बताने लगता है। वह अपनी जायदाद की देखभाल और अपने स्वार्थों में तन्मय हो जाता है और बौद्धिक तथा सामाजिक कार्यों में उसकी कोई रुचि नहीं रह जाती।

भरे पेट वालों की भूखों के प्रति उदासीनता च्येखव को ताल्स्तायवाद की आलोचना का एक और अवसर देती है। यह लोगों में अहंभाव भरता है और उनको अपने घेरे में बंद रखता है च्येखव कहता है कि, अपनी स्वतन्त्र आत्मा (Spirit) के गुण और शक्ति के विकास के लिये मनुष्य को केवल तीन एकड़ जमीन ही न चाहिए प्रत्युत उसे सारे संसार और समग्र प्रकृति का अवकाश चाहिए। मनुष्य का कर्त्तव्य अपने 'अहं' में संकुचित होकर बैठ जाना और निष्क्रियता नहीं है प्रत्युत सामाजिक बुराई के प्रति युद्ध और उन्नति है।

च्येखव 'छोटे कामों' के वाद से भी न बच सका। उस समय यह प्रायः कहा जाता था कि हमारा युग बड़े कार्यों का नहीं है। पढ़े लिखे अधिक से अधिक यही कह सकते हैं कि वे थोड़ा सामाजिक काम करें और किसानों को पढ़ना-लिखना सिखा दें। च्येखव इन कार्यों की उपादेयता को मानता था फिर भी इनको पर्याप्त नहीं समझता था।

'मेरा जीवन'(१८९६)एक लेखक की कहानी है जिसका ताल्स्तायवाद की ओर झुकाव है, जो अपने हाथों द्वारा मेहनत करने में विश्वास करता है और बौद्धिक कार्यों को अनावश्यक और हानिकारक समझता है। वह अपने परिवार को छोड़ कर एक प्रतिभाशाली लड़की के साथ आत्मपवित्रता की खोज में लगता है। थोड़े ही दिनों बाद उनको मालूम हो जाता है कि उनका किसानों का जीवन बालू

की भीत है। न तो वे किसानों को समझ पाते हैं और न किसान उनको समझ पाते हैं। किसान-जीवन की कठिनाइयों और संस्कृति के अभाव को स्वीकार कर एक प्रकार से वे उस दशा का समर्थन करते हैं, और यदि वे स्वयं गाँव के ढंग का जीवन व्यतीत भी करते जायँ तो उससे क्या सिद्ध होगा। सागर में एक बूंद! यहाँ पर युद्ध के अन्य प्रबल साहसपूर्ण और शीघ्र फलित होनेवाले उपायों की आवश्यकता है। यदि तुम सचमुच उपयोगी बनना चाहते हो तो दैनिक जीवन के संकुचित घेरे से बाहर निकलो, जनता पर तात्कालिक प्रभाव डालने की कोशिश करो। 'छोटे काम' और ताल्स्तायवाद की निंदा के साथ यह कहानी छोटे नगरों के कारीगर और अन्य काम करनेवालों की कठिनाइयों का चित्रण करती है।

च्येखव मजदूरों के भविष्य और उनकी समस्याओं से दूर ही रहा। फिर भी अपने समय की विषमताओं को समझने की इच्छा ने उसका ध्यान पूंजीवाद की ओर खींचा। 'व्यावहारिक अनुभव का दृष्टांत' (१८६८) कहानी की यही कथावस्तु है। वह पूंजीवाद को लाल आंखोंवाला शैतान कहता है जो मालिक और मजदूर दोनों पर शासन करता है और दोनों को धोखा देता है। पूंजीवाद के नाशक प्रभाव को देखता हुआ भी उसका आदर्शलोक (Utopia) में विश्वास था मानों पूंजीवादी इसकी बुराइयों को समझकर इसे अपने आप छोड़ देंगे।

सन् 'नब्बे' के अन्त में वह समाज के विभिन्न वर्गों के सामाजिक जीवन की निर्णायक शक्तियों का बड़ी सावधानी से अधिकाधिक अध्ययन करने लगा। 'किसान' नामक कहानी में उसने फिर किसानों की ओर ध्यान दिया। इसमें ग्राम-जीवन की गरीबी, बच्चों की मृत्यु, माता-पिता की उदासीनता, खराब खाना और शासन तथा अफसरों की लापरवाही का वर्णन है। वह ग्राम-जीवन की सारी दुर्दशा का चित्रण करता है जिसपर कि ताल्स्ताय जनवादियों (नरोदनिकी) ने आदर्श का मुलम्मा चढ़ाया था। अन्य कहानियों मे उसने कुलक या जमींदार-किसान-जीवन का चित्रण किया है।

गोगल के समान च्येखव बड़े प्रभावपूर्ण ढंग से मनुष्य की इस संकीर्णता और नीचता का जहाँ कहीं उसे देखता है उद्घाटन करता है। अपने समय के विचारकों (Intellectuals) की आदत और मनस्थिति की संकीर्णता की उसने तीव्र निंदा की है। 'योनिच' कहानी (१८६८) के नायक डाक्टर स्तारत्सेव के रूप में इसी वर्ग के प्रतिनिधि का वर्णन है। घर-गृहस्थी की संकीर्णताएं और तुच्छताएं संस्कृत व्यक्ति को भी दलदल में फँसा देती हैं यदि उसके मन में इनके विरोध की शक्ति न हुई। पढ़ा लिखा और कार्यशील डाक्टर मुफस्सिल शहर के वातावरण में पड़कर लड़ाकू और आत्मसेवी बन जाता है। धीरे-धीरे उसे मालूम हो जाता है कि पड़ोसियों से विज्ञान या राजनीति जैसी

प्रभाव भाषा की समास-शक्ति और शब्दों की प्रयोग-शक्ति से और भी बढ़ जाता है।

च्येखव की अंतिम कृति 'दुलहिन' कहानी है। इससे लेखक के विचार और मनोदृष्टि का बहुत पता चलता है। च्येखव के निराशावादी होने की धारणा के अत्यन्त व्यापक होने पर भी वस्तुस्थिति, उसकी रचनाओं में व्यथा और निराशा के होने पर भी उसमें उदासीनता, समर्पण या वस्तुस्थिति के सामने सिर झुकाने की भावना नहीं है। उज्ज्वल भविष्य की आशा और विश्वास से नवीन आदर्श की प्राप्ति की उत्कट इच्छा उसमें दिखाई पड़ती है। उसकी कृतियों में (नवीन) ज्ञानपूर्ण, प्रेमपूर्ण जीवन और पवित्र, सबल और स्वतन्त्र जनता का स्वप्न है। लेखक ने केवल इसका स्वप्न ही न देखा उसका इसमें पूरा विश्वास भी था। यह कहानी इसका सर्वोत्तम निदर्शन है। नायिका नाद्या कहती है कि 'ओह यदि नवीन उज्ज्वल जीवन जल्दी आ सकता और मनुष्य भाग्य से नजर मिलाकर उसे साहस के साथ देख सकता और अपने को ठीक (Right) आनंदपूर्ण और स्वतन्त्र मान सकता। देर से या जल्दी इस प्रकार का जीवन आयेगा अवश्य।'

च्येखव की छोटी कहानियों की विशेषताओं में उसकी यथार्थवादी शैली भी है। अपनी प्रौढ़ावस्था में वह बाहरी प्रभाव को छोड़कर जीवन के गंभीर सार-तत्वों की ओर उन्मुख हुआ और उसके ऊपरी भड़कीले आवरणों को हटाकर ईमानदारी और सच्चाई के साथ उसे दिखाया। किन्तु उसने अपने को इन आवरणों और सत्य तक ही सीमित न रखा। अनुभवी मनोवैज्ञानिकों की तरह वह अपने पात्रों के मानसिक जीवन में पैठकर उनके बनाव-सिंगार (Make up) का उद्घाटन करता है। लेखक के जीवन और लोगों के प्रति विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण में उसकी वैज्ञानिक शिक्षा का भी बड़ा हाथ है। वह बच्चे, बूढ़े, स्त्री-पुरुष सभी (यहाँ तक कि पशुओं) के विचार और भाव को ठीक ठीक अभिव्यक्ति देना जानता है।

कम से कम शब्दों में अधिक से अधिक कहने की कला में च्येखव सबसे ज्यादा सफल हुआ। उसके लिये समास या संक्षेप और प्रतिभा पर्यायवाची हैं। पाठकों के प्रति भी उसका दृष्टिकोण नया था। वह चाहता था कि लेखक द्वारा उद्दीप्त किये जाने पर पाठक की कल्पना भी काम करे। इस प्रकार वह किसी व्यक्ति के बारे में केवल थोड़ी-सी विशेषताएं (प्रायः असामान्य) बतायेगा जिससे कि पाठक शेष चित्र अपने आप बना सके। इस युक्ति से उसने पूर्ववर्ती लेखकों के पात्र या घटना के लम्बे वर्णनों को जो सर्वप्रचलित (Common place) हो गए थे घटा दिया या बिल्कुल हटा दिया। वह पात्रों की संख्या भी अधिक नहीं रखता। कभी कभी पूरी कहानियों में दो या तीन पात्र होते हैं। वह सारा ध्यान

सम्पूर्ण रूप पर केंद्रित करता है। कहानी सम्य रूप से शुरू होती है, और अनावश्यक रूप से ही खत्म होती है। कथोपकथन इसका महत्वपूर्ण अंग है। इसकी दूसरी विशेषता 'कहानी के अंत का अधूरापन' है जिससे कि लेखक कार्यनिर्माण और घटनाओं के मितव्ययीकरण (Economy of form) में सफल होता है।

इसकी रचना में किसी प्रकार की कृत्रिमता नहीं है। यह वास्तविक जीवन के चित्रण में सफल है। इसकी कहानियों का अंत संक्षिप्त परंतु बड़ा ही आकर्षक (Striking) है।

इसकी कला रूस और अन्य देशों की समझ में आ जानेवाली है। फिर भी जानबूझकर सरल नहीं बनाई गई है। उसका कहना कि 'शिथिल (Bad) रचना के निर्माण होने से ही चित्र भी बनता है।' फ्रांस शिल्पी रोदिन (Rodin) के मूर्ति बनाने के ढंग की याद दिलाता है। 'संगमरमर को लेकर तुम नष्ट कर दो जो जिसकी जरूरत नहीं है।'

कला संबंध के लिये चेखव एक ओर तो सबसे आवश्यक चुनता हुआ या ठीक (Exact) और अभिव्यंजनापूर्ण शब्द चुनता था और दूसरी ओर सरल रचनाविन्यास की चेष्टा करता था। इसलिये उसने गोर्की को रचनात्मक विशेषता और प्रभाव निर्माण देने की सलाह दी। रचना का प्रभाव तात्कालिक होना चाहिए, लेखक को वस्तुओं को सामान्य जनों की तरह न देखना चाहिए, किन्तु कलाकार की दृष्टि से देखना चाहिये। चेखव की उपमाएं और रूपक नवीन, मौलिक और अप्रत्याशित हैं। उसका शब्द-भंडार बड़ा व्यापक है जिसमें वैज्ञानिक शब्दावली से लेकर सामान्य लोगों की 'कहावत' Slang भी हैं। पात्रों के अनुरूप भाषा का परिवर्तन, और शैली के अपनेपन में पूर्णता है। भाषा की अपनी संगीतात्मकता है और पाठकों में उत्कट भाव जगा सकती है। लेखक वस्तु का वर्णन न कर उससे जो भाव या संवेदन जगता है उसे पाठकों को बताता है। तालस्ताय चेखव की कला की संवेदनात्मक चित्रण से तुलना करता है। चेखव अपनी कला की सफलता इसी में मानता था कि 'पाठक आंख मूंदने पर कल्पित दृश्य की अपने सामने तस्वीर ला सके।'

चेखव सबसे बड़ा रूसी यथार्थवादी माना जा सकता है। छोटी कहानी उसकी कला का मूल रूप है। इसके द्वारा उसने उस युग की संकीर्णता (Vulgarity) के सारे रंग, और सामाजिक जीवन का पूरा चित्र प्रस्तुत किया। फिर भी छोटी कहानी की अपनी सीमा है और इसके द्वारा पात्र का पूरा मनोवैज्ञानिक विश्लेषण नहीं प्रस्तुत किया जा सकता। इसके लिये तथा एक पूरे सामाजिक वर्ग की विशेषताओं के चित्रण के लिये उसने साहित्य के दूसरे प्रकार नाटक को चुना।

कहानियों के साथ साथ च्येखव ने कई नाटक लिखे—'इवानोव' (१८७७), 'समुद्री पक्षी' (१८९६), 'चचा वान्या' (१८९७), 'वन की आत्मा, (Wood Spirit, १८९७), 'तीन बहनें' (१९०१), 'चेरी का झुरमुट' (१९०३)। इवानोव सन् 'अस्सी' के विचारवानों (Intellectuals) के जीवन का करुण नाटक है जो कि जीवन की बड़ी बड़ी योजनाएं बनाते हैं किन्तु प्रतिक्रियावादी प्रवृत्तियों से प्रसूत बाधाओं के सामने सिर झुका देते हैं। नाटककार इस नायक में उस समय के विचारवानों की सारी निराशा भर देता है।

इन नाटकों की कथावस्तु मुफस्सिल के विचारवानों की किस्मत है, जिनके जीवन में न तो कोई गम्भीर उद्देश्य है और न जिनका कोई भविष्य ही है। इसका अत्यन्त प्रभावपूर्ण चित्र 'चचा वान्या' में मिलता है। च्येखव की नाटकीय कला 'चेरी के झुरमुट' में अपनी चरम सीमा पर पहुँच गई है।

च्येखव ने गाँव के अभिजातवर्ग (Gentry) के भग्न और नष्ट होने का चित्रण कई कहानियों में किया है। 'चेरी का झुरमुट' की भी कथावस्तु यही है। इस वर्ग के आर्थिक नाश, नैतिक तथा आदर्शवादीय (Ideological) व्यर्थता, और नई परिस्थितियों में जीवन-यापन की अक्षमता का बहुत बड़े पट पर चित्र प्रस्तुत किया गया है। इस वर्ग के अनिवार्य नाश का चित्रण नाटक का मुख्य उद्देश्य है। इस प्रकार नाटक अभिजातवर्ग के ग्राम जीवन का मर्सिया बन गया है।

हमें इस प्रकार के एक ठेठ परिवार का दृश्य दिखाया जाता है। इसकी जमींदारी में चेरी का झुरमुट है। जायदाद की दशा बड़ी शोचनीय है। यह गिरवीं है और यदि ब्याज न दिया गया तो यह नीलाम पर चढ़ा दी जायगी। लोपाकिन (Lopakin) जायदाद के मालिक को उद्धार का ठीक रास्ता बताता है कि इन झुरमुटों को बाँट कर किराये पर उठा दिया जाय। किन्तु मालिकों की दृष्टि में इस प्रकार के कार्य से उनके कुल का अपमान हो जायगा और उनकी प्रतिष्ठा नष्ट हो जायगी। अभिजातवर्ग की इज्जत, सम्मान आदि की अपनी भावना वस्तुस्थिति की आवश्यकता पर परदा डाल देती है।

इस नाटक में वर्ग-संघर्ष का उत्कट रूप स्पष्ट नहीं है। स्वयं नाटककार को लोपाकिन के भविष्य के खतरनाक रूप और कार्य का कोई आभास न था और त्रोफिमोव भी इससे मुग्ध है। फिर भी नाटक में आशावादिता का स्वर है। त्रोफिमोव और अन्ना के शब्दों में नाटककार नये जीवन का स्वागत करता है। इन दोनों पात्रों का मिलन अभिजातवर्ग के जीवनयापन के ढंग के अन्त और नवीन उज्ज्वल सिद्धान्तपूर्ण जीवन के उदय का प्रतीक है।

संक्षेप में चेरी का झुरमुट मनोवैज्ञानिक घरेलू नाटक है। इसका वस्तु-विषय सामाजिक है, शैली यथार्थवादिनी और रचना प्रगीतात्मक है। उसकी विकसित नाटकीय कला का प्रौढ़ रूप इस नाटक में देखने को मिलता है। मास्को आर्ट थियेटर के साथ च्येखव का जो घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है उसकी याद आज भी थियेटर की यवनिका पर बने हुए समुद्री-पक्षी (Sea-gull) के प्रतीक-रूप में विद्यमान है।

सन् अस्सी और नब्बे में रंगमंच की दशा अत्यन्त शोचनीय थी। राजनीतिक उदासीनता, जनता की संकीर्ण घरेलू रुचि की तृप्ति की चेष्टा, सीमित कथावस्तुएँ, मौलिकता का अभाव, चरित्र-चित्रण में मनोवैज्ञानिकता की कमी, बाहरी प्रभावों की कोशिश और उच्चरुचि का अभाव, उस समय के रंगमंच की दुर्बलताएँ थीं।

च्येखव इस क्षेत्र में भी नवीनता लेकर आया। वह अपने समय के दर्शकों के बारे में कहता है कि वे चाहते थे कि 'नायक और नायिकाएँ रंगमंच पर अत्यन्त प्रभावपूर्ण सिद्ध हों। किन्तु वास्तविक जीवन में लोग न एक दूसरे को गोली से मारा करते हैं न आत्महत्या करते हैं, और न हर मिनट वे प्रेम-व्यापार का विश्लेषण किया करते हैं और न वे बराबर बुद्धिमानी की बातें ही कहा करते हैं। वे अधिकतर खाने-पीने और गप्प करने में लगे रहते हैं। यही चीज़ें रंगमंच पर देखी जानी चाहिए। ऐसा नाटक रचा जाना चाहिए जिसमें लोग आएँ-जाएँ, बात करें और ताश खेलें। यह सब इसलिये नहीं कि नाटककार ऐसा चाहता है बल्कि इसलिये कि वास्तविक जीवन में ऐसा ही होता है।'...... इसलिये च्येखव कृत्रिम कथावस्तु, प्रभाव डालने के थियेटरी ढंग और युक्तियों के विरुद्ध था। जीवनोपम चित्र के सरल अंकन में मौलिकता का बहिष्कार नहीं है और कथा की समाप्ति के लिये यह भी आवश्यक नहीं है कि या तो नायक की शादी हो जाय और या वह आत्महत्या कर ले।

इस प्रकार उसके नाटकों की कहानी अत्यन्त सरल और उनकी कथावस्तु में दुर्बलता होती है, और न बाधाओं के विरुद्ध नायक का संघर्ष ही च्येखव में अधिक देखने को मिलता है। उनमें तीव्र उतार या अपकर्ष नहीं है। कथा-

भी उसी विषय पर एक नाटक लिखा और उसे 'भग्नहृदय घर' (१९४४) कहा।' च्येखव का नाम छोटी कहानी की उच्चकलात्मकता का पर्याय बन गया।

× × ×

(उन्नीसवीं शती की बहुत बड़ी देन है) रूसकी समाजवादी संस्कृति के विकास को ठीक-ठीक समझने के लिये इसका अध्ययन अत्यन्त आवश्यक है। उन्नीसवीं शतो की सांस्कृतिक विरासत की गोर्की ने अपूर्व समीक्षा (या मूल्यांकन) प्रस्तुत की है—

'रूस की आत्मिक शक्ति की पूर्ण अभिव्यक्ति हमारे गर्व का आधार महाकवि पुश्किन, उसके साथ जादूगर-सा ग्लिका और प्यारा ब्र्लोफ, अपने और दूसरों के प्रति निष्करुण गोगल, अभिलाषाओं से भरा लरमन्तोफ, उदास तुर्गेन्येव, क्रुद्ध नेक्रासोफ, महान् विद्रोही ताल्स्ताय और अन्त में प्रगीत मुक्तक कवि (Lyricist) चयाकोव्स्की, और भाषा का इन्द्रजाली ओस्त्रोव्स्की—सब एक दूसरे से भिन्न। ऐसा केवल रूस में ही हो सकता है। रूस में सौ वर्षों से कम में ही इन सबका आविर्भाव हुआ। हमें केवल प्रतिभा का यह वैभव ही नहीं, प्रत्युत इसकी विविधता भी—जिसकी ओर हमारे इतिहास सम्यक् ध्यान नहीं देते—हर्षपूर्ण गर्व से पागल बना देती है।'

उन्नीसवीं शताब्दी का अन्त और बीसवीं का आरम्भ

स्वतंत्रता-आन्दोलन का विकास

आधुनिक रूसी इतिहास मेहनतकश जनता के आन्दोलन के विकास की तीन निश्चित मंजिलें रखता है।

(१) 'डिसेम्ब्रिस्ट' के रूप में उच्च या अभिजातवर्ग से आए हुए प्रगतिशील लोगों का युग (१८२५ से १८६१ तक)।

(२) मध्यवर्गीय (रज़्नोचिन्त्सी) प्रजातन्त्रात्मक आन्दोलन का युग जब साधारण या सामान्य स्थिति अथवा किसानों या शोषित के रूप में सामने आए (१८६१ से १८९५ तक)।

(३) सामाजिक एवं राजनीतिक शक्ति के रूप में श्रमिकवर्ग के उदय का युग और सोशल-डेमोक्रेसी या मजदूरवर्ग के विचारों का आविर्भाव (१८९५ से आगे)। मार्क्सवादियों का वैज्ञानिक सामाजिक सिद्धान्तों एवं क्रान्तिकारी विचारों का भी विकास हुआ और शीघ्र ही वे जनात्मक क्रांतिकारी आन्दोलन में परिवर्तित हो गए, अन्त में सन् १९१७ की क्रांति के बाद से सर्वथा नवीन युग का आरम्भ होता है जिसमें सोवियत् संघ के नए साहित्य की नींव डाली गई जिसका सम्बन्ध केवल रूसी साहित्य से ही नहीं वरन संघ की स्लाव तथा अन्य सभी जातियों के साहित्य से है।

श्रमिकवर्ग की प्रगति

उन्नीसवीं शती के उत्तरकाल और बीसवीं शती के आरम्भिक काल के साहित्य का आविर्भाव सामाजिक विकास के अत्यन्त जटिल युग में हुआ। उसकी अत्यन्त संक्षिप्त व्याख्या यहाँ अप्रासंगिक न होगी।

सन् सत्तर (१८७०) के ज़माने में श्रमिकवर्ग के कई संगठन बनाए जाने लगे जैसे 'श्रमिकों का सामाजिक क्रांतिकारी संघ' (१८७५), और क्रांतिकारी 'श्रमिकों का उत्तरीय संघ' (१८७८), 'श्रमिकों का उद्धार' वर्ग की स्थापना सन् १८८३ में प्लेख़ानोव ने जिनेवा में की। सन् १८९३ में लेनिन ने बहुत से मार्क्सवादी संघों को एक में मिलाया और उसे 'श्रमिकवर्ग के स्वातंत्र्य-युद्ध का संघ' कहा। अन्त में 'रूसी सोशल डिमोक्रेटिक पार्टी' ने (जो बाद में कम्यूनिष्ट पार्टी के नाम से विख्यात हुई) १८९८ में पहली कांग्रेस बुलाई।

के लिए यह तीव्र राजनीतिक और दार्शनिक वादविवाद का युग था। १९०५-१९०७ के बाद आनेवाले तीव्र प्रतिक्रिया के युग में क्रांतिकारी आन्दोलन के मध्यम वर्ग के बहुत से समर्थक उससे अलग हो गए। बहुत से विचारशील वास्तविकता से बचने के लिए 'रहस्यवाद' और 'शुद्ध कला' की शरण में भागे। दूसरों ने—जो कि प्रतिक्रियावादी पार्टी के थे—क्रांतिकारी आन्दोलन के सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक पक्षों के अवरोध के लिये क़दम उठाया और इस उद्देश्य से पत्रपत्रिकाओं की व्यवस्था की।

साहित्य की समस्याएं

इस प्रकार सभी ईमानदार लेखकों के सामने नई समस्याएं थीं। नए लेखक आगे आए। सामाजिक संग्राम की इस निर्णयात्मक मंज़िल में साहित्य में भी वैपरीत्य और वैषम्य के दर्शन होते हैं। फिर भी रूसी क्लासिकल साहित्य की अपनी महत्त्वपूर्ण परम्परा बन गई थी और नवीन प्रतिभा ने अतीत के संचित अनुभव में जो कुछ अच्छा था उसकी अवहेलना नहीं की।

रूसी साहित्य का इतिहास केवल यही नहीं बताता कि उसके बीच बहुत से उच्चकोटि के मानवतावादी लेखक हुए जो अपने वर्ग के संकीर्ण हितों से ऊपर उठे और जिन्होंने अपने समय की सामाजिक बुराइयों की कलई खोली, प्रत्युत ऐसे लेखकों की शृंखला दिखाता है जिन्होंने जन-सेवा की अभिलाषा से जेल, निर्वासन, गरीबी, निराशा और मृत्यु तक को अपनाया। ब्येलिंस्की, नेक्रासोव आदि बहुत से लेखकों ने लेखक के जनता से अलगाव का बारबार उल्लेख किया है और उस युग के लिये अभिलाषा प्रकट की है जब कि साहित्य जनता की भावना और अनुभवों की सच्ची और पूरी अभिव्यञ्जना करेगा, और जब वह सचमुच समग्र जनता की सम्पत्ति बन जायगा। जब तक निरंकुश शासन ने शिक्षा के प्रसार को रोक रखा और सांस्कृतिक जीवन में सामान्य जनता का सहयोग न होने दिया तब तक लेखक के जनता के प्रति अत्यन्त सहानुभूतिपूर्ण होने पर भी उसके और जनता के बीच बड़ी खाई बनी ही रही। लेनिन ने इस समय लिखा कि 'कलाकार ताल्स्ताय को रूस में भी बहुत कम लोग जानते हैं। उनकी महान् कृतियों से सबको अवगत कराने के लिए यह आवश्यक है कि उस सामाजिक व्यवस्था के विरुद्ध युद्ध किया जाय जिसने करोड़ों को अज्ञान, अन्धकार और गरीबी में डाल रक्खा है। इसके लिये सामाजिक क्रांति आवश्यक है।' क्रांति से पहले के समय के लेखकों की यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण समस्या थी।

सन् नब्बे और बीसवीं शती के आरम्भ का साहित्य

सन् नब्बे के ज़माने की स्थिति अत्यन्त जटिल थी। एक ओर ताल्स्ताय,

[illegible], और कोरोलेन्को जैसे [illegible] परन्तु लेखक [illegible] जो [illegible] थे और [illegible] नहीं [illegible] थे। [illegible] ने १८९९ में '[illegible]' [illegible]। [illegible] 'विद्यार्थी' जैसी [illegible] (१८९३–९४) [illegible]। [illegible] जैसे [illegible] (जिसने अपनी [illegible] १८९४ में [illegible]) और मैक्सिम गोर्की (जिसकी पहली कहानी १८९२ में छपी) [illegible]। [illegible] नई प्रवृत्ति (जिसे [illegible]) [illegible]। साहित्य में [illegible] परिस्थिति ([illegible]) [illegible]। एक पुस्तक जिसने [illegible] के [illegible] में कोई [illegible] नहीं [illegible]' ([illegible], १८९३)।

जो लोग प्राचीन [illegible] में [illegible] आन्दोलन में [illegible] था। [illegible], वे इन नई उठती हुई शक्तियों के महत्त्व को नहीं समझ पा रहे थे। वे इतनी दूर नहीं देख सकते थे कि किस प्रकार ये शक्तियाँ १९०५ में और इससे भी बढ़ कर १९१७ में विजयी होंगी, फिर भी [illegible] साहित्य इस बात का आभास दे रहा था कि किसी नई चीज़ का प्रादुर्भाव हो रहा है, और [illegible] नई दिशा की खोज [illegible] यद्यपि अभी तक कोई इन समस्याओं का उत्तर न दे सका था।

इस प्रकार की एक विशेषता यथार्थवाद से असन्तोष और उसके विरुद्ध प्रवृत्ति थी। प्रतीकवादी आन्दोलन (जिसका अगुआ प्रतिक्रियावादी मेरेज़कोव्स्की था) इसका अच्छा उदाहरण है।

ब्यूनिन और कूप्रिन जैसे दूसरे लेखकों ने यथार्थवाद और 'क्लासिकल' पद्धति का त्याग नहीं किया किन्तु उन्होंने इस नई परिस्थिति के अनुरूप बनाने की चेष्टा नहीं की। यह स्वाभाविक था कि ताल्स्ताय जैसा लेखक अपना दृष्टिकोण न बदल सका और उसकी बाद की पुस्तकों में उसके (अपने विकास के बीच प्राप्त) पहले के विचारों की पुनरावृत्ति हुई है। चेखव ने इस कर्त्तव्य-विमूढ़ता की स्पष्ट अभिव्यक्ति की है। "हम लिखते हैं जीवन के विषय में जैसा कि वह है किन्तु उससे आगे एक शब्द भी नहीं...हमारा न तो कोई तात्कालिक और न कोई परम उद्देश्य है। हमारी आत्माएँ बिल्कुल शून्य हैं।" यद्यपि यह कथन चेखव की कृतियों पर चरितार्थ नहीं होता फिर भी उस समय की बहुत-सी रचनाओं पर लागू होता है। कोरोल्येन्को भी एक नई दिशा की खोज (जो उस समय तक नहीं प्राप्त हो सकी थी) के बारे में कह रहा है 'हम उदात्त नायक की खोज में न पड़कर यथार्थ मनुष्य की खोज में हैं, साहसपूर्ण कृत्यों की हमें खोज नहीं प्रत्युत आत्मा

के आन्दोलन की जो आवश्यक नहीं कि बहुत उच्च या प्रशंसनीय हो किन्तु जो सीधी (Dirct) हो......।'

इस प्रकार 'क्लासिकल' परम्परा के प्रतिनिधियों ने देखा कि इतना ही पर्याप्त नहीं है और यह अनुभव किया कि साहित्य के जीवन के समकक्ष आने के लिये और लेखक को जीवन के तात्विक वैषम्य की अभिव्यक्ति में समर्थ होने के लिये साहित्य में किसी नई चीज़ की आवश्यकता है। साहित्य के नए कर्त्तव्यों का आभास मैक्सिम गोर्की को मिला। उसकी कृतियों में हमें इन कर्त्तव्यों का प्रवचन और उनकी कलात्मक पूर्त्ति दोनों देखने को मिलती हैं। गोर्की ने 'क्लासिकल' साहित्य की विशेषता और उसके उद्देश्य के बारे में बहुत कुछ लिखा है और वह इसे समर्थ सामाजिक शक्ति मानता था। फिर भी एक नए दृष्टिकोण की आवश्यकता को उसने काफी शुरू में ही मान लिया था। उसने यथार्थवाद को नहीं छोड़ा किन्तु लेखकों से उसकी माँग थी कि वे अपने को जीवन के यथातथ्य चित्रण तक ही सीमित न रखें प्रत्युत अपनी रचनाओं में उन आदर्शों का समावेश करें जो कि प्रगतिशील युद्ध के इतिहास के बीच आविर्भूत हो चुके हैं। इसमें उसने यथार्थवाद और स्वच्छंदतावाद दोनों के सिद्धान्तों को एक में मिला दिया और जीवन-दर्शन और कर्त्तव्याकर्त्तव्य के विषय में बाह्यार्थता या तटस्थता का ढोंग न रचकर साहस के साथ अपने पक्ष और सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया, १८६६ में उसने लिखा—

'हमारे चारों ओर जीवन में खलबलाहट है। नई भावनाएँ जग रही हैं, नई साहसपूर्ण माँगें सामने आ रही हैं। नए मनुष्य का जन्म हो रहा है जो पाठक भी है अत्यन्त जिज्ञासु है और पुस्तकों का भूखा है। यह नया मनुष्य जीवन और आत्मा के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रश्नों का जवाब माँगता है। यह जानना चाहता है कि सत्य और न्याय कहाँ है, कहाँ दोस्त मिलेंगे और कौन दुश्मन है।'

साहित्य का मुख्य काम इस नए मनुष्य की प्रतिकृति उपस्थित करना था—समाजवादी भविष्य के सेनानी की प्रतिमा, इस प्रतिकृति में यथार्थवाद और स्वच्छंदतावाद की विशेषताएँ एक में मिलीं क्योंकि उद्देश्य केवल वास्तविक संघर्ष की अभिव्यक्ति न होकर भविष्य के परिणाम और आदर्श का समावेश भी था जिसके लिये वह (सेनानी) लड़ रहा था।

संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया जाता है। उसके जीवन और कृतियों में उसके युग की समस्याएँ, प्राचीन विरासत का मूल्यांकन, और नए की तय्यारियां स्पष्ट रूप से मूर्तिमान हैं।

अलेक्सी मैक्सीमोविच पेश्कोफ (मैकिसम गोर्की, १८६८-१९३६)

गोर्की का जन्म वाल्गा पर बसे निज्नी नोवोगोरद में (जो गोर्की के नाम से विख्यात है) हुआ था, गोर्की जब चार बरस का था उसके पिता की मृत्यु हो गई और उसका पालन नाना के परिवार में हुआ जहाँ कि रंग-साज का कारबार था, गोर्की की नानी बहुत पढ़ी-लिखी तो न थी फिर भी अत्यन्त दृढ़ और प्रेमपूर्ण थी, गोर्की का आरम्भिक विकास उसकी जन-कथाओं और जन-गीतों से बहुत प्रभावित हुआ था। परिवार का वातावरण बड़ों के अत्याचार, छोटे व्यापारियों की नीचता, घरेलू लड़ाइयाँ (जिनमें हाथा-पाई की नौबत प्रायः आ जाती थी) और धार्मिक ढोंग से पूर्ण था। नाना का व्यापार कुछ चल नहीं रहा था, जब गोर्की प्राइमरी स्कूल में पढ़ता था तो दो-चार पैसों के लिये वह चिथड़े आदि इकट्ठा करके बेचा करता था। थोड़ी ही उम्र में उसे स्कूल छोड़ना पड़ा और वह 'ड्राफ्ट्समैन' के यहाँ नौकर रखा गया जो उससे झाड़ू लगाने और बर्तन साफ़ करने का काम लेता था। इस मालिक से भाग कर वह नदी के किनारे रहने लगा और ग्यारह वर्ष की अवस्था में एक 'स्टीमर' पर रसोइये का नौकर हो गया। यह गोर्की का सौभाग्य था कि इस रसोइये का छोटा सा पुस्तकालय था और वह रसोइयाँ गोर्की से जोर-जोर से पढ़वा कर सुनता था और उसे अध्ययन के लिये उत्साहित करता था।

गोर्की का शेष बचपन तरह-तरह का काम करते और एक जगह से दूसरी जगह घूमते हुए बीता, उसने नानबाई की दुकान, रेल, मछलीवाले के यहाँ, और साधारण मजदूर के समान भी काम किया, फिर भी वह बराबर पढ़ता रहा। अन्त में (१८८९) इतना पढ़ गया कि निज्नी नोवोगोरद में एक वकील का मुंशी बन गया।

गोर्की के बचपन और जवानी की कथा उसकी विख्यात त्रयी 'बचपन', 'मनुष्यों के बीच में' और 'मेरी यूनिवर्सिटियाँ', में मिलती है। इन पुस्तकों में वातावरण और मनुष्यों का बड़ा रोचक वर्णन और विशेषतया उसकी नानी का चरित्र विश्व-साहित्य का बड़ा सुन्दर चित्र है। लेखक के बचपन से लेकर बौद्धिक विकास की कथा के ये ग्रंथ अनुपम रेकार्ड हैं। गोर्की के लिये साहित्य अनाकर्षक वास्तविकता से विश्रान्ति देनेवाला था। वह उन पुस्तकों का उल्लेख

करता है जिनका कि उस पर प्रभाव पड़ा और वह लेखक बनने की अपनी आरम्भिक कोशिशों की पूरी चर्चा करता है।

शुरू में उसका लिखने का विचार कविताओं तक ही सीमित था। उसकी कुछ कविताएँ कोरोल्येन्को को दिखाई गईं और उसने उनकी ऐसी कड़ी आलोचना की कि गोर्की ने दो साल तक लिखना ही बन्द कर दिया।

१८९१ में उसने देश की पहली लम्बी पैदल यात्रा की जिससे कि उसे देश का, किसानों की ज़िन्दगी का, शहर के मज़दूरों, अवारा और भिखमंगों का व्यापक ज्ञान हुआ। शारीरिक परिश्रम द्वारा रोजी कमाते वह इस यात्रा में चलता गया और वाल्गा, डॉन, यूक्रेन,बेसारेबिया, आडेसा, क्रीमिया होता हुआ अन्त में तिफ्लिस पहुँचा। इस यात्रा में उसे बहुमूल्य सामग्री प्राप्त हुई जिसका बाद में उसने 'मकार चूद्रा' 'च्येलकश' और 'बुढ़िया इज़रगिल' आदि रचनाओं में उपयोग किया।

तिफलिस के स्थानीय विचारशीलों (Intellectual) में एक अलेक्जेंडर मेफोद्येविच कलूजिन नाम का विद्यार्थी था जो अपनी राजनीतिक कारवाइयों के कारण हाल ही में सज़ा काट कर लौटा था, इस व्यक्ति ने गोर्की को साहित्यिक जीवन के शुरू करने में मदद दी और स्थानीय पत्र में (१८९२) गोर्की की पहली कहानी छपवाने का कारण बना, यह कहानी उपनाम से छपी—'मैक्सिम गोर्की' या 'कटु मैक्सिम'—जो कि बाद में विश्वविख्यात होनेवाला था।

जब गोर्की कोरोल्येन्को के सम्पर्क में फिर आया तो गोर्की की प्रतिभा के बारे में उसकी धारणा बदल गई थी। कोरोल्येन्को के जरिये उसकी कहानी 'च्येलकश' राजधानी की प्रमुख पत्रिका में स्वीकृत हुई। उसने उसे और बड़ी कृतियों के लिये उत्साहित किया। गोर्की साहित्य में जो नवीनता ला रहा था उसके मूल्य को कोरोल्येन्को पहचानता था। गोर्की के मनुष्य के सच्चे और कुशल चित्रण की प्रशंसा करते हुए उसने उसे यथार्थवादी कहा और यह भी कहा कि 'इसके साथ तुम स्वच्छंदतावादी भी हो,' १८९८ में दो भागों में उसकी कहानियों और स्केचों का संग्रह निकला और उसकी ख्याति बढ़ने लगी, इसी समय के करीब इसका ताल्स्ताय और च्येखव से परिचय हुआ। इन दोनों के विषय में उसने महत्वपूर्ण संस्मरण लिखे हैं। विदेशों में उसकी कृतियों का अनुवाद हुआ। १९०२ में वह 'अकेडेमी आफ सायंस' का आनरेरी मेम्बर चुना गया और जब जार ने गोर्की की क्रान्तिकारियों के साथ सहानुभूति के कारण सूची में उसका नाम हटाने का हुक्म दिया तो च्येखव और कोरोल्येन्को दोनों ने विरोध में अकेडेमी से इस्तीफा दे दिया।

गोर्की कज़ान के क्रांतिकारियों के सम्पर्क में १८८४ में था, १८८८ में

इसने स्वयं गाँवों में प्रचार-कार्य किया था, थोड़े समय के लिये वही १८८९ में गिरफ़ार हुआ और यद्यपि वह छोड़ दिया गया फिर भी पुलिस की नज़र उस पर बनी रही, १९०५ में ('खूनी रविवार' की घटनाओं के बाद) जारशाही को उलटने के लिये उसने एक 'मैनिफ़ेस्टो' निकाला। वह गिरफ़ार हुआ और पेत्रो-पावलोस्क के मशहूर किले में रखा गया। रूस में और विदेश में विरोध-प्रदर्शन के बाद वह छोड़ा गया और उसने १९०५ के मास्को विद्रोह में भाग लिया। इसी समय के लगभग लेनिन से उसकी पहली भेंट हुई। १९०७ में 'सोशल डिमोक्रेटिक पार्टी' के कांग्रेस के अवसर पर लन्दन में फिर उन दोनों की मुलाकात हुई। इसके बाद से उन दोनों की घनिष्ठता और प्रेम बढ़ता ही गया।

१९०८–१९१३ तक गोर्की विदेश में रहा क्योंकि रूस में उसका लौटना सुरक्षित न था। उसने एक राजनीतिक पर्चा प्रकाशित किया जिसमें विदेशी बैंक-वालों की अत्याचारी ज़ार सर्कार को कर्जा देने की कड़ी आलोचना की गई थी। इसमें से अधिक समय वह 'कैप्री' के टापू पर रहा, यहाँ पर उसकी प्रमुख रचनाएँ लिखी गईं और उसने रूसी क्रान्तिकारी कार्यकर्त्ताओं के लिये स्कूल का आयोजन किया। इस समय वह क्रान्तिकारी आन्दोलन से सम्बद्ध कतिपय आदर्शवादी दर्शन के प्रतिपादकों के अस्थायी प्रभाव में आया।

यद्यपि वह क्रान्तिकारी आन्दोलन की बराबर सहायता करता रहा, और लेनिन से अपने विचारों और समस्याओं के विषय में पत्रव्यवहार करता रहा फिर भी विदेश में अधिक समय तक रहने के कारण और आन्दोलन की प्रधान धारा से दूर होने के कारण वह १९०७ की घटनाओं के महत्त्व को पूरा पूरा न समझ सका। फिर भी क्रान्ति के आरम्भिक दिनों से ही उसने बड़े उत्साह से नये सांस्कृतिक जीवन की नींव डालने में अपने को तन्मय कर दिया। उसके इस पक्ष के अपने विकास को समझने में और क्रांति की सामाजिक, ऐतिहासिक तथा कर्त्तव्याकर्त्तव्य (Ethical) की समस्याओं के उसके सुलझाने के ढङ्ग को जानने में उसकी अपनी रचनाएँ सबसे बड़ी सहायक हैं।

विदेश में रहते हुए भी वह नवयुवकों और श्रमिकवर्ग के लेखकों को बराबर उत्साहित करता रहा और बहुतों के साथ पत्रव्यवहार करता रहा और नवीन होनहार कृतियों के उन पत्र-पत्रिकाओं में छपवाने में सदा सहायता करता रहा जिनसे कि उसका सम्बन्ध था, उसके चरित्र के इस अंग के विकास को क्रान्ति के बाद और भी व्यापक क्षेत्र मिला और वह मृत्युपर्यन्त छपवाने की योजना, लेखकों की गोष्ठी, फैक्टरी के साहित्यिक वर्ग तथा विविधात्मक सांस्कृतिक संगठनों में लगा रहा। उसके कार्यों का क्षेत्र रूस के बाहर भी था। उसका संसार के प्रगतिशील संघों से सम्बन्ध था और वह 'फासिज्म' के विरुद्ध तथा अन्तर्राष्ट्रीय

शान्ति-आन्दोलन में लगा रहा। वह सोवियत् संघ के रूसियों से इतर जातियों के साहित्यिक विकास में भी बहुत दिलचस्पी रखता था। रूसी तथा अरूसी जन-साहित्य के संरक्षण, उत्साहवर्धन तथा अध्ययन और साहित्य के संबंध में उसके महत्त्व की जो प्रेरणा गोर्की से मिली है उसके लिये ये सदा गोर्की के ऋणी रहेंगे। युवक लेखकों के प्रति वह सदा सहानुभूतिपूर्ण रहा केवल बहुत से प्रथम कोटि के लेखकों को ही आरम्भिक अवस्था में गोर्की से प्रेरणा नहीं मिली थी प्रत्युत बहुत से ऐसे लेखकों को भी उसने उत्साहित किया था जो प्रथम कोटि के तो न थे फिर भी उनकी कृतियों में कुछ न कुछ महत्त्वपूर्ण था। उसके साहित्यिक इतिहास के गम्भीर अध्ययन के मूल में यह उत्कट इच्छा सदा रही कि साहित्य सबको सुलभ हो जाय, सामाजिक दृष्टि से उपयोगी हो, और वह भविष्य के युवक लेखकों की सहायता कर सके।

कार्याधिक्य के कारण गोर्की में तपेदिक के लक्षण दिखने लगे और वह आराम और दवा के लिये इटली गया। इस बीच उसने 'मेरी यूनिवर्सिटियाँ', 'आरतामोव व्यापार' और 'क्लिम संगिन' का पहला भाग लिखा। १९२८ में वह फिर रूस में वापस आ गया, जीवन के अन्तिम वर्षों में उसने अत्यन्त महत्त्वपूर्ण साहित्यिक कृतियाँ लिखीं और दूसरों के रचे ग्रन्थों तथा अन्य लोगों के सहयोग में बने ग्रन्थों का सम्पादन किया जिनमें 'गृहयुद्ध का इतिहास' प्रमुख है। उसकी मृत्यु (१९३६) के कारण फासिस्टों के दलाल थे और उनमें वह डाक्टर भी था जो कि उसकी दवा करता था और जिसने जानबूझकर उसके रोग को बढ़ा दिया। इस दुष्कृत्य का पूरा पता बाद में देशद्रोहियों के एक वर्ग के विख्यात मुकदमे के सिलसिले में लगा जिसमें रूसी सरकार ने उन पर विरोधी विदेशी सरकारों की ओर से जासूसी करने और देश को हानि पहुँचाने का अपराध लगाया था। गोर्की ने मृत्यु में भी उन जनवादी लेखकों की परम्परा का अनुसरण किया जिन्होंने अपनी कला को जनहित के साथ घनिष्ठता से सम्बद्ध कर दिया था।

गोर्की के लेखन की पहली अवस्था (१८९२-१८९९)

इस बीच गोर्की ने बहुत से स्केच, छोटी कहानियाँ और गद्य कविताएँ (जैसे बाज़ का गीत) लिखीं। इन सभी रचनाओं में मनुष्यों में रुचि, उनके कष्टों के प्रति सहानुभूति, और मनुष्य की रचनात्मक शक्ति में विश्वास झलकता है। उनके बीच स्वच्छंदतावाद की धारा प्रवाहित हो रही है जो पुश्किन, लरमन्तोफ, और गोगल की याद दिलाती है। उसकी कहानियों के नायक शक्तिशाली, साहसी और स्वतंत्रता के उत्कट अभिलाषी हैं, और चित्रित वास्तविकता के विपरीत लेखक उन आदर्शात्मक मानवी गुणों का आभास देता है जिनको कि वह

आवश्यक समझता है। प्रायः उसकी कहानी के दो स्पष्ट पक्ष होते हैं, एक तो लेखक का अपने पात्रों के बारे में कथन होता है जो अत्यन्त भावात्मक तथा प्रगीतात्मक वर्णन से युक्त होता है और दूसरी ओर कहानी है जिसे कि मुख्य पात्र अपने ढंग से कहता है (जैसे कि 'मकारचूड़ा')। 'बाज़ का गीत', 'बुढ़िया इज़रगिल', 'खान और उसका लड़का', पद्यात्मक कहानी 'लड़की और मृत्यु' आदि में लोकगीत और लोककथाओं के रूप का प्रयोग हुआ है। 'बुढ़िया इज़रगिल' इस बात का अच्छा उदाहरण है कि स्वच्छंदवादी पुट के द्वारा किस प्रकार एक वीर मनुष्य का चित्र प्रस्तुत किया गया है। कहानी का मुख्य भाग बुढ़िया के इन शब्दों में सम्पुटित है—'यदि मैं अपनी चिन्ता न करूँ तो कौन करेगा, किन्तु यदि मैं केवल अपनी ही चिन्ता करूँ तो मेरा अस्तित्व ही किस लिये'। बुढ़िया की कथा के दो पात्र संकीर्ण व्यक्तिवादिता और उदात्तवृत्तिवाले मनुष्य की उच्च भावना के वैषम्य का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। बुढ़िया का परिणाम स्वयं यह बताता है कि वीर नायकों का जन्म नहीं होता प्रत्युत जीवन उनको बनाता है। चरित्र की उदात्तता और दृढ़ता के होने पर भी जीवन ने बुढ़िया को उपयुक्त अवसर से वंचित कर दिया और वह 'अपने ही लिए' रह गई।

'बाज़ का गीत' में गोर्की उन साहसी व्यक्तियों का चित्रण करता है जिनका 'पागलपन' ही उनके 'जीवन की सबसे बड़ी बुद्धिमानी' है और जिनका बलिदान दूसरों में स्वतन्त्रता की उन्मत्त इच्छा की आग लगा देता है। गोर्की के 'रोमाण्टिक' पात्र जन-भावना के नायकों के अनुरूप बनने की कोशिश कर रहे थे किंतु उनकी रूपरेखा अभी धूमिल थी और अभी तक वे वास्तविक यथार्थ जीवन में पूरे पूरे घुल-मिल नहीं सके थे। लेखन की इस अवस्था में यद्यपि उसके 'रोमाण्टिक' पात्र वास्तविक जीवन से बड़ी घनिष्ठता से संबंधित हैं फिर भी लेखक के मन में अभी यह स्पष्ट न था कि उनके संघर्ष की कैसी रूपरेखा हो।

इन 'रोमाण्टिक' रचनाओं के साथ गोर्की ने 'क्लासिकल' परम्परा की (आलोचनात्मक यथार्थवाद की) प्रणाली पर भी यथार्थवादी कहानियाँ लिखीं। इनमें गरीब और सताए हुए व्यक्तियों का जीवन चित्रित था। यद्यपि रूसी साहित्य में इस प्रकार का (गरीबों का चित्रण) वस्तु-विषय नया नहीं था, फिर भी गोर्की के चित्रण का ढंग भिन्न था। गोर्की के कटु अनुभवों ने उसे समाज के पीड़ित और तापित व्यक्तियों के कष्टों और दुखों से पूर्णतया अवगत करा दिया था। सताया हुआ व्यक्ति यथार्थवादी कहानियों का अत्यन्त परिचित पात्र है किंतु गोर्की ने यह प्रश्न उठाया कि इसकी जिम्मेदारी किसके ऊपर है और उसने नए पात्रों का भी समावेश किया जो इन सताए व्यक्तियों के जीवन

के साथ इनके मालिकों का भी चित्रण करते हैं। वह समाज की दो दुनिया दिखाता है—सताए हुए व्यक्ति और सतानेवाले लोग।

'पाठक' कहानी में वह साहित्य का उद्देश्य स्पष्ट करता है; (कि इसका उद्देश्य) "मनुष्य को अपने आपको समझने में सहायता देना, अपने में उसके विश्वास को बढ़ाना, उसमें सत्य की उपलब्धि, लोगों की नीचता से युद्ध करना, उनकी अच्छाइयों को ढूँढ़ना और उनके दिलों में शर्म, क्रोध और साहस को जगाना है और यह सब इसलिये करना है कि वे उदात्त और दृढ़ हों और अपने जीवन को सौंदर्य की पवित्र भावना से प्रेरणा दे सकें।"

गरीबी के बारे में बहुत लोगों ने लिखा किंतु गोर्की का दृष्टिकोण नया था। उसका मानवता में दृढ़ विश्वास था और यह निश्चय था कि समाज के निम्नतम वर्ग के लोगों में मनुष्य की आध्यात्मिक निधि अभी सुरक्षित है। इन 'निम्नतम प्राणियों' की ओर वह बराबर आकृष्ट हुआ क्योंकि ये अत्याचार के प्रति विरोध-प्रदर्शन करने का अवसर प्रदान करते थे। वह इन प्राणियों में दया और करुणा की सच्ची भावना, सामाजिक व्यवस्था का विरोध, रूढ़ि और परम्परा का साहस-पूर्ण उल्लंघन मन की स्वतंत्रता को दिखाता है।

उसने न तो गरीबी को गुण बताकर उस पर आदर्शात्मक रंग चढ़ाया और न कष्ट-सहन को मोक्ष का मार्ग कहा। उसने लोगों को शर्मनाक और ज़लील स्थिति में ढकेल देने के महान् अपराध की सदा भर्त्सना की और साथ ही उसने इसके विरुद्ध संघर्ष करनेवाले और इससे ऊपर उठने की चेष्टा करने वाले मानव-स्वभाव को भी स्पष्ट रूप से दिखाया। गोर्की अपने जीवन के इस समय को इन शब्दों में व्यक्त कर रहा है:

'जीवन मेरे लिये अत्यन्त गम्भीर कर्त्तव्य था, मैंने बहुत देखा था, बहुत सोचा था और मेरे अन्तर में बराबर एक हलचल थी। प्रश्न अस्पष्ट ध्वनि में मेरे दिल में ज़ोर ज़ोर से पूछ रहे थे।'

'एक बार एक पुलिस वाले ने बूढ़े यहूदी को पीटा क्योंकि उसने किसी दुकानदार के यहाँ से कुछ चुराया था। मैं उस धूल-भरे धीरे-धीरे चलते हुए बूढ़े से मिला। उसके चेहरे पर अजीब गम्भीरता थी, उसकी चुरीली आँख जलते हुए शून्य आकाश पर स्थिर थी, उसके फटे मुँह से खून की एक पतली धार बहकर उसकी सफेद चमकती दाढ़ी को गुलाबी बना रही थी।'

'[illegible] भुलाया नहीं जा सकता।'
'और [illegible]।'

[illegible] प्रतिवाद ने गोर्की के [illegible] (जनता के) [illegible] के साथ [illegible], और रूसी तथा विदेशी साहित्य पर उसके प्रभाव को [illegible] किया।

गोर्की के लेखन की दूसरी अवस्था (१८९९-१९०७)

[illegible] के साथ [illegible] उसने इस बीच कहानियाँ, उपन्यास और नाटक लिखे। उसका उपन्यास 'फोमा गार्डियेव' (१८९९) [illegible] वर्ग का चित्रण करता है जो कि 'ज़िन्दगी के मालिक' हैं और जिनके लिये धन, [illegible] और [illegible] ही सब कुछ है। उसके पात्र सभी सौदागर-वर्ग के हैं। मुख्य पात्र 'फोमा गार्डियेव' उसी वातावरण में पले व्यक्ति का प्रतिनिधित्व करता है किंतु उसका विरोध भी करता है। बेईमानी, न्याय और [illegible]-संबंधी उसके विचारों का उसके वर्ग-हित की नीति से विरोध है। उसका विरोध [illegible] व्यक्ति का प्रतिवाद है जिसे कि अन्य सामाजिक शक्तियों का पता नहीं। (फलतः) उसकी [illegible] टूट जाती है और उसके स्वप्न नष्ट हो जाते हैं, और जीवन पागलखाने में बीतता है। अभिजात-वर्ग के लिये तो उसका ऐसा आचरण पागलपन ही है। यह उपन्यास बहुत सी बातों में 'आलोचनात्मक यथार्थवाद' की परम्परा का अनुसरण करता है किंतु सामाजिक कुरीतियों के चित्रण में ही संतुष्ट न होकर उनकी आद्योपान्त भर्त्सना करता है और इस प्रकार आगे बढ़ जाता है, इसकी पृष्ठभूमि में गोर्की श्रमिक-वर्ग का समावेश करता है जिसके बारे में मुख्य पात्र का कहना है कि 'वे दूसरों से सर्वथा भिन्न हैं। वे नम्र हैं, शरीर से [illegible] हैं, बुद्धि भी ठीक है फिर भी वे सिर्फ मज़दूर ही हैं।'

नाटक

गोर्की का नाटक 'सौदागर' १९०० में लिखा गया। इसके बाद 'निचले तले पर' नाटक की रचना १९१२ में हुई। फिर 'सूर्य के लड़के', (१९०५) 'शत्रु' और 'वहशी' (१९०६) नाटक सामने आए। गोर्की ने कुल सोलह नाटक लिखे। इनमें 'निचले तले पर' नाटक का विदेशों में सबसे अधिक अभिनय हुआ। 'मास्को आर्ट थियेटर' में १९१७ से पहले इसका दो सौ बाईस बार अभिनय हो चुका था। गोर्की रंगमंच के सामाजिक महत्त्व को अच्छी तरह से जानता था। गोर्की का इससे सहयोग उसके अपने कलात्मक विकास तथा कंपनी की प्रगति दोनों के लिये लाभप्रद सिद्ध हुआ।

'निचले तले पर' और 'शत्रु' को छोड़कर उसके (बीसवीं शती के आरंभ के) नाटक पतनशील प्रवृत्तियों और शिक्षित वर्ग के एक विशेष भाग की संकीर्णता के विरुद्ध संघर्ष में संलग्न हैं, सामान्य जनता की स्वस्थ धारा से उनका अलगाव दिखाते हैं, और श्रमिक वर्ग की नई भावना से उनका वैपरीत्य प्रदर्शित करते हैं। क्रांतिकारी और श्रमिक वर्ग के लोग मुख्य पात्र के रूप में आते हैं।

'निचले तले पर' नाटक बड़ा ही लोकप्रिय हुआ। इसकी लोकप्रियता रोकने के लिए अधिकारियों ने बड़ी रुकावटें डालीं। थियेटरों के लिये, इसके अभिनय के पूर्व, प्रांतीय गवर्नरों की आज्ञा प्राप्त करना आवश्यक था। बहुत से व्यक्ति जिनका सामाजिक स्तर, चरित्र और जिनकी किस्मत एक दूसरे से भिन्न है एक मकान (सरांय) में साथ रहते हैं। पाठक या दर्शक को स्पष्ट रीति से विदित हो जाता है कि प्रत्येक पात्र किस प्रकार इस निम्न स्थिति या 'निचले तले' पर पहुंचा है और उसके कार्यों की मूल प्रेरणा या प्रवृत्ति क्या है। चित्रण बिल्कुल वास्तविकता से पूर्ण है। नए आगन्तुक के आने पर मकान में अच्छा खासा वाद-विवाद होता है। (इसके द्वारा) गोर्की का इरादा उस व्यक्ति का चित्रण था जिसका कि व्यापार ही सान्त्वना देना था, जो देश में इधर-उधर घूमा करता था और गरीबों को उनके इच्छानुकूल बिना सच-झूठ का विचार किए सान्त्वना के शब्द सुनाकर उनके दया-दान पर जीवन-निर्वाह करता था। भिखारी, चोर और वेश्याओं में से केवल एक नहीं झुकता। इस पात्र (सतीन) के माध्यम से गोर्की मनुष्य के प्रति अपने विश्वास को इन विख्यात शब्दों में प्रकट करता है: 'मनुष्य ! कितना भव्य ! इस शब्द की ध्वनि कितनी गर्वीली है। मनुष्य की इज्जत करना चाहिए। उस पर तरस न दिखाना चाहिए। दया दिखाकर उसका अपमान न करना चाहिए। उसकी इज्जत करना चाहिए।'

यह स्पष्ट है कि 'निचले तले' के लोग संघर्ष में अक्षम हैं फिर भी उनके करुण अन्त से जो निष्कर्ष निकले उन्होंने नए द्वार उन्मुक्त किए।

इस समय मनुष्य की (देवात्मक) प्रशंसा में गोर्की ने दो गद्य कविताएँ लिखीं—'मनुष्य' (१९०३) और 'तूफान (पर चलनेवाली) चिड़िया का गीत'। उत्साह-भरे शब्दोंवाली ('तूफान और तेज गरजे') नामक दूसरी रचना क्रांतिकारी आंदोलन का प्रतीक बन गई और १९०५-१९०७ के बीच बहुत गाई गई।

माँ

१९०६ में गोर्की ने अपना दूसरा उपन्यास 'माँ' लिखा जो विश्वसाहित्य की प्रमुख रचना है। इसमें श्रमिक-वर्ग के तत्कालीन क्रांतिकारियों का बड़ा ही यथार्थ चित्रण हुआ है। इसके पात्र और इसकी घटनाएं बहुत कुछ वास्त-

विक घटनाओं और मनुष्यों पर आधारित हैं। मुख्य पात्र (फैक्टरी के एक क्रांतिकारी की) विधवा माँ के चरित्र-चित्रण का विकास उन मंजिलों को स्पष्ट बताता है जिनसे कि श्रमिक-वर्ग क्रांतिकारी मार्ग की ओर मुड़ रहा था। चुप-चाप काम करनेवाली स्त्री, जिसका कि जीवन चिन्ता, समर्पण और अपने को मिटाने में ही बीता, और जिसकी आत्मा पर भय की सतत छाया व्याप्त थी, अधेड़ अवस्था में अपना 'सच्चा विकास' प्राप्त करती है और साहसी योद्धा और संचालक बन जाती है।

पुस्तक को तात्कालिक और व्यापक लोक-प्रियता प्राप्त हुई। यह केवल अच्छा उपन्यास ही नहीं है जिसमें कि जनता से सीधी अपील की गई है प्रत्युत यह प्रतिक्रियावादी युग के आरम्भ में आशा और साहस का स्पष्ट संदेश लेकर आया। वस्तुविषय और चित्रण दोनों की दृष्टि से इसे 'समाजवादी यथार्थवाद' का पहला उपन्यास कहा जा सकता है। गोर्की की प्रतिभा और कलात्मकता की प्रौढ़ता का यह उपन्यास स्पष्ट संकेत दे रहा है।

१९०५ के बाद के प्रतिक्रियावादी युग में गोर्की ने बोल्शेविक प्रेस का पूरा साथ दिया, उसकी कुछ अत्यन्त विख्यात कहानियाँ इसके पत्रों में प्रकाशित हुई। इस समय के तीव्र राजनीतिक वाद-विवाद ने बोल्शेविकों को उन लोगों से अलग कर दिया जो कि मार्क्सवाद में संशोधन उपस्थित करना चाहते थे। साहित्य के क्षेत्र में गोर्की ने प्रतिक्रियावाद के विरुद्ध संघर्ष में प्रमुख भाग लिया। 'व्यक्तित्व का नाश' (१९०८) लेख में गोर्की ने प्रतिक्रियावादी प्रवृत्तियों की कड़ी आलोचना की और उन लेखकों की अहंमन्यता पर व्यंग किया जो अपने व्यक्तित्व के महत्त्व को जनहित से ऊपर और अलग रखते थे। अतीत के महान् लेखकों से उनकी प्रतिकूलता दिखाकर उनकी विषमता स्पष्ट की।

इसी समय की उसकी दो विख्यात कहानियाँ हैं जिनमें मुफस्सिल शहरों और उनमें रहनेवाले आत्मतुष्ट मध्यम वर्ग के जीवन का चित्रण है—'मतव्ये कज्येम्याकिन का जीवन' और 'अकुजोव का छोटा शहर' (१९०९-१९१०)। इसी समय उसने अपने समकालीनों का शब्द-चित्र लिखना शुरू किया जिनमें कोरोल्येन्को, यसेनिन, च्येखव, ताल्स्ताय और ब्लाक मुख्य हैं।

रूस लौटने पर गोर्की ने नया पत्र 'ल्येतोपिस' निकाला और प्रथम महायुद्ध के पहले और बीच अपनी आत्मकथा की 'त्रयी' लिखने में संलग्न रहा। इस 'त्रयी' का अन्तिम भाग क्रांति के बाद पूरा हुआ।

बीसवीं शती के आरम्भ का साहित्यिक द्वन्द्व

साहित्यिक प्रभाव—जब वह सचमुच कोरा फैशन या अनुकरण न होकर

अधिक गंभीर हुआ तो सदा समय की वास्तविकताओं की माँग पर आधृत होता है जो (पूर्ववर्त्ती या समकालीनों द्वारा आकलित) समस्या बनकर लेखक का ध्यान उन रूपों की ओर आकृष्ट करता है जिनके माध्यम से वे प्रकट हुई हैं। इस दृष्टि से गोर्की—जिसका सारा जीवन परिवर्त्तनों, राजनीतिक वाद-विवाद तथा घटनाओं की ओर सदा संवेदनशील रहा—साहित्य के बीच अत्यन्त प्रभावशाली व्यक्ति बन गया और उसने विविध प्रकार के लेखकों के विकास को प्रभावित किया। इस प्रभाव की ओर वे लेखक सबसे अधिक उन्मुख हुए जो कि उसी मार्ग की ओर पहले से झुके थे, विशेषतया श्रमिक-वर्ग के लेखक—जैसे व्येदनू, किसान लेखक पदाच्येव वल्नोव, नेवरोव आदि—जिनकी कृतियाँ 'प्रावदा', 'तारा' ('त्स्वेत्स्दा') तथा ट्रेड यूनियन के पत्रों में छपती थीं, वे लेखक—वेरेसायेव, मायाकोव्स्की—जिनकी क्रान्तिकारियों से सहानुभूति थी, और वे लेखक जो सचाई और ईमानदारी के साथ जीवन की गम्भीर विषमताओं को समझने की चेष्टा करते थे—जैसे अलेक्जेण्डर ब्लाक, ब्रुलिसोव।

जन-प्रिय श्रमिक-वर्ग के लेखकों और कवियों का बड़ी संख्या में अविर्भाव हो चुका था। जब गोर्की ने 'प्रोलितेरियत् लेखकों का संग्रह' तैयार किया तो उसने विविध पेशे के तीन सौ से अधिक लेखकों की रचनाओं से चुनाव किया। गोर्की की भावना से सबसे अधिक साम्य रखनेवाले लेखकों में सिराफिमोविच (पपोव) और वेरेसायेव मुख्य हैं। सिराफिमोविच की कृतियाँ १८८८ में छपने लगीं। १९२४ में उसने 'लोहे की धारा' लिखी जो कि सोवियत् साहित्य की अन्यतम रचना मानी जाती है। वेरेसायेव (१८६७–१९४५) ने इस समय के विचारशीलों के मानसिक अनिश्चय का बड़ा यथार्थ चित्रण किया है।

गोर्की के बहुत से समकालीन—बूनिन, अन्द्रेयेव, कूप्रिन—आलोचनात्मक यथार्थवाद की परम्परा का पालन करते रहे। उनकी कृतियाँ यद्यपि रोचक हैं किन्तु उनमें नवीनता नहीं है और वे समय की अत्यावश्यक समस्याओं का चित्रण न कर गौण तथा हल्के विषयों पर लिखते रहे।

पाश्चात्य योरोप में प्रचलित 'डिकेडेण्ट' या प्रतीकवादी 'स्कूल' रूसी काव्य-क्षेत्र में अत्यन्त व्यापक था। धार्मिक या रहस्यवादी वस्तुविषय, अन्तर्मुखी व्यक्तित्व, वास्तविकताओं से विमुखता, 'कला कला के लिये' सिद्धांत, वास्तविक समस्याओं की अवहेलना, और कल्पना में रमण करना इस 'स्कूल' या वर्ग की मुख्य विशेषताएँ हैं। निराशावादी स्वर अत्यन्त व्यापक था। यह कविता सामान्यतया मुमूर्षु सामाजिक व्यवस्था के (राजनीतिक) भय, आशंका तथा सांस्कृतिक पतन का यथार्थ प्रतिबिम्ब है। मुख्य प्रतीकवादी यथार्थवाद के विरुद्ध युद्ध करते रहे और गोर्की उसके लक्ष्य थे। इधर गोर्की उनकी कड़ी आलोचना करता रहा

और वास्तविकता से उनकी विमुखता को (प्रतिक्रिया द्वारा) जनता को ठगना तथा आत्म-प्रवंचना बताता रहा। दो कवि प्रतीकवादी सीमा से ऊपर उठे—ब्रसोव तथा ब्लॉक। इनमें से ब्लॉक गोर्की के दृष्टिकोण के अधिक निकट आया, व्यक्तिगत रूप में उससे प्रभावित हुआ और बड़ी सुन्दर रचनाएँ प्रस्तुत कीं जिनमें जीवन का यथार्थवादी विश्लेषण हुआ है। १९१७ की क्रान्ति से प्रेरित अपनी भव्य कविता 'बारह' के लिये वह स्मरणीय है, मायाकोव्स्की (१८९३-१९३०) (जो कि सोशल डिमोक्रेटिक पार्टी का सदस्य था और राजनीति में सक्रिय भाग लेता था) कवि-रूप में १९१३ में सामने आया, गोर्की ने उसका पक्ष लिया और उसके कारण ही उसकी कृतियाँ जल्दी सम्मानित हुईं। ग्राम्य जीवन के प्रगीतकार कवि येसेनिन में गोर्की ने संगीत की अद्भुत प्रतिभा ऐसे समय में पहचानी जब कि बहुत से लोग उसे रंगरलियां मनानेवाला साधारण व्यक्ति कहकर उसका तिरस्कार कर रहे थे।

समकालीन कलाकार और कला के सम्बन्ध में उसके 'नोट', समीक्षात्मक लेख, तथा भाषण साहित्यिक इतिहास की महत्त्वपूर्ण सामग्री हैं।

क्रांति के बाद

क्रांति के द्वारा जो अत्यन्त व्यापक और गंभीर परिवर्त्तन हुए उनका थोड़े शब्दों में उल्लेख करना बड़ा कठिन है। समाज के नए आधार और उसके अनुरूप नवीन संस्कृति की कल्पना हुई और आरम्भ से ही इस बात का ध्यान रखा गया कि बौद्धिक तथा कलात्मक विकास का (पूँजीवादी समाज के समाजवादी) समाज की संक्रांति की प्रगति को ठीक ठीक समझने के लिये यह जानना आवश्यक है कि 'समाजवादी समाज' से क्या तात्पर्य है और साथ ही उन आर्थिक और मनोवैज्ञानिक परिवर्त्तनों का अध्ययन आवश्यक है जो कि इसके साथ जुड़े हैं। इन परिवर्त्तनों में लेखक के जीवन की भिन्न और परिवर्त्तित परिस्थिति तथा जनता से उसका (नया) सम्बन्ध भी सम्मिलित है। साहित्य में जीवन की अभिव्यक्ति के सम्बन्ध में यह कहना है कि समाज की पुरानी समस्याओं के साथ ऐसी समस्याएं भी सामने आईं जो पहले नहीं थीं किन्तु उनके सुलझाने के साधन अब दूसरे थे। सबसे बड़ी बात यह थी कि यदि कोई लेखक ईमानदारी के साथ उनको सुलझाना चाहता था तो उसे पूरी आशा थी कि उसके विचारों का सम्मान होगा और वे व्यवहार में लाये जा सकेंगे। मैक्सिम गोर्की जैसा लेखक—जो जीवन भर मानवतावाद के नाम पर लिखता रहा और जो त्रस्त और सताए हुए लोगों के लिए बराबर लड़ता रहा—अब अपने विचारों की अभिव्यक्ति के लिये जेल या निर्वासन के संकट से मुक्त था। इस (परिवर्त्तित परिस्थिति) से गोर्की के अनेकरूपात्मक—लेखक, प्रकाशक, संयोजक, शिक्षक,

कलाकार—कार्यों को बड़ी प्रेरणा मिली। उसके बृहत् ग्रन्थ और साहित्य का विस्तृत अध्ययन क्रांति के बाद के युग में सामने आए। यह समय तीव्र वाद-विवाद का भी था। नई उद्भूत संस्कृति की रूप योजना और साहित्य की नव-दिशा के नियोजन में गोर्की का अपार प्रभाव था। कला में 'समाजवादी यथार्थ-वाद' के लिए गोर्की क्रांति के पहले से संघर्ष कर रहा था। अब उसके सिद्धांत और भी परिपक्व हुए और यह संघर्ष और भी तीक्ष्ण हुआ। आधुनिक रूसी तथा सोवियत् साहित्य के समझने में और इस महान् सामाजिक परिवर्त्तन के स्वरूप को हृदयंगम करने में गोर्की का 'समाजवादी यथार्थवाद' बड़ी सहायता देता है।

समाजवादी यथार्थवादी

जीवन के क्रांतिकारी विकास के बीच जीवन का सच्चा प्रतिबिम्ब इसका उद्देश्य है। लेखक समाजवादी आदर्शों पर चलता है और उनकी प्राप्ति की चेष्टा करता है। मानवस्वभाव के विकास (के इतिहास) के वैज्ञानिक विश्लेषण को आधार बनाकर वह अतीत के चित्रण में भी इन्हीं सिद्धांतों की व्यंजना करता है। 'समाजवादी यथार्थवाद' साहित्य और जनता की एकता के मूलभाव पर टिका है और जनता के हितों की रक्षा, और सामाजिक समस्याओं के सुलझाने में कला-कारों के प्रत्यक्ष और सीधे सहयोग की मांग करता है। यह मानवतावाद की परम्परा को अपनाता है और उसे आगे बढ़ाता है और इसके साथ वह भविष्य के समाज और भविष्य के मनुष्य के उच्च आदर्श को भी सामने रखता है। लेखक 'शुद्ध वाह्यार्थता' और 'जीवन से तटस्थता' को नहीं स्वीकार करता, 'समाज-वादी यथार्थवाद' को समझने का सबसे अच्छा उपाय यह है कि उन पुस्तकों के वस्तुभाव और शैली का अध्ययन किया जाय जो 'समाजवादी यथार्थवाद' की अन्यतम उदाहरण मानी जाती हैं—इनमें यथार्थवाद का प्रगतिशील स्वच्छंद-तावाद से संयोग हुआ है—जैसे गोर्की का 'माँ', 'आरतामानोव व्यापार' 'शलो-खोव का 'अनजोती भूमि' और 'शांत डान' फदेयेव का 'युवक प्रहरी' अस्त्रोव्स्की का 'लोहा कैसे तय्यार किया गया' आदि।

सोवियत् सरकार के एक कानून से (१६१८) सरकारी प्रकाशन विभाग स्थापित हुआ। प्रख्यात साहित्यिक कृतियों के सस्ते संस्करण निकाल कर उन्हें जनता के लिये सुलभ बनाना और उनका अधिकाधिक प्रचार (आवश्यकता पड़ने पर मुक्त वितरण) करना इसका उद्देश्य बताया गया। अतीत की सामाजिक विरासत को नष्ट करना उनका उद्देश्य नहीं था। लेनिन ने १६२० में कहा था, 'यह तुम्हारी बहुत बड़ी गलती होगी यदि तुम यह समझे कि उस ज्ञान को अप-नाए बिना जिसे कि मनुष्य ने संचित किया है कोई कम्यूनिस्ट हो सकता है।

उस ज्ञान को अपनाए बिना, जिसका कि कम्यूनिज्म स्वतः परिणाम है, केवल कम्यूनिस्ट नारों को काफ़ी समझना भ्रमपूर्ण होगा। मार्क्सवाद को क्रांतिकारी प्रोलितेरियत् के सिद्धांत रूप में संसारव्यापी महत्त्व इसलिए मिला कि उसने बुर्जुआ युग की महत्त्वपूर्ण देन को फेंक देने के बजाय उस पर आधिपत्य जमाया और दो हजार वर्ष के मानव-विचार और संस्कृति के विकास के बीच जो कुछ महत्त्वपूर्ण था उसको नए रूप में सामने रखा। शोषण के विरुद्ध अंतिम युद्ध करनेवाले 'प्रोलितेरियत् डिक्टेटरशिप' के व्यावहारिक अनुभव से प्रेरणा प्राप्त कर जब इसी आधार पर और इसी दिशा में आगे काम किया जायगा तभी उसे *सच्ची प्रोलितेरियत् संस्कृति का विकास माना जायगा।*'

इन सिद्धांतों से गोर्की के उद्देश्य और साहित्य में उसके स्थान का कुछ आभास मिल सकता है।

उपन्यास-रूप में दूकानदार परिवार का इतिहास प्रस्तुत करने का विचार गोर्की के मन में (ताल्स्ताय और लेनिन द्वारा उत्साहित किए जाने से बहुत पहले से) था। 'आरतामानोव व्यापार' १९२५ में निकला। यह एक सौदागर परिवार का—एक उत्साही परिश्रमी किसान द्वारा उसकी स्थापना से लेकर उसकी अभिवृद्धि, बाद के नैतिक पतन और क्रांति में उसके नाश तक का—सौ वर्ष का इतिहास है।

गोर्की की बहुत सी कृतियों का वस्तुविषय सर्जनात्मक परिश्रम है—कठिन शारीरिक परिश्रम में प्रफुल्लता, ऐसा परिश्रम जो कि मनुष्य और उसके वातावरण को बदल देता है। गोर्की परिश्रम को संस्कृति का जनक, और विवेक के उत्सव और मानवता के सौन्दर्य 'की ओर ले जानेवाला मार्ग मानता है। उसने कठोर परिश्रम करनेवालों का बड़ा सजीव वर्णन किया है।' 'आरता मानोव व्यापार' का वस्तु-विषय इसी से शुरू होता है। कठोर परिश्रम और परिस्थिति ने चौड़े कन्धेवाले इल्या आरतामानोव को सहनशील और दृढ़ बना दिया है। उसमें हृदय की उदारता भी है। उसमें शक्ति, धैर्य और बुद्धि है। किसानों के अच्छे गुण उसमें हैं, अपने परिश्रम से धीरे धीरे इल्या सम्पन्न व्यक्ति बन जाता है। उसका रंग-ढंग अमीरों का सा हो जाता है। यद्यपि वह अभी परिश्रमी है फिर भी उसका व्यापार उसकी मानवता को धीरे धीरे खा लेता है। गोर्की उन मुक्त हुए किसानों का बड़ा सजीव चित्र प्रस्तुत करता है जो कि १८६० और १८७० में अपनी प्रतिभा और परिश्रम से गरीबी से छुटकारा पाकर सौदागरों और उद्योगपतियों की श्रेणी में पहुँच गए।

इस पद-प्राप्ति के लिये मनुष्य को केवल दृढ़ ही नहीं निष्करुण भी होना पड़ता है। आरतामानोव अपनी आकांक्षा की बलिवेदी पर दूसरों को चढ़ा देता

है और वह स्वयं अत्यधिक परिश्रम करने से मर जाता है। उसके लड़कों में अभी किसानों की दृढ़ता और शक्ति थी लेकिन ज्यों ज्यों 'व्यापार' बढ़ता गया ये गुण लुप्त होते गए। उसका एक लड़का व्यापार के शोरगुल से अलग हटकर किसानों का सादा जीवन व्यतीत करना चाहता है किन्तु वह इससे बच नहीं पाता और शराब तथा नैतिक पतन में डूब जाता है। उसकी पत्नी भी अब केवल पैसे और अच्छे भोजन से मतलब रखती है। अधेड़ अवस्था में वह मोटी और सुस्त है और बुढ़ापे में उसे कोई नहीं पूछता। तीसरी पीढ़ी तो बिल्कुल ही निसत्व, रुचिहीन और शक्तिहीन है। जो सामाजिक व्यवस्था मनुष्य को मनुष्य नहीं रहने देती और किसान को परोपजीवी, धोखेबाज़ और क्रूर स्वामी बना देती है उसका नाश अवश्यंभावी है। गोर्की का उपन्यास बड़ी सजीवता के साथ इस कथन की सत्यता प्रमाणित कर रहा है कि 'पूँजीवाद के प्रतिनिधि स्वयं अपनी कब्र खोद रहे हैं।'

गोर्की का विश्वास था कि व्यक्ति का ऐसा अधःपतन न तो अपने आप होता है और न अनिवार्य है। 'व्यापार' की शक्ति पर मनुष्य विजयी हो सकता है यदि उसमें विवेक है और यदि वह अपने को दृढ़ता के साथ इससे अलग कर सके। ईल्या आरतामानोव के पौत्र के साथ यही होता है। वह अपने को अलग कर जनता में अपनी शक्ति का स्रोत और जीवन का ध्येय पाता है।

इस परिवार के इतिहास के साथ गोर्की एक ऐसे पात्र का भी समावेश करता है जो आरतामानोव के साथ समान तल पर जीवन शुरू करता है किन्तु उसका नौकर हो जाता है। उसमें किसानों के गुण बने रहते हैं और वह शहर की संस्कृति से बचा रहता है। कहानी शुरू होने पर ईल्या आरतामानोव ज़मीन पर कब्जा करने के लिये उसके विरुद्ध लड़ता है और उसे (शक्ति से नहीं प्रत्युत) चालबाजी से हरा देता है और उसके भाई को मार डालता है। इस पात्र के मुख से गोर्की परिस्थिति को संक्षेप में इन शब्दों में कहलाता है :

'प्योत्र इलिच ! यह तुम्हारे विरुद्ध युद्ध है। मैंने कहा था कि तुम सबके लिये कालापानी है और वही हुआ।...उन लोगों ने चोरे की धूल की तरह तुम लोगों को झाड़ कर अलग कर दिया...शैतान आरा चला रहा था और तुमने उसकी सहायता की। तुमने बुरा किया, इस बुराई की कोई सीमा नहीं, मैंने सब देख लिया है, क्या खूब ! अन्त कब आएगा ? अब तुम्हारा अंत आ गया है.....गाड़ी का पहिया टूट गया है।'

यह उपन्यास पूँजीवाद की मानवतापूर्ण आलोचना है। यही विचार गोर्की के दो नाटकों में—'येगर ब्रलिच्योव' और 'दस्ति गायेव'—पल्लवित हुए।

१९२७ में गोर्की ने अपना अन्तिम बड़ा उपन्यास 'क्लिम संगिन क जीवन' शुरू किया। यद्यपि यह उसकी अन्य कृतियों से बड़ा है फिर भी गोर्की

ने इसे उपन्यास न कहकर कथा ('पव्येस्त') कहा। यह शब्द उपन्यास और छोटी कहानी के बीच की चीज़ के लिये व्यवहृत हुआ है। गोर्की ने इसका आख्यान के लिये प्रयोग किया है। इतिहास के युग और देश के समग्र जीवन का समावेश होने के कारण बाद के आलोचकों ने इसे महाकाव्य की श्रेणी में रक्खा।

गोर्की का उद्देश्य १६१७ तक के चालीस वर्ष के रूसी सामाजिक जीवन के विकास की मंजिलों का चित्रण था। गोर्की ने इसमें बहुत से पात्रों (प्रायः पांच सौ) का प्रयोग किया और इस अवधि की सभी प्रमुख घटनाओं का चित्र उपस्थित किया। इन घटनाओं की पृष्ठभूमि में समाज का सैद्धांतिक संघर्ष प्रस्तुत किया गया है। इसकी रचना में न नपातुला वस्तुविन्यास है और न प्रभाव की दृष्टि से विषयों का नियोजन हुआ है। अधिकांश में घटनाओं का (वर्षानुक्रम से) कथन मात्र है।

क्लिम संगिन की कहानी और उसका चरित्र इन कथाओं को एक में जोड़े रहता है। क्लिम स्वार्थी मध्यम वर्ग का प्रतीक है। उसके चरित्र के द्वारा मध्यम वर्ग का पतन दिखाया गया है और मध्यमवर्गीय व्यक्तिवादिता का गंभीर विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। 'आरतामानोव व्यापार' का वस्तुविषय भी यही है किन्तु जहाँ आरतामानोव अधिपति और स्वामी है क्लिम वकील है—उस पेशे का प्रतिनिधि जो कि मध्यम वर्ग की सेवा करने के लिये पैसा पाता है। इसी से उसकी आत्मा शून्य निसत्व है। उसका जीवन में कोई सच्चा उद्देश्य नहीं है। वह चुप रहता है इसी से बुद्धिमान् समझा जाता है कि वह क्रांतिकारियों के साथ रहता है किन्तु भीतर ही भीतर उनसे घृणा करता है। उसकी घनिष्ठ मित्र केवल एक स्त्री है जो पहले खुफिया पुलिस की एजेंट थी—'उस संसार की जीव जहां कि प्रत्येक वस्तु जो नीच नहीं है संदेह की दृष्टि से देखी जाती है और नीचता ऐसी स्वाभाविक मान ली गई है कि केवल उसी के द्वारा किसी को समझा जा सकता है।'

यह उपन्यास पूरा न हो सका। गोर्की के 'नोट' से पता चलता है कि इसका चरम दृश्य १९१७ में लेनिन का पेट्रोग्राड में आगमन होता जब कि क्लिम भीड़ में मर जाता और अपने नीच संसार के प्रतीक रूप में रंगमंच से सदा के लिये चला जाता। पुस्तक अनेक प्रकार की घटनाओं और पात्रों से परिपूर्ण है। क्रांतिकारी कुतुसोव का चरित्र 'मां' के नायक पावेल व्लासोव से अधिक विकसित हुआ है।

जीवन के अंतिम वर्षों में गोर्की ने असंख्य लेख लिखे और 'केप्री' के स्कूल में रूसी साहित्य के इतिहास पर जो लेक्चर दिये थे उनपर फिर से काम शुरू किया। पत्रकार के रूप में वह 'फासिज्म' के विरुद्ध बराबर युद्ध करता रहा और

उन विदेशी लेखकों की रक्षा में लिखता रहा जो कि फासिज्म के शिकार हुए अन्तर्राष्ट्रीय प्रगतिशील शक्तियों के लिये वह बराबर प्रचार करता रहा।

अन्तर्राष्ट्रीय विचारशील लेखकों का वह सम्मानित नेता था और रोलां, टामस मैन जैसे विख्यात लेखक उसके मित्रों में थे। उसकी समस्त कृति बीच जनता प्रेम तथा देश के प्रेम की वेगवती धारा प्रवाहित होती दिखाई है और उनसे रूस की सामान्य जनता और उसके रहन-सहन से लेखक के सम्पर्क की व्यञ्जना हो रही है। अपने देश तथा दूसरों के प्रति गोर्की की बड़ी सेवा यह है कि वह बड़ी क्षमता के साथ अपने देशवासियों की कथा को सुना सका और उनका सम्यक् प्रतिपादन कर सका और साथ ही उन स संबंध सूत्रों को प्रस्तुत कर सका जो विश्वभावना की कड़ी बन सकते हैं।

———

शुद्धि-पत्र

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
	विषय-सूची	
-२४	गिवयेहोव	गिवयेदोव
-१६	साल्तिकोव	साल्तिकोफ
	रूसी साहित्य	
-३१	प्रस्तन	प्रस्तुत
-४	साल्तिकोव	साल्तिकोफ
-४	श्रोड्ना	श्रोड्न
-२४	पलोव्येन्स्की	पलोव्येन्स्की
-१०	गाड़ियों	गाड़ियों
-४	सरक्रिया	सरक्रिया
-१६	आधिकारिक	अधिकारिक
-२८	प्रगानोव	पुगानोव
-२७	द्रजीनिन	द्रूजीनिन
-४	चद्	चंद्
८	एगेल्स	एंगेल्स
-११	से	के
-१	मोमबत्तियों	मोमबत्तियाँ
-२	यात्रा	मात्रा
-१०	संसर	सेंसर
-२८	चाडन	चाडन
२१,२२	ग्रियेहोव	ग्रियेदोव
२७	,,	,,
२१	,,	,,
३०	,,	,,
१	,,	,,
६,७	,,	,,
६	मास्को को	मास्को के
२०	संसर	सेंसर
५	त्सारस्येसेलो	त्सारस्कोयेसेलो

पृष्ठ-पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६७–८	शास्त्रादी	शास्त्रवादी
६८–१७	का	को
७०–६	साम्राट	सम्राट्
७३–२१	नेक्रासव	नेक्रासोव
७३–३१	दस्तयेव्स्की	दोस्तोयेव्स्की
७६–३	उन्तीसवीं	उन्नीसवीं
७६–२४	जिनका	जिनको
८०–१८	जो	जो
८१–२६	तुर्येनेव	तुर्गेन्येव
८२–२०	विसारत	विरासत
८२–२६	महत्वणपू.	महत्त्वपूर्ण
८३–२६	चर्च को	चर्च की
८४–२३	दोस्तोल्स्की	दोस्तोयेव्स्की
८५–१	साल्तिकोव	साल्तिकोफ
	स्येद्रिन	चेद्रिन
८५–२२	भ	भी
८७–१२	बीच	बीच उसे
८७–१२	लिया	दिया
८७–३२	स्वीकृति	स्वीकृत
८८–१	चित्रकल	चित्रकला
८६–११	टारसवल्का	टारसवल्का
८६–१६	वर्तनाम	वर्तमान
६०–२४	चिदिकोव	चिचिकोव
६०–३१	,,	,,
६२–१८	सेवा	सेना
६४–११	व्यक्तिगती	व्यक्तिगत
६५–१७	पद्य	पत्र
६६–२१	इप्तकी	इसकी
६७–२७	थ	था
६६–१८	साल्तिकोफ	साल्तिकोफ